2023 | अंक 29

अशिमका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान

देहरादून-248001

2023 | अंक 29

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादकः
डॉ. गौतम रावत

सहायक संपादकः
डॉ. छवि पंत पांडेय

प्रकाशन प्रबंधनः
श्री ज्ञान प्रकाश

प्रकाशकः
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

आवरण चित्र :
हिमनद पटल

छायाकार :
डॉ. विनीत कुमार

पृष्ठ आवरण छायाकार :
श्री अमित भंडारी

मुद्रण स्थलः
एलाइड प्रिन्टर्स
84, नहर वाली गली, देहरादून
फोन : 0135–2654505

पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के स्वयं अपने हैं। संपादक मंडल/विभाग/प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नही है।

विषय सूची

निदेशक की लेखनी से		i
सम्पादकीय		ii
चूना पत्थर की गुफाओं का महत्व	सोम दत्त	1
एक लीगो भारतवर्ष में भी	रमेश चंद्र	4
लायनस पौलिंगः दो नोबेल से सम्मानित	सुभाष लखेडा	6
पुराजलवायु अध्ययन की खिड़की : लदाख की पंगोंग छो झील का बदलता मिज़ाज	रणधीर संजीवनी	10
अथः श्री यमुना उवाच	सुमन रैना	17
भारतीय क्षोभमंडल में बढ़ती नमीः जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में	अमरजीत विद्यार्थी	21
वायु प्रदूषण, एरोसोल और तापमान व्युत्क्रमण तथा इसके प्रभाव	अभिषेक ठाकुर	23
भारत में स्थलीय कार्बन सिंक का बिगड़ता संतुलनः मानवीय हस्तक्षेप और जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में	राहुल कश्यप और जय नारायणन कुट्टीपुरथ	27
मैं भी मूल्यवान हुँ	डॉ. बरुण मुखर्जी	29
पेट्रो–भू रसायनिकी का मुख्य उद्देश्य	संजय गोस्वामी	31
लोनार–महाराष्ट्र की प्राकृतिक अद्भुति	सुवर्णा कुलकर्णी	34
वायुमंडल : इसकी संरचना और बलों का अनावरण	वैभव काण्डवाल	36
स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस : भारत की प्रगति का आधार	सौरभ सैनी	41
भारत में ऊर्जा भंडारण के रूप में लिथियम–आयन बैटरी	प्रवीण कुमार	44
मेट्रोलॉजी : यंत्रों की माप का गुणवत्ता नियंत्रण	संजय गोस्वामी	46
जयशंकर प्रसाद जी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के दर्शन	श्रीमती स्वाति चढ्ढा	52
हिन्दी– संक्षिप्त परिचय	शुभ्रा बैनर्जी	55
छोटे पैमाने की खेती में सतत खरपतवार प्रबंधन के लिए एलेलोपैथी का उपयोग	दीप्ति सिंह वशिष्ठ, अर्चना बछेती और राकेश कुमार बछेती	57
भारतीय जैविक विविधता : एक परिचय	आशीष कुमार आर्य और अर्चना बछेती	59
नई शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाएं	रेखा सिंह	61
पुराः ग्रामीण भारत के सतत्विकास के लिए एक अनूठी योजना	विनीत शर्मा	63
विश्व पर्यावरण व भारतीय प्रयास	डॉ. पी.एस. नेगी	65
वनों की सुस्वरता	वैभव काण्डवाल	67
फूलों से बात	अरिन गौर	67
हिमालय और हिमालय–पार की प्रकृति का चितेरा सुकुमार भूविज्ञानी : प्रो. अंशु कुमार सिन्हा	रणधीर संजीवनी	68
संसार : स्वपनतुल्यो हि	छवि पंत	72
पर्यावरण संरक्षण पर भारतीय चिंतन	सत्य प्रकाश शर्मा 'सत्य'	75
संस्थान समाचार		77

निदेशक की लेखनी से

इस वर्ष हम राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वाधान में संस्थान की गृह पत्रिका "अश्मिका" का उन्नतीसवाँ अंक प्रकाशित करने जा रहे हैं। राजभाषा न केवल राष्ट्र की एकता का प्रतीक है बल्कि हमारे राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, साहित्यिक व एतिहासिक गौरव की भी प्रतीक है। हमारी विविधता को सम्मानित करते हुये हमें एक सूत्र में बांधने का कार्य भी हमारी राजभाषा हिन्दी ने किया है। भाषायी विकास क्रम में जहाँ हिन्दी ने अन्य भाषाओं को बहुत कुछ दिया है वही अन्य सभी भाषाओं से भी अपने को समृद्ध किया है। राजभाषा की अवधारणा एकात्मकता को संवर्धित करने के प्रयास का ही परिणाम है।

हमारी न केवल संवैधानिक बल्कि नैतिक जिम्मेदारी भी है कि हमारे कामकाज की भाषा हिन्दी ही हो। हिन्दी में कार्य होने से हम अपनी उपलब्धियों को, ज्ञान को तथा अपने शोध को आम जनमानस से जोड़ पायेंगे। विज्ञान का उद्देश्य समाज के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति को लाभ पहुंचाना है, उसके जीवन की विकटताओं का समाधान करना है। सफल शोध वही है जो समाज के लिये रचनात्मक हो, समाज की समस्याओं का हल निकाले। अतः हम सभी का दायित्व है कि हम अपने अपने कार्यक्षेत्रों में, अपने दैनिक कार्यों में राजभाषा का अधिकाधिक प्रयोग करें संस्थान की गृह पत्रिका "अश्मिका" के द्वारा हमारा यही प्रयास है। पत्रिका के लिये लेख लिखने वाले सभी लेखकों का आभार।

अश्मिका अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये अग्रिम पथ पर सदैव अग्रसर रहे। "अश्मिका" के लिये मेरी अनेकों शुभकामनायें ।

डॉ. कालाचाँद साँई
निदेशक

सम्पादकीय....

अश्मिका की अनवरत यात्रा जारी है और इस यात्रा का यह उन्नतीसवाँ पड़ाव है। हर पड़ाव में उन सभी लेखकों का योगदान है जिन्होनें राजभाषा में अपनी बात कहने के लिये, अपना विषय समझाने के लिये अथवा अपना मंतव्य बताने के लिये राजभाषा को चुना तथा प्रासंगिक लेख लिख कर समय दिया। राजभाषा के प्रचार में यह योगदान सराहनीय व अविस्मरणीय है। सभी विचारशील, विज्ञ व्यक्तियों से इसी प्रकार के योगदान की अपेक्षा है ताकि आने वाली पीढ़ीयों को अपनी भाषा में विभिन्न विषयों पर अध्ययन सामग्री आसानी से उपलब्ध हो सके। अपनी भाषा में अभिव्यक्ति सरल, सुगम व सहज होती है चाहे विषय कितना ही गूढ़ क्यों न हो। अश्मिका के हर अंक से इसका आभास होता है। वर्तमान परिदृश्य देखें तो भाषा के प्रति संवेदनशीलता हर स्तर पर बढ़ी है। विभिन्न विषयों, क्षेत्रों में भाषा में अभिनव प्रयोगों ने हिन्दी भाषा को समृद्ध किया तथा वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिये संसाधन दिये। आज के समय में हिन्दी रोजगार का साधन भी है। उपभोक्तावाद संस्कृति के कारण बाजार में उतरने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों को अपने उत्पाद/सेवायें बेचने के लिये हिन्दी की शरण में जाने की विवशता भी है। परन्तु भाषायी विकास के लिये हमें भाषा की उत्कृष्टता पर ध्यान देना होगा, नवीन शब्दों का सृजन करना होगा जो आधुनिक होते विश्व में विज्ञान, तकनीक तथा विस्तृत होते मानवीय स्वभाव, विचारों को सरल सुगम रुप से प्रस्तुत कर सके। भाषा संस्कृति, स्वाभिमान और पहचान का विषय है और उन्नति का मूल है इसलिये इसके प्रति सजगता आवश्यक है ।

अश्मिका के इस अंक में लेखों के विषय भूमि से अंतरिक्ष तक स्पर्श करते हुये मिलेंगे वहीं काव्य में राष्ट्रीय चेतना के दर्शन होंगे। आशा है, यह अंक विगत अंको की भांति अपने उद्देश्यों में सफल होगा। अश्मिका के इस अंक पर आपके विचार, सुझाव, आलोचना, प्रशंसा ashmika@wihg.res.in पर ईमेल अवश्य करें। आपकी टिप्पणियां हमारा मार्गदर्शन करेंगी।

चूना पत्थर की गुफाओं का महत्व

सोम दत्त
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

प्राकृतिक प्रक्रियाएं निरंतर चलती रहती हैं और विभिन्न भू–आकृतियों का निर्माण करके पृथ्वी के धरातल को आकार देती हैं जो कि समय के साथ बदलता रहता है। चूना पत्थर की गुफाएं इसका एक अनुपम उदाहरण हैं। ये गुफाएं जल द्वारा चूना पत्थर के रासायनिक अपक्षय के कारण निर्मित होती हैं और इनमें भौतिक अपक्षय की भूमिका सामान्यतः कम ही होती है। पृथ्वी के जिन क्षेत्रों में वर्षा अधिक होती है और चूना पत्थर भी विद्यमान है, उन्हीं क्षेत्रों में सबसे लम्बे और सघन गुफा तंत्र का निर्माण हुआ है, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका की मैमथ, मेक्सिको की सिस्तेमा ओक्स बेल हा, युक्रेन की प्रीस्टस ग्रोटो, ऑस्ट्रेलिया की बुल्लिता और वियतनाम की सोन डूंग गुफाएं। भारत के उत्तरपूर्व राज्य मेघालय में चूना पत्थर की प्रचुरता और वहां की भौगोलिक स्थिति के कारण होती अत्यधिक वर्षा गुफा तंत्र के निर्माण के लिए उत्तम परिस्थितियाँ बनाती हैं। मेघालय का कीलिअट प्राह भारत का सबसे लम्बा गुफा तंत्र है जिसकी लम्बाई 31 किलोमीटर से अधिक है। इसी क्षेत्र में एक अन्य गुफा बहुत प्रसिद्ध है जिसका नाम है मामलुह। यह गुफा चेरापूंजी से लगभग 3 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इसकी प्रसिद्धि का कारण इसमें से लिया गया एक स्टेलेगमाईट का नमूना है जिसके परीक्षण में पाया गया कि आज से लगभग 4200 वर्ष पूर्व दक्षिण–पूर्व एशिया क्षेत्र में वर्षा की मात्रा में अचानक से कमी आ गयी थी। इस वर्षा में कमी का यहां के जन–जीवन पर भयानक प्रभाव पड़ा। इसी प्रभाव के कारण उत्तर पश्चिमी भारत में आबाद हड़प्पा की सभ्यता का ह्रास हो गया। पर्याप्त पानी की उपलब्धता की खोज में लोगों ने दक्षिणी और पूर्वी क्षेत्रों की तरफ पलायन किया और एक शहरी सभ्यता ग्रामीण सभ्यता में परिवर्तित हो गयी। इस बदलाव का विश्व इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसी समय पर तत्कालीन सभ्यताओं में से अधिकतर विलुप्त हो गयी थी। इसी कारण से इस घटना के बाद (4200 वर्ष पूर्व से अब तक) के काल को भूवैज्ञानिक समय पैमाने पर अलग से 'मेघलायन' नाम से अंकित किया गया है।

चूना पत्थर की गुफाओं में बनने वाली संरचनाएं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण हैं। इन संरचनाओं का बनना गुफा के अन्दर और बाहर कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस के आंशिक दबाव पर निर्भर करता है। वर्षा का जल जब मृदा के रोम छिद्रों से होकर अन्दर रिसता है तो वहां पर उपलब्ध कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस को अपने अन्दर घोल लेता है। इस क्षेत्र में पौधों की जड़ों के श्वसन के कारण कार्बन–डाई–ऑक्साइड उत्सर्जित होती रहती है और इसका आंशिक दबाव अधिक होता है। परिणामस्वरूप कार्बन–डाई–ऑक्साइड जल में घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है।

$$H_2O + CO_2 \rightarrow H_2CO_3 \qquad (1)$$

यह कार्बोनिक अम्ल वहां पर उपस्थित चूना पत्थर को अपने अन्दर घोलने लगता है और संतृप्त घोल बनाता है और विभिन्न रोम छिद्रों, दरारों, भ्रंशों आदि से होता हुआ गुफा के अन्दर पहुँचता है।

$$H_2CO_3 + CaCO_3 \rightarrow Ca(HCO_3)_2 \qquad (2)$$

गुफा के अन्दर कार्बन–डाई–ऑक्साइड का आंशिक दबाव अपेक्षाकृत कम होता है जिसके कारण से संतृप्त घोल में से कार्बन–डाई–ऑक्साइड मुक्त होने लगती है और इसकी चूना घोलने की क्षमता कम हो जाती है जिसके कारण से चूना पत्थर तलछट रूप में जमा होकर भिन्न–भिन्न संरचनाओं का निर्माण करता है।

$$Ca(HCO_3)_2 \rightarrow CaCO_3 + H_2O + CO_2 \qquad (3)$$

इन संरचनाओं को संयुक्त तौर पर स्पेलोथेम्स कहा जाता है। इनमें वृक्षों की भांति मौसमी या वार्षिक छल्ले होते हैं जो इनके क्रमिक विकास को दर्शाते हैं। इन संरचनाओं में विशेषकर सम्मिलित हैं।

स्टेलेकटाइटः ये गुफा की छत से नीचे की तरफ, धरती के गुरुत्वाकर्षण बल के अनुसार बनते और बढ़ते हैं।

स्टेलेगमाईट: ये गुफा की फर्श से ऊपर की ओर धरती के गुरुत्वाकर्षण बल के विपरीत बढ़ते हैं।

कॉलम: जब स्टेलेकटाइट और स्टेलेगमाईट बढ़ते–बढ़ते एक दूसरे के साथ जुड़ जाते हैं तो उसको कॉलम कहा जाता है।

फ्लोस्टोन: पानी के लगातार बहने से गुफा के फर्श और दीवारों पर बनने वाली संरचना को फ्लोस्टोन कहा जाता है। इनके अतिरिक्त स्ट्रॉ, हेलीकाइट्स, रिमस्टोन बांध, पर्दे, मूनमिल्क आदि अनेक संरचनाएं गुफाओं की शोभा बढ़ाती हैं।

गुफाओं में बनने वाली ये संरचनाएं अपने बनते समय उस काल की जलवायु (वर्षा, तापमान, आदि) संबंधित अति महत्वपूर्ण जानकारी समाहित कर लेती हैं। दीर्घकाल में वर्षा और जलवायु संबंधित बदलाव जानने के लिए वो नमूने अधिक उपयुक्त पाये गए हैं जो गुफा–द्वार से ज्यादा से ज्यादा दूरी पर हों तथा उसके आस पास लगभग 100% सापेक्ष आर्द्रता रहती हो और तापमान में न के बराबर बदलाव होता हो। यूरेनियम–थोरियम असमानता श्रृंखला और कार्बन–14 डेटिंग तकनीक के माध्यम से इनकी आयु का सही सही अनुमान लगाया जा सकता है तथा इसमें अंतर्निहित स्थायी समस्थानिक संकेतों (ऑक्सीजन और कार्बन के स्थायी समस्थानिक, $\delta^{18}O$, $\delta^{13}C$) में आने वाले परिवर्तनों के आधार पर तत्कालीन जलवायु संबंधित परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त की जाती है। सभी संरचनाओं में स्टेलेगमाईट को जलवायु सम्बन्धी अध्ययनों के लिए सर्वोत्तम समझा जाता है। भारत में इस प्रकार के शोधकार्य लगभग हर भाग में किये जा रहे हैं जो सामान्यतः भूतकाल में हुए भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून सम्बन्धी बदलावों से जुड़े हैं। संरचनाओं में अंतर्निहित $\delta^{18}O$ अनुपात का अधिक धनात्मक (ऋणात्मक) होना सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से उस क्षेत्र में कम (अधिक) वर्षा और कमजोर (मजबूत) ग्रीष्मकालीन मानसून की स्थिति को इंगित करता है। मेघालय की मामलुह, वाह शिकर और उम्स्प्रंग; उत्तराखंड की सहस्त्रधारा, साहिया, बिट्टू, भीर धार,

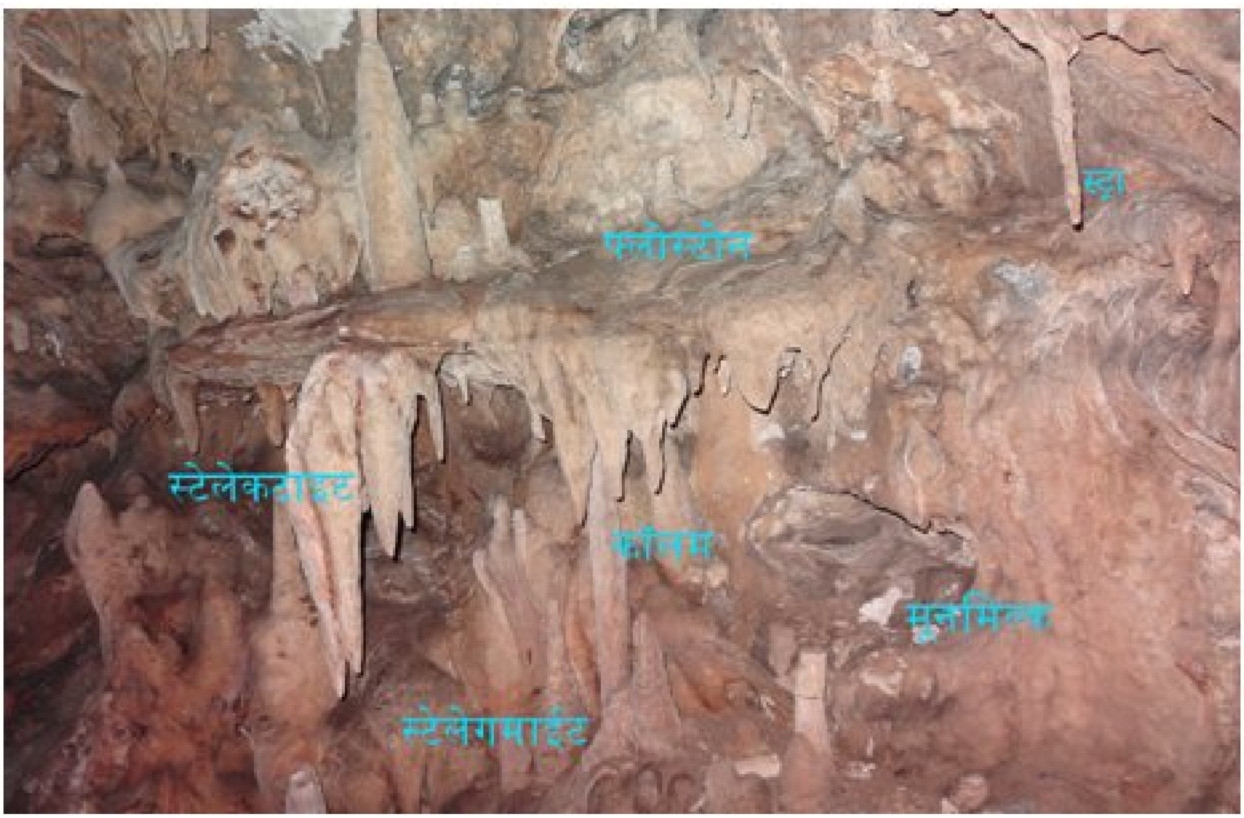

चित्र 1:विभिन्न संरचनाओं को दर्शाता मेघालय की मामलुह गुफा का चित्र
(**चित्र आभार** : डॉ. राज कुमार सिंह, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, भुवनेश्वर)

चुलेरसिम, धरमजाली गुफा, सैंजी, तिमता और पानीगढ़, उत्तर प्रदेश में सोता, छत्तीसगढ़ में दंडक, झूमर, कैलाश और कोतुम्सर और कर्नाटक में बेलम और अल्काघवी, तथा बाराटांग द्वीप में स्थित गुफाओं में किये गये शोध कार्य उल्लेखनीय हैं।

चूना पत्थर की गुफाएं जैव विविधता के लिहाज से भी बहुत ही महत्व रखती हैं। गुफाएं आम तौर पर संरक्षित स्थान हैं और मानव हस्तक्षेप से दूर हैं। गुफा के अंधेरे में रह सकने वाले जीवों को सामूहिक रूप से *ट्रोग्लोफौना* या *ट्रोग्लोमोर्फ्स* कहा जाता है। इसके आगे उनको अलग अलग श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, जैसे *ट्रोग्लोफिल्स* या *सबट्रोग्लोफाइल* (वे जीव जो गुफा के अंदरूनी हिस्सों में और कुछ विशेष जीवन प्रक्रियाओं के लिए गुफा के बाहर भी जीवित रह सकते हैं), *ट्रोग्लोबाइट्स* या *ट्रोग्लोबियोन्ट्स* (विशेष रूप से गुफा में रहने वाले जीव), *ट्रोग्लोक्सीन* (कभी–कभी गुफा में आने वाले जानवर) और *यूट्रोग्लोफाइल* (शुरुआत में गुफाओं के बाहर लेकिन गुफाओं के अंदर भी जिन्दा रह सकने वाले जीव)। जीवों के क्रमिक विकास को समझने के लिए *ट्रोग्लोमोर्फ्स* द्वारा विकसित अनुकूली विशेषताओं का अध्ययन आवश्यक है। कम लम्बी गुफाओं में उपलब्ध जैवविविधता उसी क्षेत्र में पाये जाने वाले जीवों से मेल खाती है। मकड़ियां, चमगादड़, झींगुर, सांप आदि के लिए जमीन के पास और गुफा का बाहरी इलाका सबसे अनुकूल होता है। अधिक लम्बी और गहरी गुफाओं में रहने वाले जीवों ने समय के साथ अपने को वातावरण में रहने के अनुकूल बना लिया है। अधिक गहरायी और अंधेरे में रहने वाले जंतुओं की त्वचा पारदर्शी होती है। इनमें केकड़ा, झींगा और अन्य अनेक प्रकार की मछलियाँ सम्मिलित हैं। हाल ही में मेघालय की उम लदव गुफा से दुनिया की सबसे लम्बी गुफा–मछली की निओलिसोचिलस पनार की खोज की गयी है जोकि हम भारतीयों के लिए हर्ष और गर्व का विषय है।

इसके अतिरिक्त चूना पत्थर की गुफाएं जल संसाधन की भी मुख्य स्रोत हैं। वर्षण के बाद धरातल पर बहुत मात्रा में जल बहाव के रूप में नदियों के द्वारा समुद्र में चला जाता है। लेकिन धरातल से नीचे होने के कारण गुफा तंत्रों में बहुत सारा जल रुका रहता है और बहुत ही धीरे–धीरे अपनी यात्रा करता है। इस जल को कुछ प्रक्रियाओं के उपरांत प्रयोग में लाया जा सकता है। इसका एक अनूठा उदाहरण मेघालय की वाह शिकर गुफा से मिलता है जिसमें स्थानीय लोगों ने जल संचयन और उसको ऊपर खींचने के लिए उपकरण लगाए हुए हैं और अवर्षण काल में वहां पर पीने और सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता को सुनिश्चित करते हैं। गुफाएं शैक्षिक और साहसिक पर्यटन के लिए भी बहुत ही महत्वपूर्ण हैं जो कि जानकारी के साथ–साथ स्थानीय लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान करती हैं। बाराटांग, पाताल भुवनेश्वर, बुधेर और बेलम गुफाएं इसी प्रकार से पर्यटन और रोजगार के लिए विकसित की गयी हैं।

इतने ज्यादा महत्त्व के बाद भी हमारे यहां जानकारी का अभाव और उदासीनता नजर आती है। बहुत ही कम लोग इसके बनने वाली प्रक्रियाओं, इसके अनूठे पर्यावरण और भूवैज्ञानिक–जैविक क्रमिक इतिहास के बारे में जानते या जानने की इच्छा रखते हैं। असंयोजित निर्माण, अनियंत्रित खनन, अनैतिक नमूना संग्रहण, अनियंत्रित पर्यटन और अन्य मानवीय कार्यकलापों के कारण इस नाजुक और संवेदनशील भूवैज्ञानिक और पर्यावरण तंत्र का निरंतर विघटन हो रहा है। अमेरिका, कनाडा, स्लोवेनिया और स्लोवाकिया जैसे देशों ने सक्रिय रूप से ऐसे क्षेत्रों की रक्षा के लिए इनमें से कुछ को राष्ट्रीय उद्यान या संरक्षित क्षेत्र घोषित कर दिया है। पर हमारे देश में ऐसे प्रयासों का अभाव देखने को मिलता है। यही उचित समय है की हम चूना पत्थर की गुफाओं वाले क्षेत्रों के महत्व को समझें और इनके संरक्षण के लिए प्रयास आरम्भ कर दें। सरकार द्वारा भी ऐसे नियमों को तुरंत प्रभाव से बनाये जाने की आवश्यकता है जिनसे इन क्षेत्रों में नमूना संग्रहण, पर्यटन और अन्य मानवीय क्रियाकलापों को नियंत्रित किया जा सके।

एक लीगो भारतवर्ष में भी

रमेश चंद्र
पंचकूला, चंडीगढ़

कुछ समय पूर्व दैनिक समाचार पत्र 'इंडियन एक्सप्रेस' में दो लेख प्रकाशित हुए थे, जिनके अनुसार आने वाले कुछ वर्षों में भारत में विश्व की पांचवी LIGO, अर्थात लेजर (L) इंटरफेरोमीटर (I) ग्रेविटेशनल वेव (G) ऑब्जर्वेटरी स्थापित हो जाएगी। भारत सरकार ने इस लीगो को महाराष्ट्र राज्य के हिंगोली जनपद में स्थापित करने के आदेश दे दिए हैं। LIGO के लिए मैंने अपने इस लेख में आगे 'लीगो' शब्द का प्रयोग किया है।

न्यूटन का ग्रेविटेशन सिद्धांत

वर्ष 1687 ई में घोषित, न्यूटन के इस सिद्धांत के अनुसार ब्रह्मांड का हर कण हर दूसरे कण को अपनी और आकर्षित करता है। इस आकर्षण को गुरुत्वाकर्षण बल कहा गया है तथा यह दोनों कणों के द्रव्यमान तथा उनकी परस्पर दूरी पर निर्भर करता है। यदि उन कणों के द्रव्यमान m_1 तथा m_2 है तथा उनकी परस्पर दूरी है तो उन कणों के मध्य गुरुत्वाकर्षण बल का अनुमान निम्न सूत्र से मिल सकता है।

$$F= Gm_1m_2/r^2$$

इस सूत्र में G सार्वत्रिक गुरुत्वाकर्षण नियतांक है जिसका मूल्य प्रयोगशाला में नापा गया है।

इस सिद्धांत के अंतर्गत न्यूटन ने–

(1) पृथ्वी के निकट वस्तुओं का उसके केंद्र की और गिरना,

(2) सौरमंडल के ग्रहों का सूर्य की परिक्रमा करना,

(3) सौरमंडल में उपग्रहों का अपने ग्रहों की परिक्रमा करना तथा

(4) हेली नामक धूमकेतु का 75–76 वर्षों के अंतराल से एक दीर्घवृत्ताकार पथ पर निरंतर यात्रा करते हुए बार–बार अपने पैरीहीलियन बिंदु से गुजरने को समझा था। इस बिंदु पर यह धूमकेतु सूर्य के निकटतम होता है। परन्तु न्यूटन चिंतित थे कि गुरुत्वाकर्षण बल अंततः होता क्यों है?

न्यूटन के सिद्धांत पर आधारित एक निष्कर्ष

न्यूटन के उपरोक्त सिद्धांत के अनुसार यदि ब्रह्मांड के किसी कण में कोई बदलाव होता है जैसे कि उस कण का खंडित होना, तो इस बदलाव का प्रभाव ब्रह्मांड के शेष समस्त कणों पर तुरंत होगा। बदलाव होने तथा प्रभाव पढ़ने में कोई विलंब नहीं होगा अन्य शब्दों में उस कण के खंडित होने का संदेश ब्रह्मांड के समस्त अन्य कणों तक अनंत गति से पहुंच जाएगा ।

उपरोक्त निष्कर्ष में संशोधन की आवश्यकता

वर्ष 1905 ई में घोषित आइंस्टीन की स्पेशल थ्योरी ऑफ रिलेटिविटी के अनुसार शून्य में प्रकाश की गति (लगभग 300000 किलोमीटर प्रति सेकंड) सबसे तीव्र है तथा यह गति सब दिशाओं में समान है। इसलिए यदि ब्रह्मांड के किसी एक कण में कुछ बदलाव होता है तो इसका संदेश उस कारण से सब दिशाओं में प्रकाश की गति से प्रसारित होकर हर अन्य कण तक उचित विलंब के साथ पहुंचेगा। उदाहरण के लिए यदि सूर्य के द्रव्यमान में अचानक कोई बदलाव होता है तो इसका प्रभाव सूर्य की परिक्रमा करती पृथ्वी पर लगभग 8 मिनट के उपरांत होगा।

गुरुत्वीय तरंग (ग्रेविटेशनल वेव)

ओलिवर हैवीसाइड ने वर्ष 1893 ई. में विद्युत–चुम्बकीय तरंगों के समानांतर गुरुत्वीय (ग्रेविटेशनल) तरंगों की संभावना पर सर्वप्रथम विचार किया था। विद्युत–चुम्बकीय तरंगों की तरह ही गुरुत्वीय तरंगें भी अनुप्रस्थ तरंगें होती है। लीगो प्रयोगशालायें ब्रह्मांड में विभिन्न स्रोतों से प्रसारित हो रही गुरुत्वीय तरंगों को रिकॉर्ड करने तथा उन पर अनुसंधान के उद्देश्य से स्थापित की जा रही हैं। वर्ष 2015 ई. में ये तरंगे पहली बार संयुक्त राज्य अमेरिका के लुईजियाना तथा वाशिंगटन राज्य में स्थापित लीगो प्रयोगशालाओं में रिकॉर्ड हुई है। ब्रह्मांड के सीमावर्ती क्षेत्र में दो ब्लैक होल्स के टकराने से यह तरंगें उत्पन्न हुई थी। ब्रह्मांड में ब्लैक होल्स के अतिरिक्त सुपर नोवे, बाईनरी स्टार्ज, व्हाईट

डवार्फस, न्युट्रान स्टार्ज, बिग बैंग इत्यादि गुरुत्वीय तरंगों के अन्य स्रोत हैं।

गुरुत्वीय तरंगों का पृथ्वी के कणों पर प्रभाव

मान लें कि किसी स्रोत से उत्पन्न गुरुत्वीय तरंग पृथ्वी से उत्तर से दक्षिण दिशा में गुजर रही है। हम उन कणों पर ध्यान केंद्रित करें जो पृथ्वी के एक अक्षांश के किन्हीं दो परस्पर लंबवत व्यासों पर स्थित हैं। यदि एक गुरुत्वीय तरंग के प्रथम भाग में एक व्यास पर स्थित कणों की परस्पर दूरी कम होगी तो दूसरे व्यास पर स्थित कणों की परस्पर दूरी बढ़ेगी। उसी गुरुत्वीय तरंग के दूसरे भाग में पहले व्यास पर स्थित कणों की परस्पर दूरी बढ़ेगी तथा दूसरे व्यास पर स्थित कणों की परस्पर दूरी कम होगी। पृथ्वी के कणों की परस्पर दूरी में गुरुत्वीय तरंग के कारण यह परिवर्तन अत्यंत सूक्ष्म स्तर पर होते हैं। लीगो का डिजाइन तथा उसमें प्रयोग किए गए यंत्रों की इतनी क्षमता है कि 4000 मीटर पर स्थित दो कणों की परस्पर दूरी में गुरुत्वीय तरंगों के कारण 10^{-18} मीटर तक के सूक्ष्म परिवर्तन नापे जा सकते हैं।

भारत में स्थापित होने वाली लीगो का महत्व

ब्रह्मांड में स्थित किसी स्रोत से प्रसारित गुरुत्वीय तरंग पृथ्वी से गुजरेगी तो साधारणतया उनके कारण पृथ्वी के कणों की परस्पर दूरी में अति सूक्ष्म बदलाव होंगे। इसलिए उन गुरुत्वीय तरंगों के पृथ्वी से गुजरने की पुष्टि जितनी अधिक लीगो से मिल सके उतना ही उत्तम होगा।

भारत में स्थापित होने वाली लीगो जो वर्तमान में कार्यक्रम के अनुसार क्रम में पांचवी होगी, से भी उन गुरुत्वीय तरंगों के गुजरने की पुष्टि महत्वपूर्ण होगी। इसके अतिरिक्त भारत की लीगो से गुरुत्वीय तरंगों पर अपने ही देश में अनुसंधान की सुविधा भी मिलेगी।

अंत में

लीगो से रिकॉर्ड होने वाली गुरुत्वीय तरंगों पर अनुसंधान से खगोल तथा भौतिकी में महत्वपूर्ण प्रगति की अपेक्षा है।

नोट

लेख में अंग्रेजी शब्दों, ग्रेविटेशनल वेव्स तथा ग्रेविटेशन का प्रयोग LIGO के G (ग्रेविटेशन वेव्ज) के साथ समावेश के लिए किया गया है।

संदर्भ

इंडियन एक्सप्रेस के 10 अप्रैल 2023 अंक में श्री अमिताभ सिन्हा का लेख 21 अप्रैल 2023 अंक में प्रोफेसर तरुण सौरदीप का लेख तथा विकिपीडिया में ग्रेविटेशनल वेव्स तथा लीगो पर जानकारी।

लायनस पौलिंग: दो नोबेल से सम्मानित

सुभाष लखेड़ा
नई दिल्ली

सन् 1917 में एक सोलह वर्षीय किशोर ने अपनी डायरी में लिखा था– ''मुझे कतई संदेह नहीं है कि मेरे बच्चे और उनके बच्चे मेरी जिंदगी से जुड़े क़िस्सों को पढ़कर उतने ही गर्वित तथा आनंदित होंगे जितना मैं अपने दादा के द्वारा लिखे कुछ किस्सों को पढ़कर होता हूं।''

सतहत्तर वर्ष बाद जब उस किशोर का तिरानवे वर्ष की उम्र में निधन हुआ तो उसने अपने बारे में जो भविष्यवाणी की थी, वह सही साबित हुई। **उसकी वैज्ञानिक उपलब्धियों, राजनीतिक गतिविधियों और निरंतर वैचारिक मतभेदों के बीच मजबूती से खड़ा रहने की क्षमता ने उसे इतना ऊंचा बना दिया कि केवल उनके परिवार को नहीं अपितु वे उन लाखों लोगों के भी प्रिय बन गए जिनसे उनका न तो कोई रिश्ता था और न कभी कहीं मुलाकात हुई थी।**

जिस किशोर ने यह भविष्यवाणी की थी, उनका नाम था लायनस कार्ल पौलिंग और जब 19 अगस्त, 1994 के दिन उनका निधन हुआ तो कई दिनों तक दुनिया में उस वक्त उपलब्ध माध्यमों में उनकी उपलब्धियों की चर्चा होती रही।

लायनस कार्ल पौलिंग (फरवरी 28, 1901 – अगस्त 19, 1994) जब नौ वर्ष के थे तो उनके पिता हरमन हेनरी विलियम पौलिंग का 11 जून 1910 को निधन हो गया था। उनकी और उनकी दो बहनों की देखभाल की ज़िम्मेदारी अब उनकी माँ लूसी इजेबैल 'बैल' डार्लिंग पर आ पड़ी थी।

अपने अध्ययन के लिए किशोर लायनस को स्वयं धन अर्जन करना पड़ा। उन्होंने परचून की दुकान में नौकरी जैसे अनेक काम किए और बाद में अध्ययन के दौरान पढ़ने के साथ–साथ पढ़ाने का भी काम किया। सारी मुश्किलों के बावजूद उन्होंने सन् 1922 में ऑरेगॉन स्टेट यूनिवर्सिटी से केमिकल इंजीनियरिंग की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद वे आगे के अध्ययन के लिए कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी पासेडीना चले गये।

अपनी केमिकल इंजीनियरिंग की पढ़ाई के दौरान लायनस पौलिंग गिल्बर्ट एन लेविस और इरविंग लैंग्म्यूयर द्वारा परमाणुओं की इलेक्ट्रॉनिक संरचना और अणुओं में तब्दील होने के लिए उनके बीच बनने वाले बंधों को लेकर किए शोध से परिचित हो गए थे। उन्होंने तय किया कि वे यह जानने की कोशिश करेंगे कि पदार्थों के भौतिक और रासायनिक गुण कैसे उन परमाणुओं की संरचनाओं से ताल्लुक रखते हैं जिनसे वे बनते हैं। उनके इस निर्णय ने उनके लिए क्वांटम केमिस्ट्री के दरवाजे खोल दिये।

कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में लायनस पौलिंग ने अपनी 'पी.एच.डी.' के लिए क्रिस्टलों की संरचना का अध्ययन करने के लिए एक्स–रे डिफरेक्शन तकनीक का उपयोग किया। उन्होंने खनिजों के क्रिस्टलों की संरचना को लेकर सात शोध पत्र प्रकाशित किए। सन् 1925 में उन्होंने फिजिकल केमिस्ट्री और मैथेमेटिकल फिजिक्स में अपनी डॉक्टरेट की उपाधि उत्कृष्ट सम्मान के साथ अर्जित की।

पौलिंग का कहना था कि रसायन विज्ञान में उनकी रुचि का श्रेय उनके एक मित्र लॉयड अलेक्जेंडर जैफरस (नवंबर 15, 1900 – अप्रैल 2, 1986) को जाता है जिसके पास अपने घर में एक छोटी केमिस्ट्री लैब किट थी। तेरह वर्ष की आयु में उसके साथ किए प्रयोगों ने उन्हें रसायन विज्ञान की तरफ आकर्षित किया था।

लायनस पौलिंग और एवा पौलिंग, दोनों ही अपने इस मित्र लॉयड अलेक्जेंडर जैफरस को इतना अधिक स्नेह देते थे कि उन्होंने फरवरी 10, 1931 में जन्में अपने दूसरे बेटे को पीटर जैफरस पौलिंग नाम दिया।

सन् 1926 में पौलिंग को गगनहाइम फैलोशिप मिली जिसके तहत उन्हें म्यूनिख में जर्मन भौतिकविद अर्नोल्ड जोहान्स विल्हेम सोमरफेल्ड (5 दिसंबर 1868 – 26 अप्रैल 1951), कोपेनहेगन में डेनिश भौतिकविद नील्स बोर और ज्यूरिख में ऑस्ट्रियन आयरिश भौतिकविद इरविन शोदिंगर

के साथ शोध कार्य करने थे। क्वांटम मैकेनिक्स के इन तीन विशेषज्ञों के साथ कार्य करने के दौरान पौलिंग ने यह निर्णय कर लिया था कि वे अणुओं की संरचना को समझने में क्वांटम मैकेनिक्स का इस्तेमाल करेंगे।

सन् 1927 में पौलिंग कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी में सैद्धांतिक केमिस्ट्री के सहायक प्रोफेसर बने। सन् 1929 में वे एसोसियेट प्रोफेसर और 1930 में प्रोफेसर बन गए। इस दौरान उन्होंने लगभग पांच वर्षों में पचास शोध पत्र प्रकाशित किए। पौलिंग एक उत्कृष्ट विज्ञान संचारक थे। वे अपनी बात इस तरह से लिखते और बोलते थे कि सामान्य विवेक वाला आदमी भी उन्हें आसानी से समझ लेता था। आम लोगों के लिए उन्होंने विज्ञान, शांति और स्वास्थ्य संबंधी विषयों पर हजारों लेख और अनेक पुस्तकें लिखी। उन्हें जो भी जानते थे, वे सभी उनके व्याख्यानों को सुनने के लिए लालायित रहते थे।

अपने जीवन के सात दशकों में उन्होंने रसायन विज्ञान की सभी विधाओं, जीव रसायन, खनिज विज्ञान, प्रतिरक्षा विज्ञान, बायोमेडिसिन, पोषण चिकित्सा, मस्तिष्क और मानसिक स्वास्थ्य, आण्विक क्रम–विकास, नैदानिक प्रौद्योगिकी और सांख्यिकीय जानपदिक रोगविज्ञान के साथ साथ वैश्विक शांति के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य किए।

वे उन पांच लोगों में शामिल हैं जिन्हें दो नोबेल पुरस्कार मिले हैं। निरस्त्रीकरण और परमाणु अप्रसार को लेकर उन्होंने जो अथक प्रयास किए, उन्हें देखते हुए उन्हें सन् 1962 में शांति का नोबेल पुरस्कार मिला। वे अभी तक अकेले ऐसे नोबेल विजेता हैं जिन्हें दो नोबेल पुरस्कार मिले हैं और जिन्होंने दोनों पुरस्कार किसी दूसरे के साथ शेयर नहीं किए हैं। वें उन दो लोगों में से एक हैं जिन्हें दोनों नोबेल दो भिन्न विषयों में मिले हैं। उनसे पहले मैरी क्यूरी को भौतिकी और रसायन विज्ञान, दो विषयों में नोबेल पुरस्कार मिले थे।

वे क्वांटम केमिस्ट्री और मॉलिक्यूलर बायोलॉजी के संस्थापकों में गिने जाते हैं। उनके शोध कार्यों से जेम्स वॉटसन, फ्रैन्सिस क्रिक, मॉरिस विल्किंस और रोजालिंड फ्रैंकलिन को डी.एन.ए. की बनावट पता करने में मदद मिली।

दरअसल, सन् 1991 में पौलिंग को पहली बार उस कैंसर का पता चला जिसने उनकी जिंदगी छीनी। बार बार की आंत्रिक पीड़ा की वजह जानने के लिए जब दिसंबर 1991 में स्टैनफोर्ड हॉस्पिटल में उनकी जांच की गई तो मालूम हुआ कि वे प्रोस्टेट कैंसर से पीड़ित हैं और यह कैंसर उनके बृहदान्त्र के अन्तिम भाग यानी मलाशय तक फैल चुका है। रोग का निदान होने के बाद पौलिंग को इसके उपचार से जुड़ी शल्य चिकित्साओं से गुजरना पड़ा। उनका हार्मोन ट्रीटमेंट भी किया गया। पौलिंग ने स्वयं भी विटामिन सी की ऊँची खुराकों से अपना उपचार करने की कोशिश की। उनका मानना था कि यह उपचार रसायन अथवा विकिरण चिकित्सा से अधिक मानवीय है।

दरअसल, विटामिन सी के प्रति पौलिंग का यह जुनून सन् 1940 के दौरान तब मजबूत हुआ जब वे किडनी के एक रोग ग्लूम्हेरुलोनफ्राइटस से पीड़ित हुए थे। उन दिनों रीनल डायलिसिस (अपोहन) जैसे उपचार उपलब्ध न होने के कारण स्टैनफोर्ड मेडिकल स्कूल के नेफ्रोलॉजिस्ट (किडनी रोग विशेषज्ञ) डॉ० थॉमस एडिस ने एक कठोर आहारीय पद्धति से पौलिंग का उपचार किया। पौलिंग को कम से कम प्रोटीन और नमक खाने के साथ साथ खूब पानी पीने को कहा गया ताकि उनकी किडनी पर कम दबाव रहे। यूं विटामिन सी के प्रति पौलिंग का लगाव तो इसके बहुत बाद में हुआ लेकिन इस बीमारी के चंगुल से निकलने के बाद एक बात उनके दिमाग़ में बैठ गई कि आहारीय नियंत्रण और यथेष्ट पोषण से बहुत से रोगों का उपचार किया जा सकता है। उनका यह विचार उनके दिमाग़ में अंत समय तक बना रहा।

पौलिंग को यकीन था रसायन चिकित्सा कीमोथेरेपी की तुलना में विटामिन सी से उपचार करने पर उनका निधन कम पीड़ादायक होगा। वे चाहते थे कि उनकी अंतिम यात्रा कष्टदायक न हो।

उनकी पत्नी एवा हैलेन की मृत्यु सन् 1981 में पेट के कैंसर से हुई थी। उन्होंने भी रसायन चिकित्सा के लिए अपनी सहमति नहीं दी थी। उनको भी पौलिंग विटामिन सी की ऊंची खुराक देते रहे। उनका यह उपचार अंततः सफल नहीं रहा। पौलिंग अपनी पत्नी के निधन के दुःख से कभी उबर न पाए थे।

लायनस कार्ल पौलिंग का जन्म अमेरिकी राज्य ऑरेगॉन के पोर्टलैंड शहर में फरवरी 28, 1901 में हुआ था। उल्लेखनीय है की न्यू साइंटिस्ट पत्रिका ने उन्हें दुनिया के श्रेष्ठ बीस वैज्ञानिकों में स्थान दिया है। वे रसायनज्ञ, जीव रसायनज्ञ, रसायन इंजीनियर, लेखक, शिक्षक और शांति कार्यकर्ता थे। उन्होंने अपने जीवन काल में बारह सौ से अधिक शोध पत्र और पुस्तकें लिखी जिनमें से आठ सौ पचास विज्ञान के विषयों पर हैं। वे विज्ञान के इतिहास में सोलह महत्वपूर्ण वैज्ञानिकों में गिने जाते हैं।

उन्हें सन् 1954 में रसायन विज्ञान के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया गया था। निरस्त्रीकरण और परमाणु अप्रसार को लेकर उन्होंने जो अथक प्रयास किए, उन्हें देखते हुए उन्हें सन् 1962 में शांति का नोबेल पुरस्कार से नवाजा गया।

विटामिन संपूरकों के प्रबल समर्थक पौलिंग का निधन 19 अगस्त, 1994 के दिन 93 वर्ष की उम्र में बिग सर (कैलिफोर्निया) अवस्थित अपने आवास में हुआ।

लायनस और एवा पौलिंग के चार बच्चे हुए। उनके तीन बेटों के नाम लायनस कार्ल पौलिंग जूनियर (1925–2003), पीटर जैफरस पौलिंग (1931–2003) और एडवर्ड क्रेलिन पौलिंग (1937 – 1997) थे और उनकी बेटी का नाम लिंडा हैलेन (जन्म 1932) है। एडवर्ड क्रेलिन पौलिंग अपने सबसे बड़े भाई से बारह वर्ष और अपने बहन लिंडा से पांच वर्ष छोटा था।

पौलिंग से संबंधित एक लोमहर्षक किस्सा

अमेरिकी राज्य कैलिफोर्निया में सैन डिएगो से सान होजे के बीच स्टेट रूट 1 पर 'बिग सर' नामक एक ऊबड़–खाबड़ क्षेत्र पड़ता है। सड़क मार्ग से सैन डिएगो से बिग सर 750 किलोमीटर (466 मील) दूर है और सान होजे से बिग सर की दूरी 161 किलोमीटर (100 मील) है। इस एरिया में आज भी आबादी न के बराबर है लेकिन भीड़भाड़ से दूर रहने की मंशा वाले लोगों के लिए यह एक रमणीक स्थान है। 'स्टेट रूट 1' का लगभग सारा हिस्सा प्रशांत महासागर को छूते हुए गुजरता है।

सन् 1955 में जब पासेडीना से बर्केली जाते हुए बीसवीं सदी के सबसे प्रभावशाली रसायनज्ञ लायनस पौलिंग (फरवरी 28, 1901 – अगस्त 19, 1994) और उनकी पत्नी एवा हैलन पौलिंग बिग सर से होकर गुजरे तो उनकी नज़र पहाड़ी के एक ऐसे हिस्से पर पड़ी जो सागर में घुसा हुआ था और जिस पर कोई पशु – फार्म नजर आ रहा था। उनके दिल को वह जगह भा गई और उन्होंने अगस्त 1956 में 163 एकड़ के उस रैंच को उनतीस हजार डॉलर में खरीद लिया। सोडा स्प्रिंग क्रीक और सामन कोन क्रीक के बीच के उस ऊबड़ – खाबड़ क्षेत्र में फिर उन्होंने अपने लिए अपनी पसंद का भवन बनाया।

यह किस्सा शनिवार जनवरी 30, 1960 का है। उन दिनों पौलिंग दंपति अपने इस एकांत आशियाने में रह रहे थे। लायनस सुबह अपनी पत्नी एवा से बोले कि वे अपने रैंच की बाड़ का मुआयना करने जा रहे हैं। एवा को इसमें भला क्या एतराज हो सकता है। वे लायनस के साथ दरवाजे तक आई और उन्होंने उन्हें अपने केबिन से दक्षिण की ओर जाते हुए देखा।

उधर कुछ देर बाद लायनस दूसरी दिशा में चल पड़े। वे सैंट लूसिया श्रेणी के सामन कोन की तरफ निकल पड़े। अपनी मटरगश्ती में लायनस भूल गए कि उन्हें लंच करने घर जाना था। वे टीलों को लांघते हुए पांच बजे के आसपास एक ऐसी जगह पहुंच गए जहां से न तो आगे का रास्ता सुरक्षित था और अब न उन्हें वापस लौटना आसान लग रहा था।

कैलिफोर्निया के इस हिस्से में जनवरी में पांच बजे के आसपास अंधेरा होने लगता है। अब वे एक ऐसे टीले पर थे जो तीन फीट चौड़ा और छह फीट लंबा था।

यूं लायनस ने सही वस्त्र पहने हुए थे। उनके सर पर गोल चपटी टोपी और बदन पर जैकेट और पतलून थी। अब उन्हें घबराहट होने लगी थी किंतु उन्होंने अपनी घबराहट पर काबू पाते हुए उस टीले पर एक दो फीट चौड़ा, तीन फीट लंबा और एक फुट गहरा गढ्ढा बनाया ताकि वे उसमें बैठकर अपनी रात गुज़ार सकें। अंधेरा होते होते उन्होंने पास की झाड़ियों से टहनियां तोड़कर अपने लिए बिछौना तैयार किया और फिर उस गढ्ढे में बैठ गए। कुछ टहनियों से उन्होंने अपना ओढ़ना बनाया। उनके पास एक बड़ा नक्शा था। उससे उन्होंने अपना सर ढक लिया। ऐसा सब करने के बावजूद वे सोये नहीं। वे रात भर सितारों को

केमिकल बॉडिंग समझाते रहे। उन्हें डर था कि कहीं नींद की वजह से उन टीलों के ठीक नीचे महासागर के पानी में न पहुंच जाएं। केमिकल बॉडिंग का लेक्चर समाप्त हुआ तो वे आवर्त तालिका के तत्वों के गुणों को बताने लगे। फिर वे जर्मन, फ्रेंच, इटालियन और अंग्रेजी में गिनती गिनने लगे। वे अपनी छड़ी से तारा–समूहों को देखकर समय का अनुमान लगाने लगे। शरीर गर्म रहे, इसके लिए वे अपने अंगों को हिलाते रहे।

उधर शाम के चार बजे तक भी जब लायनस घर नहीं लौटे तो उनकी पत्नी एवा घबराने लगी। उन्होंने उस एरिया के रेंजर से संपर्क किया और फिर अपने दामाद बार्कली कैम को भी आने के लिए कहा। कुछ देर बाद जब उनकी तलाश शुरू हुई तो एक रेंजर उनकी चोटी की तलहटी से गुजरा लेकिन लायनस उसका ध्यान न खींच पाए। रात साढ़े ग्यारह बजे अनुकूल मौसम न होने के कारण अधिकारियों ने अपना खोजी अभियान बंद कर दिया। लगभग ढाई बजे सुबह उनका दामाद रैंच पर पहुंचा और उसकी सास ने उनके जिस तरफ जाने की बात कही थी, उसने उधर उनको खोजा लेकिन वे तो उधर गए ही नहीं थे। वह निराश होकर वापस आया और फिर वह छह बजे सुबह उनकी खोज में पुनः उधर ही गया।

दस बजे सुबह लायनस पौलिंग को जिस ऊंचे टीले पर वे बैठे थे, उसके ठीक नीचे समुद्र तट पर टेरी करेंस नामक उस खोजी की आवाज सुनाई दी जो उनके खोजी दल में शामिल था। पौलिंग ने उसे आवाज दी और वह हड़बड़ाते हुए उनकी तरफ बढ़ा। टेरी ने जब यह सूचना अपने हाकिम को दी तो उसने टेरी को कहा कि वह जाकर एवा पौलिंग को लायनस पौलिंग के सही सलामत मिल जाने का समाचार दे और उनसे एक रस्सी भेजने को कहे।

जब तक रस्सी आई, उससे पूर्व ही उस हाकिम ने सहारा देकर लायनस को उस टीले से धीरे–धीरे उतार दिया। जब पौलिंग बचाव दल के साथ अपने केबिन में पहुंचे तो वे बेहद खुश थे। उन्होंने कॉफी पी और भोजन किया। एवा पौलिंग ने बचाव दल को धन्यवाद देते हुए विदा किया। तत्पश्चात, उन्होंने उन संवाददाताओं को खिसकाया जो वहां पौलिंग के गुमशुदगी के बारे में जानने आए थे।

पौलिंग शनिवार सुबह से लापता हुए थे और इतवार को सुबह दस बजे के लगभग मिले थे। साढ़े नौ बजे सुबह रेडियो पर उनके लापता होने की खबर प्रसारित हुई और सुबह दस बजे किसी बेवकूफ रिपोर्टर ने सैन फ्रैंसिस्को रेडियो पर उनकी मृत्यु होने की ख़बर प्रसारित करवा दी।

खैर, एवा और लायनस पौलिंग सोमवार एक फरवरी 1960 के दिन कैलिफोर्निया इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, पासेडीना के लिए रवाना हुए। वहां पहुंचने पर जब लायनस पौलिंग की तबीयत बिगड़ी तो वे वापस बिग सर में मौजूद अपने डीयर फ्लैट रैंच पर पहुंचे। जांच से पता चला कि उन्हें हल्का सदमा पहुंचा था। साथ ही जिन टहनियों के पत्तों से उस रात उन्होंने गढ्ढे में अपने लिए बिछौना तैयार किया था, वे उनके जहर से भी पीड़ित थे। डॉक्टरों की देखरेख में स्वास्थ्य लाभ के लिए उन्हें दो सप्ताह तक विश्राम करना पड़ा। तत्पश्चात, वे पहले की तरह शोध और वैश्विक शांति के लिए किए जाने वाले अपने प्रयासों को अंजाम तक पहुंचाने में जुट गए।

लायनस पौलिंग के लापता होने और उनके सुरक्षित मिल जाने की खबर के बाद दुनिया भर से उनके पास प्रतिदिन हज़ारों पत्र आने लगे। **उनके एक प्रशंसक ने लिखा था– प्रिय डॉ० पौलिंग, कृपया आप तब तक खड़ी और खतरनाक चट्टानों से दूर रहें जब तक आप निरस्त्रीकरण और परमाणु अप्रसार के अपने लक्ष्यों को प्राप्त नहीं करते।**

– एक जरूरतमंद नागरिक मार्लन ब्रैंडो

पुराजलवायु अध्ययन की खिड़की : लदाख की पंगोंग छो़ झील का बदलता मिज़ाज

रणधीर संजीवनी
सी–2179/4, इंदिरा नगर, लखनऊ

देर शाम रोज़ाना की तरह रामनिहाल कश्यप जी की फड़ से फल लेने गया। उनके नमस्ते साहब की टेक का जवाब, नमस्ते से देकर फल छाँटने लगा तो अचानक उन्होंने सवाल दाग दिया, 'साहब, एक दिन आप बताए थे कि आप शोध–खोज करते हैं। कैसा शोध? ऊ में क्या होत है?' अनारों को तराजू में रखते हुए मैं बोला, 'पुराजलवायु शोध! .....पुराने समय में बारिश और गर्मी कितनी पड़ती थी ऐसा सब। 'वह बोले, 'अच्छा, ई साल का मौसम में गर्मी–बारिश कैसा रहेगा? 'राम निहाल जी ने मानव सभ्यता के सबसे बड़े और ज्यादा पूछे जाने वाले सवालों में से एक, जोकि चिन्तित किसान से लेकर सड़कों में पानी भरने भर की मामूली चिन्ता वाला हर व्यक्ति सबसे अधिक बार पूछता है, मेरे सामने रख दिया था। मैंने कहा, 'नहीं! मैं बहुत पुराने समय मतलब आज से 10, 20, 50–80 हजार साल पहले की जलवायु पर काम करता हूँ। इस समय को हम जिस काल खंड में रखते हैं उसको विज्ञानियों ने चतुर्थ या क्वाटर्नरी कल्प का नाम दिया है। मौसम तो आज कल का होता है और जलवायु लम्बे समय की।' मैं लगभग बात ख़त्म करने के लिए एक साँस में कह गया। उनके चेहरे की तरफ़ देखा तो साफ़ हो गया कि वह कुछ नहीं समझ पाए।

मैंने बात खोली 'इसे ऐसे समझिए जैसे कोई ग्राहक कुछ दिनों तक आपकी दुकान में आकर फल ले। फिर किसी दूसरी वजह से दुकान बदल ले और कभी फिर से आना शुरू कर दे, तो वह मौसम है। पर वहीं कोई दूसरा ग्राहक बहुत लम्बे समय मान लीजिए 10–20 सालों से फल मोल–तोल के साथ ही सही, कभी कम–कभी ज्यादा लेता है, पर लेता ज़रूर हो। फिर अगर वह यहाँ से घर बदल ले तो नहीं ले पाएगा। तो वह जलवायु है। जो थोड़े–थोड़े समय में बदलता रहे वह मौसम और जो बहुत समय एक रवैये में रहे और फिर बदले वह जलवायु। इसी में यह बात भी जोड़ लीजिए कि अगर किसी ग्राहक की आपके दुकान में किसी ख़ास समय में आने की आदत है कह लीजिए पिछले 30–35 साल से लगभग एक ही समय में आता है। तभी आप कह सकते हैं कि वह आगे आने वाले 30 सालों में भी उसी समय आएगा। ऐसा ही जलवायु के लिए भी हिसाब लगाना पड़ता है। क्या जो अचानक किसी बेमौसम बारिश या बरसात में बाढ़ आती है उसका कोई निश्चित समय चक्र, कह लीजिए हर पाँच साल में आने का चक्र है या नहीं? इसको पक्का करने के लिए हमको उसकी पुराने समय से जाँच–पड़ताल करनी होगी। आबोहवा या जलवायु के मामले में यह पुराना समय कई सौ सालों से कई हज़ार सालों या उससे भी ज्यादा सालों का होता है। इसी को पुराजलवायु कहते हैं। पुरा माने बहुत पुराना जैसे पुराण जिनमें पुरानी–पुरानी कथाएँ हैं। ऐसी ही पुरातत्व जिनमें पुरानी वस्तुओं को खोजा जाता है।'

'लखनऊ की पुराजलवायु पर खोज करते हैं सर?' राम निहाल जी के सवाल ने यह बता दिया कि आज वो लम्बी बातचीत करने के मन से हैं। 'नहीं, मैं भारत की उत्तर पश्चिम दिशा की सीमा के आख़िरी इलाके लदाख (प्रचलितः लद्दाख), की जलवायु पर काम करता हूँ। लदाख में जो छुशुल या चुसूल चोटी के पास का इलाका, जहाँ भारत की सीमा चीन के साथ लगी है। वहां काम करता हूँ समाचारों में यह इलाका आपने सुना होगा।'

आश्चर्य के साथ निहाल जी ने पूछा, 'अरे साहब! इतना दूर.. ठन्डे जगह क्यों?' वहाँ तो केवल आप ही काम करते होंगे।'

'नहीं नहीं, मैं ही क्यों? कई लोग शोध करते रहे हैं, कर रहे हैं। अलग–अलग तरह के शोध कार्य। रही बात लदाख क्यों....हाँ लदाख, हिमालय पार का ठण्डा इलाका, पूरी तरह

ना सही पर सूखा रेगिस्तान। पर ऐसा शोध करने के लिए उसकी जैसी दूसरी जगह कोई नहीं।'

निहाल जी मुझे बैठने के लिए एक स्टूल देते हुए बड़े रूचि के साथ बोले, 'सो क्यों साहब?'

आज असली 'साइंस आउटरीच' का मौका मिला तो मैं भी इत्मीनान से बैठकर बोला, 'देखिए राम निहाल जी यह फ़िल्म थोड़ी लम्बी रहेगी! बारिश, पुरवा, पछुवा, हिमालय पार का इलाका और लदाख ये सब इस फ़िल्म के पात्र हैं। यह तो सभी जानते हैं कि सूरज की गर्मी में पानी से भाप बनती है जिससे बादल बनते हैं। भारत तीन तरफ़ समुद्रों से घिरा है। वह तीन समुद्र हैं हिन्द महासागर, अरब महासागर, बंगाल की खाड़ी। इनसे गर्मी के महीनों भर उठी भाप से बने बादल पुरवा या पुरवाई (हवाओं) के साथ चलकर पूरे भारत में और फिर हिमालय से टकराकर पूरे हिमालय में खूब बारिश करते हैं। आप समाचारों में मानसून सुने होंगे यही है वह मानसून। सबके लिए बरसात का मौसम। लेकिन, हिमालय तक आते—आते कमज़ोर हो जाने के कारण यह पुरवा (हवा) हिमालय के पार नहीं जा पाती है। लदाख भी इसी हिमालय—पार या अंगरेजी में "ट्रान्स—हिमालय" इलाके में है।'

'रामनिहाल जी अब जब बात निकल ही गई है तो आपको बतलाता हूँ कि लदाख आगे चलकर तिब्बत—तिब्बत के पठार से जुड़ा है। तिब्बत सुने होंगे?' जवाब में वह सिर हिलाकर हामी भरते हुए बस बोले 'दलाई लामा'।

राम निहाल जी अखबार पढ़ने और समाचार सुनने के आदी हैं। इतना ही नहीं रेडियो पर आम लोगों के लिए आने वाली विज्ञान परिचर्चा भी सुनते हैं। इसलिए उनको यह सब थोड़ा पता रहता ही है। 'हाँ वही तिब्बत', मैंने बात जारी रखी 'यह पुरवाई अगर हिमालय के पार जाती है तो अपने में बहुत कम आर्द्रता यानि नमी लिए होने के कारण हिमालय—पार इलाके में बरसात के महीनों में बहुत कम बारिश कर पाती है। अगर पुरवाई बहुत जोरदार रहे, ताक़तवर रहे तो उस साल वह हिमालय के पार पहुंचकर वहां भी बारिश कर पाती है। दूसरी तरफ़, दूर पश्चिम दिशा में स्थित साइबेरिया से आने वाली पछुवा (हवा) जाड़ों के महीनों में यहाँ पहुँचकर हाड़ कंपकपा देने वाली ठण्ड के साथ खूब बर्फ़ गिराती है।'

'असल में, हिमालय, हिमालय—पार का यह इलाका, तिब्बत, कराकोरम और उससे आगे हिन्दुकुश पर्वत...' निहाल जी बीच में बड़ी खुशी से जोर से बोले 'सिकन्दरवा आय रहा वहाँ से!' विश्व विजेता ओलेक्ज़ेन्दर के अलेक्सांद्र होकर हिन्दी में सिकन्दर के बाद सहज ही अब सिकन्दरवा बन जाने से लोक भाषा की हुई इस विश्व विजय पर मेरा खुशी भरा हल्का ठहाका ही निकल गया। 'हा हा हा! हाँ—हाँ वही! तो हिमालय, हिमालय—पार का यह इलाका, तिब्बत, कराकोरम और उससे आगे हिन्दुकुश पर्वत के आस—पास की इस बड़ी भौगोलिक सत्ता या भू—सत्ता को "थर्ड पोल", हिन्दी में कहूँ तो "तृतीय ध्रुव"का नाम दिया गया है। यह पूरा इलाका बहुत ऊँचाई, बर्फ़ से ढकी हुई ऊँची—ऊँची पर्वत चोटियों, उबड़—खाबड़ ज़मीन, ज़मीन के अन्दर बड़ी लम्बी दरारों और उनमें में होती हुई हलचलों, झुलसा देने वाली तेज धूप, अथाह ठण्ड—बर्फ़, कहीं सूखे रेगिस्तान, कहीं हरे इलाके, बड़ी—बड़ी झीलों, और ऐसी ही बहुत सारी विभिन्नताओं से भरा है। दुनिया की सारी 8 हज़ार मीटर से अधिक ऊँचाई वाली पर्वत चोटियाँ इसी प्रान्त में हैं। चूँकि सबसे ऊपर और ऊँची छत होती है इसलिए इस बड़े भू—भाग को "दुनिया की छत" भी कहते हैं। यह पूरा प्रान्त ही पछुवा के लाए हुए बर्फ़—पानी वाला है। इस इलाके का बहुत ही बड़ा भाग पूरी तरह बर्फ़ से ढका हुआ रहता है। हिमनदों (बर्फ़ या हिम की नदियाँ), मिसाल के लिए लदाख में सियाचिन ग्लेशियर, से इस इलाके को पीने का पानी मिलता है।

हिम या बर्फ़ का यह अकूत भण्डार नदियों और सरोवरों के रूप में अथाह जलराशि को जन्म देता है। कई सभ्यताओं को अपनी गोदों में पालने वाली नदियाँ जैसे अमू दरिया, ब्रह्मपुत्र, गंगा, सिन्धु, इरावदी, मेकोंग, सालवीन, तारिम, यांग्त्से और येल्लो नदियाँ यहीं से निकलती हैं। ये नदियाँ एशिया के 16 देशों भारत, चीन, अफगानिस्तान, मंगोलिया, पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान, कम्बोडिया, क्यर्ग्यस्तान, लाओस, ताजीकिस्तान, थाईलैंड, तुर्कमेनिस्तान, उज्बेक्सतान और विएतनाम को पानी देती हैं। जैसे सब शहरों में पानी ऊँची मीनारों पर बड़ी—बड़ी टंकी में रहता है और वहाँ से शहरों को मिलता है वैसे ही इस इलाके में जमी बर्फ़ के रूप में पानी रहता है जिसके पिघलने से नदियाँ निकलती हैं इसलिए यह प्रान्त "एशिया

की जल टंकी मीनार" अंगरेजी में कहूँ तो "Water Tower of Asia" का नाम भी पाया है। यहाँ की कई बड़ी–छोटी झीलों में भी यही पानी इकट्ठा होता है।'

'कितना अद्भुत इलाका है, साहब!' कहकर निहाल जी दूसरे आए ग्राहक से सौदा पक्का करने लगे।

उस व्यक्ति के चले जाने पर मैं बात को आगे बढ़ाते हुए बोला, 'अकेला तिब्बतीय पठार ही इस "तृतीय ध्रुव" का आधे से ज्यादा भाग बनाता है। ज़मीनी बनावट और भूगोल की दृष्टि से कहें तो लदाख इसी तिब्बतीय पठार का भाग है। पूरा ना सही तो लदाख का सिन्धु नदी क्षेत्र और वह हिस्सा जिसकी मैं आगे बात करूँगा वे हिस्से तो तिब्बतीय पठार के ही भाग हैं। लदाख की ज़मीनी बनावट, मिट्टी, बजरी–रेत–पत्थर, प्राकृतिक दृश्य, नदी–नाले, ताल–तलैया, आबोहवा, घास–फूस–पौधे, जानवर–पंछी, फल–फूल, पर्यावरण, यहाँ तक कि लोग, रहन–सहन, खेती–बाड़ी सब कुछ इतना मिलता–जुलता कि इसे "लघु तिब्बत" यानि "छोटा तिब्बत" भी कहा जाता है। लदाख में भी पुरवा और पछुवा दोनों बचपन की सहेली की तरह आपस में खेल खेलती हैं। विज्ञानी, शोधकर्ता इसी खेल को पकड़ना चाहते हैं। कब पुरवा ज़ोरदार रही? कब पछुवा ने अपना बर्फ़ का खजाना ज्यादा लुटाया? कब दोनों ने मिलकर ज़्यादा ही पानी इलाके को दे दिया? क्या कभी पहले पुराने समय पुरवाई के ज्यादा जोर से बरसने से यहाँ की नदियाँ अपने बंधा/बाँध तोड़कर बहने तो नहीं लगी थी? क्या इस दौरान कभी ताल–तलैया पानी से लबालब भर गए? पछुवा के दिल खोलकर बर्फ़बारी करने से बर्फ़ की नदियाँ कब बढ़ आईं? इन सब सवालों का जवाब पाने के लिए शोधकर्ता लगे हैं। ये सवाल जीवन के लिए सबसे ज़रूरी पानी से, बारिश–बर्फ़, सूखे के मुद्दों से सीधे जुड़े हैं। तो आप समझे कि इस तरह यहाँ दो प्रकार की हवाओं, पुरवा और पछुवा, जिनको विज्ञानी "भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून" और "पश्चिमी पवन/विक्षोभ" कहते हैं, से बारिश–बर्फ़ होती है और इसलिए वहाँ शोध करने से हमको दोनों जलवायु के बारे में पता लग जाता है। यह सब कई लोगों के शोध के नतीजे हैं।

'जी साहब, समझ गए। चाय मंगवाऊं?'

'नहीं–नहीं, धन्यवाद। आप लीजिए। जानते हैं लदाख में हमारी जैसी चाय के अलावा उनकी अपनी ढंग की मक्खन और नमक डालकर ख़ास तरह के बर्तन में फेंटी हुई चाय होती है। उसे "गुर–गुर" बोला जाता है।

बहुत ही आश्चर्य से राम निहाल जी बोले, 'अच्छा... साहब! बहुते अलग–अलग बात है लदाख मा तो।'

मैं लदाख को...., उसके कहीं पर के एकदम नीरव वातावरण को, तो कहीं पर के गर्जन–तर्जन करते हुए बहती हुई नदियों के कोलाहल को, उसके बंजर भाग को, तो उसके खुबानी के बगीचों को, उसके बियाबान/बयाबान को, तो साथ ही उसके विशालकाय मठों को, उसके अद्भुत प्राकृतिक दृश्यों को याद करता हुआ शुरू हो गया फिर से। 'सो तो है कश्यप जी। लदाख...... यह हिम प्रदेश विश्व में सबसे ऊँचाई पर बसे हुए मनुष्य के निवास स्थानों में से एक है। इसके भी "किए–छा"; "खा–छेनपो" अर्थात् "हिम–महा प्रदेश"; "भोट प्रदेश" जैसे और भी कई दूसरे नाम पुरानी किताबों में मिलते हैं। लदाख का वास्तविक अर्थ 'सुरम्य दर्रों का प्रदेश' है लेकिन ज्यादातर यह माना जाता है कि इसका अर्थ 'अनेक दर्रों का प्रदेश' है। 18वीं शताब्दी तक व्यापार के लिए पूर्वी चीन से यूरोप तक फैले हुए रेशम मार्ग (सिल्क रूट) से हिन्दुस्तान को जोड़ने वाले मार्ग यहाँ से गुज़रते थे।'

राम निहाल जी बड़ी ख़ुशी से बोले, 'साहब तब तो लदाख हो आए कोई तो समझो तिब्बत ही हो आया।' मैंने मुस्कुराते हुए कहा, 'बिल्कुल! लदाख मुख्यतः तिब्बत और पाकिस्तान से लगी भारत की सबसे महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय सीमा पर स्थित है। यह उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व में दरास नदी के मुहाने से लेकर सिन्धु नदी के तट पर छिब्रा तक और काराकोरम श्रृंखला से लेकर सेर–छु तक फैला है। लदाख के उत्तर में ज़िन ज़ियाङ, पूर्व और दक्षिण–पूर्व में तिब्बत के रूशोद एवं जङथङ क्षेत्र, दक्षिण में हिमाचल प्रदेश के लाहुल–स्पीति जिले और पश्चिम में कश्मीर घाटी क्षेत्र तथा बल्तिस्तान (पाक–अधिकृत गिलगित एवं हुन्जा) स्थित हैं। दक्षिण से मुख्य हिमालय की दक्षिण–पश्चिमी श्रृंखलाओं और उत्तर से कराकोरम श्रृंखला से घिरा लदाख एकदम अर्द्ध–रेगिस्तानी इलाका है। मुख्यतः, बंजर प्रान्त होते हुए भी साल भर पानी से भरी रहने वाली विशाल नदियां इसकी

गोद में अठखेलियाँ खेलती हैं। मुख्य नदी सिन्धु नदी है जो अपनी सहायक नदियों हैनले, जङस्कर, यापोला/वानला, सुरू, शयोग और इनकी सहायक नदियों सारपा, डोडा, कुरगाईख, लिंग्ती, मरखा, चांग चेन मो, गल्वान, साल्तोरो, नुबरा, टांगचे़ (प्रचलित–तांगसे) के साथ नदियों का एक बड़ा तंत्र बनाती है। पूरा क्षेत्र अपनी ऊँचाई के कारण सूरज की सीधी गर्मी में तपता है।'

अब आप यह बात भी जान लें कि हिमालय, हिमालय–पार और तिब्बत का पठार अपने बनने के दौरान कहीं न कहीं जुड़े हुए हैं। क्या आप जानते हैं कि जहाँ आज हमारा नगाधिराज हिमालय खड़ा है, वहाँ पर कभी समुद्र था। विज्ञानियों ने उसे टेथिस नाम दिया है।' ख़ुशी और संतुष्टि के भाव के साथ चहकते हुए राम निहाल जी बोले, 'जी–जी, एक बार समाचार में सुने हैं,एक लेख में पढ़े हैं और एक बार रेडियो में चर्चा में भी सुने हैं। एकदमे अलग अचरज बात है।'

'वाह, बहुत बढ़िया कश्यप जी। फिर तो आप बाकी कहानी जानते ही हैं। वह जो भारतीय महाद्वीप की प्लेट सरकते हुए एशिया प्लेट से टकराई और हिमालय बना, वह प्लेट अभी भी सरक रही है और यह हिमालय अभी बढ़ ही रहा है। इसके चलते इसमें हलचल चलती ही रहती हैं। इसके ज़मीन के अन्दर बड़ी–बड़ी दरारें सरकती–फिसलती रहती हैं। इन सबसे कभी पहाड़ दरकने से बना मलवा किसी नदी का रास्ता रोक देता है जिससे नदी एक सरोवर या ताल को जन्म दे देती है। कभी फिर ज़मीन में हलचलें होती हैं तो इस झील/ताल के बंध टूट जाते हैं और इसका पानी बह जाता है। पानी अपने पीछे छोड़ जाता है साल दर साल जमा करी अपनी पूँजी ...चिकनी मिट्टी, रेत, बजरी, कंकड़, उनमें दबे हुए पौधों–जानवरों के अवशेष...इत्यादि।

लदाख में एक सरोवर है, एक झील है, पंगोंग छ़ो! पंगोंग मतलब होता है "घास का मैदान" और छ़ो कहते हैं झील को। तिब्बती भाषा में इसको "कुओमूआंग्ला रेनबो छ़ो" कहते हैं जिसके "लम्बी संकरी मंत्रमुग्ध (करने वाली) झील" या "लम्बी गर्दन वाली सारस (जैसी) झील" जैसे अर्थ मिलते हैं। चीनी भाषा में बंगोंग छो कहते हैं। यह लगभग 134 किलोमीटर लम्बी है। ''ओ रे मोरी गंगा मैया इतनी लम्बी झील!!' बहुत ही आश्चर्य के साथ वो बोले। मैंने हँसते हुए अपनी बात जारी रखी, 'सही अर्थों में यह आपस में जुड़ी पाँच झीलों के तंत्र, जिसका नाम "छ़ोमो–गुअलारी" है, की पाँचवी झील है। 'यह भारत और चीन की सीमा पर है। दूर तक बहुत सुन्दर हरे–नीले पानी की बड़ी झील। जैसे पन्ना–नीलम को पिघलाकर बनाई गयी हो। उसमें तैरते ब्राहिमी बत्तख, राजहंस और प्रवासी पक्षी। ऐसी झील से मिलने जब सफ़ेद बादल आते हैं तो आपको अपने में बाँध लेने वाला एक अभिराम दृश्य उभरता है। आपने भी बाबा नागार्जुन की कविता पढ़ी ही होगी.......

"बादल को घिरते देखा है......
तुंग हिमालय के कंधों पर
छोटी बड़ी कई झीलें हैं,

उनके श्यामल नील सलिल में
समतल देशों से आ–आकर
पावस की ऊमस से आकुल

तिक्त–मधुर बिषतंतु खोजते

हंसों को तिरते देखा है
बादल को घिरते देखा है

ऐसा लगता है कि बाबा नागार्जुन ने यह कविता इसी झील के किनारे बैठे इसे निहारते हुए लिखी हो चाहे वह हिमालय की बात कर रहे हैं।

यह खारे पानी की झील है, जो कि आधे से थोड़ी ज्यादा चीन की सीमा के अन्दर और बाकी हमारे देश भारत की सीमा के अन्दर है। आज के समय में लदाख के मुख्य शहर लेह की तरफ़ से लगभग 5200 मीटर की ऊँचाई वाले चांग ला दर्रे को पार करके टांगचे़ के रास्ते इस झील तक जाया जाता है। टांगचे़ नदी के किनारे बसा टांगचे़ गाँव, 40–50 घरों का एक छोटा–सा गाँव है। यहाँ बहुत ज़्यादा बर्फ़–पाला के लगातार जमते और पिघलते रहने से चट्टाने टूटती हैं और छोटे अनगढ़े पत्थरों का मलबा भारी मात्रा में बनता रहता है। ज़मीन के अन्दर कई किलोमीटर लम्बी दरारें हैं जिनके फिसलते रहने से यहाँ भूकम्प और जमीन का धँसना होता रहा है। इन दरारों को भूविज्ञान की भाषा में भ्रंश कहते हैं। इस इलाके से "कराकोरम भ्रंश" गुजरता है।

बरसाती पोखर के सूख जाने पर उनके अन्दर जिस तरह की ढेर सारी चिकनी मिट्टी और उसके साथ बजरी,

रेत, छोटे पत्थर, छोटे शंख/घोंघे, लकड़ी के टुकड़े आदि का ढेर दिखाई देते हैं वैसे ही बजरी–रेत वाली चिकनी मिट्टी के 40–50 मीटर ऊँचे ढेर टांगचे़ गाँव में भी मिलते हैं। ये ढेर ही बताते हैं कि यह पूरी घाटी कभी एक झील रही होगी। नदियों वाले गोल पत्थर, ज्यादा मोटी रेत के अलावा नदी के पानी के अन्दर एक पत्थर के लगातार दूसरे पत्थर पर घूमने से बनने वाले गड्ढेदार पत्थर भी पूरी घाटी में मिलते हैं। आज की नदी तल से 400 मीटर ऊपर भी! कृत्रिम उपग्रह से लिए गए। इस इलाके के चित्र में कम्प्यूटर पर हमने उस ऊँचाई तक पानी भरा जिस ऊँचाई के चिकनी मिट्टी के जमाव मिलते हैं तो यह पूरा इलाका एक बड़ी झील बन गया और जो आज की पंगोंग छो झील से जुड़ा हुआ था। यानी कि यह पूरा इलाका आज की पंगोंग छो झील ही था।

रेडियो से कृत्रिम उपग्रह की जानकरी होने की बात कहकर उन्होंने मेरी तरफ़ गुगली फेंकी, 'कितने समय पहिले थी ई झील वहाँ?'

आप जब विज्ञान के कार्यक्रम सुनते हैं तो जानते होंगे कि करोड़ों साल पहले दबे पेड़–पौधों के सड़ने से ही कोयला बनता है। यह कोयला, अपने चचेरे अमीर भाई हीरे के तरह ही कार्बन नाम के तत्व से मिलकर बना होता है। जब पेड़–पौधे जिन्दा थे तो वह हवा और मिट्टी से पोषक तत्व लेते थे जैसे हम लोग भोजन से लेते हैं। कैल्सियम, फॉस्फ़ोरस और ऐसे ही कार्बन भी। इससे ही हमारा, सभी जन्तुओं और पेड़–पौधों का शरीर बनता है। हड्डी में दर्द की शिकायत लेकर डॉक्टर के पास जाने पर वह कभी कहता है न कैल्सियम की कमी हो गयी है। दूध, दही लीजिए.... फलाना चीज खाइए। तो जो हम खाते–पीते हैं उसी से हमें पोषक तत्व मिलते हैं। ऐसे ही हमारे शरीर को कार्बन भी प्राप्त होता है। राम निहाल जी, हम जो कुछ खाते हैं उसे हमारे शरीर की मशीन मुख्यतः ग्लूकोज़ में बदल देती है। तभी तो कोई बीमार होकर अस्पताल में भर्ती होता है तो उसके खाना ना खा पाने पर उसे ग्लूकोज़ चढ़ाया जाता है। यह ग्लूकोज़ कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से मिलकर ही बनता है। कार्बन का एक गुण है कि इसके ख़ास प्रकार के अणु धीरे–धीरे ख़त्म होते जाते हैं। जितने समय में यह ख़ास प्रकार के अणु पहले के आधे रह जाते हैं, उतने समय को इसकी "अर्द्ध आयु" यानी आधी उम्र कहते हैं, जो लगभग 5 हज़ार साल है। किसी भी प्राणी के शरीर में कार्बन पूरे जीवन भर बनता और जमा होता रहता है। मरने पर इस जमा कार्बन से ख़ास प्रकार के अणु ख़त्म होना शुरू हो जाते हैं। अपने गुण के अनुसार ये धीरे–धीरे कम होते हुए पहले के आधे रह जाते हैं। इस कार्बन मात्रा के हिसाब से हम बताते हैं कि कोई चीज कितनी साल पुरानी है। विज्ञानियों की भाषा में कहूँ तो इस आयु–निर्धारण या कालानुक्रम को "रेडियो कार्बन कालानुक्रम" कहते हैं। इसकी सबसे नयी तकनीक जिसके द्वारा वस्तु में नगण्य मात्रा में भी कार्बन होने पर आयु का पता किया जा सकता है उसे "त्वरित द्रव्यमान स्पेक्ट्रामिति" कहते हैं। इस रेडियो कार्बन विधि से तरह हम केवल 50–80 हज़ार साल पुरानी चीजों की उम्र का ही पताकर सकते हैं। इस तरह इलाके की चिकनी मिट्टी की उम्र का पता लगाया जाता है।

ज़्यादा पुरानी या बिना कार्बन वाले समानों की उम्र का पता अलग तरीकों से किया जाता है। सूरज की रोशनी पड़ने पर रेत के "क्वार्टज़ और फ़ेलस्पार" नाम के खनिजों के परमाणु के अन्दर के सूक्ष्मतम कण रोशनी के सूक्ष्म कणों को अपने अन्दर ले लेते हैं। रेत के ऊपर रेत पड़कर दब जाने से यह संकेत सुरक्षित रहते हैं। उस अन्दर की रेत तक लोहे के कुछ इंच के पाइप डालकर रेत को सूरज की रोशनी से बचाते हुए एक खास प्रयोगशाला में लाते हैं जहाँ केवल लाल रोशनी वाले कक्ष में जाँचते हैं और हिसाब लगाकर वह समय पता कर लेते हैं जब इस पर आख़िरी बार सूरज की रोशनी पड़ी थी। इसका वैज्ञानिक नाम "प्रकाशिक उद्दप्ति संदीप्ति कालानुक्रम" है। इससे इलाके में पाए गए नदी की रेत की उम्र का पता लगाया जाता है।

अब एक शोध यह बतलाता है कि आज से 40 हज़ार साल पहले से टांगचे़ नदी थी। फिर पूरे लदाख हिमालय में खूब ठण्डा था जिससे खूब बर्फ़ हुई और हिमनद खूब फैले थे। लगभग 22–9 हज़ार साल पहले जलवायु बदली और तब यह नदी खूब इठलाती, बलखाती और चट्टानों को काटती हुई बहा करती थी। 9 हज़ार साल पहले ज़मीनी दरारों के हलचल से पहाड़ों में अटका हुआ भारी मात्रा में मलवा गिरकर नदी के रास्ते में आ गया जिससे यहाँ पानी रूकने से झील बन गई, जो 5 हज़ार साल पहले तक रही। यह एक पूरी बड़ी झील भी रही हो सकती है और आपस में जुड़े हुए कुछ पोखर भी।

एक टीले में कई दांत, जबड़े, रीढ़ और हाथ–पैर की हड्डियाँ, खाल के कुछ टुकड़ों के साथ मल के गोले मिले हैं। यह सब उन ख़रगोशों, छूछंदरों, छिपकलियों, चिड़ियाओं के हैं जो यहाँ बसेरा करते होंगे। साथ ही लड़की के कई टुकड़े मिले हैं। इन सबकी आयु लगभग 3 हज़ार साल है। यह सब मरने के बाद ज्यादा समय तक खुली हवा में नहीं रहे होंगे नहीं तो सड़कर ख़त्म हो गए होते। किसी माँस खाने वाले जानवर या चिड़िया के मार डालने के कुछ समय बाद ही ये मिट्टी से दब गए होंगे। ऐसा अचानक आई बाढ़ से ही हो सकता है। टीले की बनावट में ज्यादा रेत, गाद, रेत में तिरछी धारियाँ हैं। यह सब बनावट बाढ़ के बंधे में मिलती हैं। इन सब से यह पता लगता है कि 3–4 हज़ार साल पहले यहाँ अचानक बाढ़ आई होगी।

राम निहाल जी जानते हैं यह सब पता करने से फ़ायदा यह है कि हम इस काम से इस इलाके में बाढ़, सूखा, गर्मी की भविष्यवाणी कर सकते हैं। मैंने आपके जो 30–35 सालों से लगातार एक समय में आने वाले ग्राहक की बात का उदाहरण दिया था उसको याद करके समझिए। अगर ठीक इसी तरह पहले भी यहां निश्चित सालों के बाद बाढ़ आई है तो आगे भी आएगी। इस इलाके में बाढ़ उस समय आई जब पछुवा या पुरवाई बहुत ताकतवर थीं। जैसे एक शोध अध्ययन में पता चला है कि 11 हज़ार साल पहले पंगोंग छो झील में पानी का स्तर बहुत ज्यादा बढ़ गया और पानी टांगचे़ घाटी को बह चला जिससे घाटी में प्रलयंकारी बाढ़ आ गयी थी। झील में पानी का स्तर बढ़ जाने का कारण ताक़तवर पुरवाई का हिमालय–पार यहाँ तक पहुँचकर खूब बारिश करना रहा। साथ ही यहाँ की ज़मीन के अन्दर की गहरी दरार जिसका नाम मैंने आपको "कराकोरम भ्रंश" बतलाया उसमें हुई हलचल से भी पंगोंग छो झील इस तरफ़ बह निकल सकती है।

आबो हवा या जलवायु के कई सारे हालात जैसे सूरज का ताप, हवा चलने की तेजी, हवा की गरमाहट या ठंडापन, कितना पानी बारिश से मिल रहा है, कितना पानी आसपास की बर्फ़–हिमनद के कम या ज्यादा पिघलने से मिल रहा है, बारिश ज़्यादा हो रही है कि भाप ज्यादा बन रही है, इन सबके लिए झीलें बड़ी संवेदनशील होती हैं। उनमें कई तरह के बड़े–छोटे बदलाव आ जाते हैं पानी के स्तर से लेकर झील में मिलने वाले शंख/घोंघा/गनेल के प्रकारों में तक। पंगोंग छो में इन सबपर आधारित कुछ शोध हुए हैं जो इसके पानी के इतिहास में प्रकाश डालते हैं।

पंगोंग छो झील को देखने से ही पता चल जाता है कि कभी इसके पानी का स्तर आज से ज्यादा रहा है। इसके किनारों पर जमा मोटी मिट्टी और परतदार रेत की सतहों पर इसके पहले के किनारों या पुराने तटों की सीमाएं साफ़ देखी जा सकती हैं। पुराने तटों की सीमाएं या पुरा तट रेखाएं आज के जल स्तर से सवा (1.25) मीटर, साढ़े तीन मीटर से ऊपर (3.8), साढ़े चार मीटर से ऊपर (4.8), 6 मीटर,19 मीटर, 53 मीटर और 79 मीटर तक देखी गयी हैं। यह बदलाव पिछले 30 से 40 हज़ार सालों की बातें हैं।

उच्च तकनीक से तैयार झील के नक्शे, कालानुक्रम और इसके किनारों पर जमा हुई मिट्टी में मिले घोंघों पर आधारित शोध बतलाते हैं कि आज से 2 से 1 हज़ार साल के बीच झील का स्तर 6 मीटर नीचे आया है। झील पर इन्हीं तरीकों के साथ हुआ एक दूसरा शोध अध्ययन भी कुछ ज्यादा बारीकी के साथ ऐसे ही मिलती–जुलती बात कहता है। अध्ययन से प्रकाशित शोध पत्र बताता है कि आज से ढाई हज़ार से दो हज़ार साल पहले झील का स्तर डेढ़ से 3 मीटर ऊँचा था। वहीं आज से एक हज़ार साल के कुछ पहले यह तीन से साढ़े तीन मीटर ऊपर रहा। साथ ही इस समय पानी का खारापन भी बहुत कम था। पिछले 1 हज़ार साल में झील के पानी के स्तर में लगभग साढ़े तीन से छह मीटर की गिरावट आई है।

पिछले 1 हज़ार साल में झील के पानी के स्तर में यह कुल गिरावट तो आई है, पर ऐतिहासिक दस्तावेज बताते हैं कि पिछले दो–ढाई सौ सालों झील के जल स्तर में बढ़त और गिरावट के दौर चलते रहे हैं। जर्मन अन्वेषक साक्लेवाइज ने सन् 1841 से पहले जल स्तर के लगातार ऊँचे रहने की बात लिखी है। गाडविन ऑस्टन जो एक प्रख्यात टोपोग्राफर और अन्वेषक रहे हैं, ने सन् 1863 में झील स्तर लगभग 3 मीटर ऊपर तक बढ़ा हुआ दर्ज किया है। महान भूगोलवेत्ता, अन्वेषक और यात्री स्वेन हेडिन ने पंगोंग छो झील के उत्तरी किनारे के यात्रा मार्ग से कभी 10 मीटर ऊपर जल स्तर होने की बात लिखी है। इसी तरह,

हनटिंग्टन ने सन् 1905 की अपनी रिपोर्ट, जो बहुत पढ़ी जाने वाली वैज्ञानिक रिपोर्ट है, में झील के जल स्तर का सन् 1875–85 के दौर की तुलना में तीन से साढ़े तीन मीटर ऊँचा होने की बात दर्ज की है।

अभी हाल के समय में बादल फटने जैसी घटनाएं लदाख में हुई हैं, जिसमें सैकड़ों जाने चली गयीं। इसके साथ ही लदाख की झीलों में लगतार पानी सूखने जैसी घटनाएं भी हो रही हैं। छ़ोकर झील इस बात का बहुत बड़ा उदाहरण है। इस क्षेत्र में हिमनदों की होने वाली गतिविधियों से बहुत भारी मात्रा में कंकड़–बजरी–बालू के ढेर बनके पड़े रहते हैं और आज भी बनते ही रहते हैं। इसमें ज़मीनी दरारों की हलचलों की भी अहम भूमिका रहती है। अचानक से, 12–24 घंटे जैसे कम समय अंतराल में भारी–भरकम बारिश हो जाने की असामान्य और चरम घटनाओं का बार–बार होना इस इलाके में अत्यधिक मलवा प्रवाह कर देता है जो कि भारी विनाश का कारण बनता है। हमको ऐसी विभीषिका लाने वाली असामान्य और चरम बारिश की घटनाओं के होने के समय में कोई निश्चित अंतराल है कि नहीं यह पता करने के लिए ही पुराजलवायु शोध की बहुत ज़रूरतें हैं।

राम निहाल जी, आज तो मैंने आपका बहुत समय ले लिया। हम सूखी झीलों की चिकनी मिट्टी–बजरी–रेत, उसमें दबे घोंघे, फूल–पेड़–पौधों के अवशेषों से पुराजलवायु के मिज़ाज को कैसे पता करते हैं यह फिर कभी बताऊँगा।

अरे साहब, आपने हमारा क्या समय लिया, बल्कि, हमने आपका समय लिया। आपने इतनी कुछ नयी जानकारी दी हमको बहुते अच्छा लगा।

आपस में नमस्कार कहने के बाद शायद राम निहाल जी को कुछ समझा पाया होगा, इस उम्मीद के साथ में घर को आ गया।

सन्दर्भः

फर्त्याल, बी., सिंह, आर., कोठारी, जी., 2015, पेलियो–जियोग्राफ़ी, पेलिइयोक्लामेटोलॉजी, पेलियोइकोलॉजी 422, 11–22।

श्रीवास्तव, पी., कुमार, ए., सिंह, आर., आदि, 2020, करेंट साइंस 119(2), 219–231।

सागवाल, एस., कुमार, ए., चौधुरिमयुम, पी.एस., आदि, द होलोसीन।

अथः श्री यमुना उवाच

सुमन रैना
स्वतंत्र पत्रकार, चंड़ीगढ़

एक रात स्वप्न में यमुना आई, आहत, क्षुब्ध और रूआंसी। मैंने हाथ पकडकर सहारा दिया और इस व्यथा का कारण जानना चाहा। दोनों हाथ कानों पर रखते हुए बोली क्या तुम नहीं सुन रही हो, हर तरफ एक ही शोर है कि यमुना ने मचाई तबाही, यमुना के कारण जन–धन की हानि, यमुना के कारण जल प्रलय, यमुना में डूब रही है दिल्ली। मैं! पर्वत राज कालिंद की पुत्री कालिन्दी प्राणी जगत के मंगल की कामना और धरती की प्यास बुझाने के लिये स्वर्ग से धरा पर उतरी थी। लेकिन आज मैं एक गंदा नाला बनकर रह गयी हूँ। कभी स्वस्थ, सुंदर स्वच्छ सरिता थी। आज मुझे प्राणदायिनी न मानकर मृत्यु वाहिनी कहा जा रहा है। बोलते– बोलते उसका गला रुंध गया और आँसु छलक पड़े। मैंने पानी का गिलास पकड़ाते हुए उसे सहज करने का प्रयास किया। उसने गिलास तो पकडा मगर पीने में झिझक थी। मैंने उसका आशय समझकर आश्वस्त किया, घबराओ मत यह नदी नीर नहीं बल्कि आर.ओ. द्वारा परिष्कृत शुद्ध जल है। उसने घूंट भरा और बोली मैं हमेशा से ऐसी नहीं थी। उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू तक मेरा जल भी निर्मल और नीला था जो अब काला हो गया है। क्या तुम मेरी कथा और व्यथा सुनना चाहोगी, कि मैं कौन हूँ, कहाँ से आई और मेरा स्वरूप क्या था, आज क्या से क्या हो गया है? जैसे ही मैंने स्वीकृति में सिर हिलाया, मोबाईल में रखा अलार्म बज उठा। मैं अनमने से उठी, मगर यमुना को जानने समझने की जिज्ञासा जाग उठी थी। आइये जानते हैं यमुना की कथा और व्यथा को।

कथा

हमारे प्राचीन इतिहास या आध्यात्मिक साहित्य की बात करें तो ऋग्वेद, यजुर्वेद, रामायण, महाभारत और पुराणों में यमुना का जिक्र आया है, अलग–अलग समय और स्थान पर इसे अलग–अलग नामों से जाना गया है। वेदों में अक्सर गंगा और यमुना का वर्णन एक साथ किया गया है। यमुना का शाब्दिक अर्थ जुडवां भी है। महाऋषि बाल्मिकी इसे यामन पर्वत से निकलने वाली नदी यमुना बताते हैं। कहते हैं कि असित नाम के ऋषि ने सबसे पहले यमुना की खोज की थी इसीलिए इसे असित भी कहते हैं। हमारे लोकगीतों, लोक परंपराओं और मान्यताओं में यह नदी न होकर पूजनीय देवी मां के रूप में वर्णित है। देवी यमुना, सूर्य की पुत्री, धर्मराज यम की बहन यमी और भगवान श्रीकृष्ण की पटरानी के रूप में वंदनीय है।

पुष्टि मार्ग के संस्थापक वल्लभाचार्य ने श्री यमुनाष्टकम की रचना की और इसमें यमुना के तीन रूपों आध्यात्मिक, भौतिक और देवी रूप का वर्णन किया है। चैत्र नवरात्री की षष्ठी को मथुरा में यमुना जी का जन्मदिन मनाया जाता है। जमुना भी यमुना जी का अन्य प्रचलित नाम है। कथा है कि सात ऋषियों की तपस्या के फलस्वरूप यह पहली बार धरती पर आधुनिक उत्तराखण्ड राज्य में स्थित हिमाच्छादित बंदरपूंछ की चोटियों के पास कालिंदी पर्वत (जो कि समुद्रतल से 6102 मीटर की ऊंचाई पर है) से उतरी, इसलिए कलिंदजा कहलाई। बृजवासी कृष्ण भी इसे कालिंदी के नाम से पुकारते हैं, इस भूभाग में आज भी यमुना की पूजा मां कालिंदी के रूप में होती है। आज के समय में यमुनोत्री ग्लेशियर को यमुना का उद्गम स्थल माना जाता है। अपने उद्गम के पश्चात यह विशाल हिमनदों और हिंगारो में अप्रकट रूप में बहती है। यमुनोत्री नामक स्थान पर इसकी धारा प्रकट होती है। यहां देवी यमुना को समर्पित यमनोत्री मंदिर (3293 मीटर की ऊँचाई) है। श्रद्धालुओं के लिए यह चारधाम यात्रा का पहला एवं अनिवार्य पड़ाव है। इसी क्षेत्र के पास ही सूर्यकुंड और गौरी कुंड नाम के दो गर्म पानी के चश्मे हैं जिसमें चावल और आलू को उबालकर मंदिर में प्रसाद के रूप में चढ़ाने की रस्म है। मेगस्थनीज, सेल्यूकस निकेटर जैसे विदेशी यात्रियों के यात्रा वृतांतों में भी यमुना का वर्णन मिलता है। प्राचीन कालीन मग्ध, शुंग, कुषाण वंश भी इसी नदी के किनारे पनपे। पाटली पुत्र (पटना) और मथुरा जैसी राजधानियां भी इसी के किनारे विकसित हुई।

यमुनोत्री के बाद यह पहाड़ी घाटियों और दर्रों को पार

करती हुई यह दून घाटी में पहुंचती है। आगे बढ़ते हुए उत्तराखण्ड में इसे हनुमान गंगा, बडयार गाड, कमल गंगा, बर्नी गाड, अगलार, और आसन नामक सहायक नदियाँ मिलती हैं। टिहरी गढ़वाल के ईलाके से निकलकर यह देहरादून होते हुए हिमाचल के पौंटा साहब पहुंचती है। यमुना में मिलने वाली टोंस, गगरी, और बाटा नदियाँ, हिमाचल प्रदेश से आती हैं। टोंस बारहमासी नदी है और यमुना से लगभग दो गुना जल लेकर यह नदी कालसी नाम के स्थान पर यमुना में मिलती है। यहां से यह उत्तर प्रदेश और हरियाणा की सीमा के साथ–साथ बहती है। हरियाणा के यमुनानगर से दिल्ली में आती है। हरियाणा से सोम्ब, दिल्ली में साहिबी नदी, (नजफगढ़ नाला), कथा, (सूख चुकी है) हिंडेन, करवान और गंभीर आदि नदियाँ या तो सूखी हैं या प्रदूषित नाले हैं जो यमुना में मिलते हैं। यहां से मथुरा, आगरा, कालपी और इटावा होते हुए प्रयागराज पहुँचती है। नदी के निचले भाग में चम्बल, सिंध, बेतवा, केन, सेंगर और ससुर खेदरी यमुना को पुनः जीवन प्रदान करती है और इटावा में पंचनदी (पांच नदियों की मिलन स्थली) भी बनाती हैं। यह गंगा के समानांतर बहती हुए 1376 किलोमीटर की यात्रा करते हुए गंगा यमुना दोआब क्षेत्र का निर्माण करती है। 60,500 वर्ग किलोमीटर का यह क्षेत्र सघन आबादी वाला अत्यंत उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी वाला भू–भाग है। यहां सभी तरह की खेती होती हैं। अच्छी जलवायु और यातायात के उत्तम साधन उपलब्ध हैं। उद्योग धंधे भी खूब हैं। यमुना गंगा की सबसे बड़ी सहायक नदी है। प्रयागराज में यह गंगा और अदृश्य सरस्वती के साथ त्रिवेणी संगम बनाती है। यहां हर बारह वर्ष के बाद महाकुंभ का मेला लगता है जिसमें देश–विदेश से असंख्य श्रद्धालु आते हैं। यमनोत्री मंदिर, पांवटा साहिब गुरूद्वारा, सूर्यकुंड मंदिर, यमुनानगर, करनाल, (कर्ण की नगरी) गजापीर (प्रसिद्ध दरगाह) निगम बोध घाट (भगवान ब्रह्मा द्वारा पवित्र किया गया शमशान स्थल), वृंदावन (कृष्ण के बचपन और राधा रास की स्थली) मथुरा (कृष्ण जन्मभूमि) पटना साहिब और इलाहाबाद संगम इत्यादि पवित्र धार्मिक एवं पौरणिक स्थल हैं।

व्यथा

यमुना नदी युगों –युगों से इस धरती को पुष्पित प्लवित करती रही है, इसने धरती को शस्य श्यामला बनाया है। वन उगाये हैं, जीव–जन्तुओं को आश्रय दिया है, पर्यावरण को संरक्षित किया है। जलवायु चक्र को सुनियोजित करने में मदद की है। अन्न और जल के रूप में मानव का पोषण करती रही है। एशियाई हाथियों एवं कई वन्य प्रजातियों को भी आश्रय देती है। लेकिन आज तो इसके अपने अस्तित्व पर ही बन आई है। दिल्ली एवं इसके आगरा तक के भाग को लोग अक्सर मृत नदी कहते हैं क्योंकि इस भाग में पानी नहीं बल्कि राजधानी क्षेत्र का सीवेज बहता है। इसलिए आज यमुना देश की सबसे प्रदूषित नदियों में से एक है। आइये विचार करें कि क्यों मर रही है यमुना ? इस जुलाई की बाढ़ तो मरती हुई नदी की चेतावनी भर है। पहली नजर में लगता है कि नदी शहर को डूबा देने पर आमादा है। हम परेशान होते हैं कि यमुना लाल किले पहुंच गई लेकिन भूल जाते हैं कि कुछ सौ वर्ष पहले तक वह यहीं बहती थी। 19वीं शताब्दी के शुरू तक यमुना दो किलों सलीम गढ (1546 में सलीमशाह सूरी द्वारा बनवाया गया) तथा लाल किला (1648 में शाहजहाँ द्वारा) के बीच में से बहती थी। कुछ पुरानी पेंटिंग दिखाती हैं कि यमुना लाल किले से सटकर बहती थी। किसी ने सच ही कहा है नदी हमारे घर नहीं आई हम ही उसके घर में घुसपैठ किये हुए हैं।

वह तो हमें हमारी हद की पहचान करवाने आई है। वह तो अपने बाढ़ क्षेत्र एवं आर्द्र भूमि पर हुए अतिक्रमण पर बुलडोजर चलाने आई है, हजारों टन कचरा जो हम उसमें हर रोज फेंकते हैं वह तो उसकी सफाई करवाने आई है। आखिर कब तक नदी हमारे लालच को सहन करे? बहुत अधिक वर्षा और बाढ़ निसंदेह प्राकृतिक घटनाएं हैं लेकिन, कुदरत को ध्यान में रखकर अपनाई गई जीवन शैली एवं विकास की नीतियां इन घटनाओं और इनसे होने वाले नुकसान को अवश्य ही कम कर सकती हैं।

भारत में लगभग 570 लाख लोग यमुना के पानी पर निर्भर हैं। यह जल सिंचाई, घरेलू खपत और उद्योगों में प्रयोग होता है। हरियाणा दिल्ली और उत्तर प्रदेश में इसका जल सिंचाई के काम आता है। अपने उद्‌गम से लेकर, पहाड़ी क्षेत्रों में तो इसमें स्वच्छ निर्मल जल बहता है। वह गुणवत्ता में किसी भी बोतल बंद पानी से कमतर नहीं है। हथिनी कुंड बैराज पर इसमें से दो नहरें, पश्चिमी यमुना नहर हरियाणा और पूर्वी यमुना नहर उतर प्रदेश में सिंचाई के लिए बनाई गई हैं। तीसरा भाग (अक्सर बहुत कम पानी) नदी के रूप में दिल्ली की तरफ बहता है। इसके बाद यमुना

बरसाती नदी नालों पर निर्भर हो जाती है। नदी के जिंदा रहने के लिए इसमें ताजे जल के निरंतर बहाव की जरूरत होती है। दिल्ली पहुंचने से पहले इसमें यमुना नगर, करनाल और पानीपत का औद्योगिक, एवं नगरीय अपशिष्ट तथा कृषि के लिए रासायनिक खाद और कीटनाशकों के उपयोग के कारण भूमि में रसायन मिल जाते हैं। वजीराबाद से कुछ पहले पल्ला गांव में यमुना दिल्ली में प्रवेश करती है। वजीराबाद में नदी का सारा पानी नहर द्वारा उठाकर जलशोधन संयत्रों में उपचार के लिए भेज दिया जाता है ताकि दिल्ली के लिए जल की आपूर्ति हो सके। दिल्लीवासियों की 70 प्रतिशत से अधिक जल आपूर्ति इसी नदी से होती है। वजीराबाद बैराज से ओखला बैराज तक 22 किलोमीटर का रास्ता यमुना दिल्ली में तय करती है। यह इसके कुल सफर का दो प्रतिशत से भी कम है लेकिन यह यहां पर अपने प्रदूषण का 80 प्रतिशत भाग इक्ट्ठा करती है। यहीं से नदी की बदहाली शुरू हो जाती है। गर्मी के मौसम में नदी में ताजा जल तो नाम मात्र के लिए ही बचता है, अधिकांशतः सीवेज ही बहता है। दिल्ली में इसमें लगभग तीस नाले गिरते हैं। नज़फगढ़ नाला और शाहिरा वाला नाला इसके प्रदूषण के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। दिल्ली में बड़ी मात्रा में घरेलू अपशिष्ट जल यमुना में बहता है, इसमें डिटर्जेंट, कपड़े धोने के रसायन, और फॉस्फेट यौगिकों की मात्रा बहुत अधिक होती है। सर्फेकटेंट और फॉस्फेट यमुना में बनने वाली सफेद जहरीली झाग के लिए जिम्मेवार माने गये हैं। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में यमुना जिस क्षेत्र से जल ग्रहण करती है वहां तेजी से औद्योगीकरण हुआ है। इसके कारण जनसंख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। यहाँ के पानी में भारी धातुओं के साथ, विशेषतः आयरन की मात्रा सीमा से कहीं अधिक है और यह स्वास्थ्य के लिए चिंताजनक स्थिति है। दिल्ली में प्रतिदिन जितना सीवेज उत्पन्न होता है, संशोधन की क्षमता उससे कहीं कम है इस तरह हर दिन नदी में अनुपचारित या आंशिक रूप से उपचारित सीवेज मिल जाता है। मूर्ति विसर्जन एवं अन्य तीज त्यौहार के समय नदी में सीसा, क्रोमपेंट, प्लास्टर ऑफ पेरिस, पॉलिथिन बैग, धातु पॉलिश एवं हर तरह के प्लास्टिक का कचरा इत्यादि मिलकर नदी का दम घोटते हैं। इससे नदी जल में ऑक्सीजन की मात्रा न के बराबर रह जाती है। इसके अतिरिक्त यमुना बेसिन के 53 प्रतिशत भाग पर कृषि होती है, जिसके कारण बहुत से कीटनाशक, और रासायनिक खादों के खतरनाक रसायन, न केवल नदी को नुकसान पहुंचाते हैं बल्कि वातावरण को भी प्रदूषित करते हैं तथा नदी को रसायनों से भरा नाला बनाते हैं। जिसके चलते नदी में पनपने वाले जलीय जीवों की प्रजातियां लुप्त हो रही हैं। यूरिया अमोनिया में बदल कर जल में ऑक्सीजन की मात्रा को बहुत कम कर देता है। जैविक खेती और विकल्प के रूप में स्वास्थ्यवर्धक मोटे अनाजों (मिलेट्स) को उगाकर परंपरागत अधिक जल और रसायनिक खाद पर आधारित अनाजों की खेती को कम किया जा सकता है। दिल्ली से आगे ब्रज में यमुना की स्थिति कुछ बेहतर नहीं है। यहाँ पर भगवान श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पूजा के माध्यम से प्रकृति संरक्षण का और कालिया मर्दन द्वारा प्रदूषण रहित यमुना का संदेश दिया था। आज यहाँ का पानी न तो आचमन के काबिल बचा है न ही भगवान के चरण पखारने के। अनुपचारित नालों का पानी यमुना में जहर घोल रहा है। मथुरा और आगरा में भी यमुना में 60 से अधिक नाले सीधे नदी में गिरते हैं। सर्वेक्षण बताते हैं कि नदी का प्रदूषण विश्व धरोहर ताजमहल के लिए भी खतरा बन गया है। ताज के ढांचे की संरचनात्मक अखंडता और उसकी सफेद संगमरमर की भव्यता को बचाएं रखने के लिए जरूरी है कि नदी में स्वच्छ जल निरंतर एवं वर्ष भर बहे। यमुना को पुर्नजन्म चंबल नदी के मिलने पर ही मिलता है। इटावा का पंच नद इसमें सहायक है। यहां से यह प्रयागराज में अपनी यात्रा पूर्ण करती है।

दिल्ली की बाढ़ और यमुना

क्या यमुना के प्रदूषण और दिल्ली में आयी बाढ़ में कोई रिश्ता है। 'नेचर' नामक जरनल के वायुमंडलीय विज्ञान, भाग में 1 जुलाई 2015 के अंक में बताया गया है कि 2013 में चीन के दक्षिण–पश्चिमी भाग में आई भयावह बाढ़ का संबंध वहां तेजी से हुए औद्योगिकीकरण एवं उसके फलस्वरूप पैदा हुए वायु प्रदूषण से है। पैसिफक उत्तरी–पश्चिमी प्रयोगशाला एवं उनके सहयोगी अनुसंधानकर्ताओं का मानना है कि गंभीर वायु प्रदूषण के कारण अत्यंत छोटे कण (ऐरोसोल) दिन के समय सूर्य से गर्मी लेकर, वायुमंडल को स्थिर कर देते हैं और स्थानीय वायु की गति को दिन के समय अवरूद्ध कर देते हैं। लेकिन यह फिनॉमिनानमी भरी और गर्म हवा को पर्वतीय क्षेत्रों में ले जाता है और रात के समय अचानक और अत्यधिक तेज वर्षा और बाढ़ का कारण बनता है। अनुसंधानकर्ताओं ने यह पाया है कि भारत और

चीन में जहाँ आर्थिक विकास एवं शहरी जनसंख्या तेजी से बढ़ें है वहाँ गत दशक में क्षेत्रीय बाढ़ों और सूखे की घटनाओं की भयानकता और संख्या में वृद्धि हुई है। यह अध्ययन, प्रदूषण और गंभीर मौसमी बदलाव में संबंध स्थापित करता है। हम सब जानते हैं कि यमुना नदी के अधिकांश बेसिन क्षेत्र में तेजी से औद्योगीकरण हुआ और उसके फलस्वरूप शहरी जनसंख्या में भी वृद्धि हुई है, जो वायु और जल प्रदूषण को बढ़ाती है। विकास का ऐसा मॉडल खोजना होगा जो कुदरत और इसके प्राणियों दोनों में तालमेल बैठा सके। राजधानी के घरों, दफ्तरों, गलियों और बाजारों में यमुना की दस्तक बताती है कि हमारे शहरों के निर्माण की योजना बनाते समय हम नदी के अस्तित्व को ही भूल गये या हमने उसे अनदेखा कर दिया। नदी की अपनी एक संरचना होती है, उसकी अपनी धारा, या पानी, तट, बहाव, गहराई, बहाव क्षेत्र, जल ग्रहण क्षेत्र, बाढ़ क्षेत्र और आद्र क्षेत्र होते हैं। यह एक पूरी प्राकृतिक प्रणाली यानी सिस्टम होता है। नदी के किसी भी भाग के साथ छेड़छाड़ नदी को और उसके प्रभाव में आने वालों का नुकसान करती है। कहीं ऐसा तो नहीं कि इस बाढ़ का कारण नदी के बाढ़ क्षेत्र और आद्र क्षेत्र के साथ छेड़छाड़ हो। कायदों के अनुसार यमुना– किनारे आबादी की बसावट होनी ही नहीं चाहिये, अक्सर होने दी जाती है। चुनाव कोई भी लडे हर चुनाव में अवैध कालौनियों को वैध करवाने के नाम पर वोट लिए जाते हैं। सरकारी नोटिस आते हैं लोग उन्हें तो मैनेज कर लेते हैं लेकिन जब नदी कब्जा हटाने उतरती है तो यही हाल होता है जो हुआ है। दिल्ली में बाढ़ उन्हीं इलाकों में आई जो नदी का बाढ़ क्षेत्र या नमी वाला क्षेत्र था। बाढ़ क्षेत्र नदी का जीवन होता है। सन् 1978 की बाढ़ के सबक के रूप में दिल्ली में यमुना के लिए 10,000 हेक्टेयर का इलाका जो नजीरो के अंतर्गत छोड़ा गया था, लेकिन इसमें से 1000 हेक्टेयर में पक्का निर्माण ही नहीं हुआ बल्कि इसे रेगुलेटेड एरिया भी घोषित कर दिया गया है। इससे नदी का रास्ता छोटा हो गया और बाढ़ का पानी आबादी तक पहुंच गया। बाढ़ और बाढ़ क्षेत्र नदी की नैसर्गिक आवश्यकता है। नदी के किनारे वहाँ की जलवायु के अनुसार पेड़ पौधे लगाये जा सकते हैं, नदी के आसपास यदि खाली भूमि, जोहड़ और तालाब हों तो यह जल सोखने का काम करते हैं और बाढ़ का पानी आबादी वाले क्षेत्रों में पंहुचने से पहले ही धरती में समा जाता है। बाढ़ द्वारा नदी अपनी तल–छट की गंदगी हटाती है। कूडे के अंबार, नदी के किनारे पक्की संरचनाएं, एवं निर्माण कार्य द्वारा छोड़ा गया कचरा और नदियों में चल रहे अवैध खनन उसकी गहराई को कम करते है, यह सब बाढ़ के लिए जिम्मेदार हैं। भवन या औद्योगिक परिसर निर्माण के बाद मलबा अकसर नालों में या नदी में फेंक दिया जाता है जो इसका मार्ग अवरूद्ध करता है। किसी नदी प्रेमी ने सोशल मीडिया में कमेंट किया था कि नदी तो बाढ़ द्वारा हर साल खुद को साफ करती है यदि हम उसे दोबारा गंदा न करें तो वह साफ हो सकती है।

नदी किनारे बसे शहरों में जल निकासी की हालत चिंताजनक है। प्रदूषण की जो वर्तमान स्थिति है उसके लिए नये उपचार संयत्रों का निर्माण, एवं आधुनिक उन्नत उपचार प्रणाली विकसित हों। यह सुनिश्चित किया जाए कि नदी में किसी भी तरह का अनुपचारित घरेलू , औद्योगिक अपशिष्ट और सीवेज प्रवेश न करे। शहर के जल निकासी सिस्टम का आधुनिकीकरण हो। हर घर ड्रेनेज से जुड़े, नालों का रख–रखाव और हर वर्ष, वर्षा से पहले की सफाई सुनिश्चित हो। हमें भी घरों की सफाई के बाद या मकान निर्माण के बाद का कचरा नाली में फेंकने की आदत बदलनी होगी। दिल्ली में यमुना पर तीन बैराज और छब्बीस पुल हैं। निःसंदेह इनके निर्माण के पीछे जनकल्याण और पानी के उचित प्रबंधन की मंशा होती है। लेकिन यह नदी की प्राकृतिक धारा को अवरूद्ध करके, नदी की गहराई को कम करते है। इनके निर्माण के समय नदी विशेषज्ञों की राय के अनुसार नीति एवं संरचनाओं का निर्माण हो। सभी बैराजों और गेटों की देख–रेख का काम एक प्रशासनिक ईकाई के जिम्मे हो ताकि आपदा के समय निष्पक्ष समाधान खोजा जाए।

सरकारी एवं सामुदायिक स्तर पर नदी एवं इसके साथ जुड़े पर्यावरण के प्रति जागरूक, संवेदनशील एवं क्रियाशील होने की आवश्यकता है। नदी यमुना को मां का दर्जा दिया है तो हर विचार, हर योजना और उसका क्रियान्वयन इसके अनुरूप ही होना चाहिए। पुरानी कहावत है कि माता कभी कुमाता नहीं होती इसीलिए हमें ही हर स्तर पर कपूत होने से बचना है।

भारतीय क्षोभमंडल में बढ़ती नमी: जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में

अमरजीत विद्यार्थी
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

ग्लोबल वार्मिंग विश्व की एक ऐसी अनसुलझी समस्या बन गई है या यूं कहिए कि बनने जा रही है कि इसका समाधान किसी राजनीतिज्ञ, अधिकारी, संस्था या इसका विश्लेषण करने वाले वैज्ञानिकों के पास भी नहीं है। यदि समाधान है भी, तो विकसित देशों की नीतियां इस प्रकार की है कि समाधान लागू करते ही उनकी अर्थव्यवस्थाएं और सामाजिक ढांचे चरमरा जाएंगे। उन्नीसवीं सदी से शुरू हुई ये औद्योगिक गतिविधियां आज बढ़ी ही है, किसी भी प्रकार कम नहीं हुई है। तब से ही बढ़ती आ रही कार्बन–डाइ–ऑक्साइड को सोखते–सोखते ये वातावरण और हमारे महासागर भी अब ज़हरीले होने को तैयार हैं। इनसे भी अलग यदि हम औसत तापमान की बात करें तो हमारे महासागर और वातावरण दोनों में ये बढ़ रहा है अर्थात् ये गर्म हो रहे है। इनकी गर्मी इन तक सीमित हो तो शायद कोई बात न हो पर इनकी गर्मी पृथ्वी के सभी निवासियों को नए–नए रूपों में प्रभावित कर रही है। इसी कारण लू, चक्रवाती तूफ़ान और वर्षा की चरम घटनाओं की संख्या में वृद्धि देखने को मिल रही है। इन हो रहे बदलावों ने जनमानस के जीवन को एक अघोषित आपातकाल की ओर धकेल दिया है जहाँ हो रही घटनाएं एक–दो दिनों या वर्षों की देन नहीं है अपितु दो शताब्यिों का कथित बुद्धिजीवियों का कुप्रयास है। इन सभी परिवर्तनों में भारत अछूता नही है।

भारत को 80 प्रतिशत वर्षा की आपूर्ति ग्रीष्मकालीन मानसून से होती है और इसी मानसूनी वर्षा के पैटर्न में एक अजीब सा बदलाव देखने को मिल रहा है। उत्तरपूर्वी भारत में वर्षा के औसत में कमी देखने को मिल रही है वही दूसरी ओर रेगिस्तान और सूखे इलाकों में वर्षा बढ़ी है। इस सदी के दशकों में वातावरण में नमी के बढ़ने के संकेत मिले हैं जो पश्चिमी भारत के साथ ही लगभग पूरे भारत के ऊपर भी बढ़ता हुआ पाया गया है। चित्र 1 में पिछली सदी के बाद के दशकों और इस सदी के बीते दो दशकों का नमी और वर्षा का अंतर दिखाया गया है जिसमें हाल ही के दशकों में इनमें परिवर्तन देखने को मिला है। नमी जहां निचले, मध्य और ऊपरी क्षोभ मंडल में बढ़ी है वही वर्षा कही ज्यादा और कही कम हो रही है। ये बदलाव गर्म होते वातावरण को दिखाते हैं जिसमें गर्म होने पर नमी को धारण करने की क्षमता बढ़ जाती है। मध्य भारत में वर्षा की चरम घटनाएं खूब हो रही हैं जबकि औसत वर्षा का कई वर्षों का रुझान घट रहा है। वैज्ञानिकों ने पाया कि इन विनाशकारी घटनाओं को पर्याप्त मात्रा में नमी की आपूर्ति सोमाली की ओर से आने वाली तीव्र हवाएं कर रही हैं। बीते दशकों में ये हवाएं शक्तिशाली होती पाई गई हैं। ये वर्षा का असुंतलन ऐसे ही नही हो रहा है, इसके पीछे हर वो मौसमी पैरामीटर (जैसे कि तापमान, हवाओं की गति और दिशा तथा नमी आदि) ज़िम्मेदार है जो सामान्य वर्षा को भी लाता है। इन सब ही पैरामीटर्स में एक पर्याप्त बदलाव बीते दशकों में देखा जा रहा है। ये परिवर्तन एक दो सीजन/वर्ष के लिए नहीं है, अपितु जलवायु परिवर्तन के स्पष्ट सूचक बन रहे हैं जोकि पिछले तीस या उससे अधिक वर्षों के अध्ययन को ध्यान में रखकर घोषित किया जाता है। ये सभी बदलाव भारत की कृषि और अर्थव्यवस्था के लिए चुनौतियां है जो केवल भारत के बस की सुलझानी नहीं है। ये सभी को देखना होगा।

सरकारें अपनी वार्षिक बैठकें कर अपना दायित्व पूरा कर रही हैं। जीरो कार्बन की नीतियां जब तक सभी देश अपनाएंगे तब तक बहुत देर हो चुकी होगी। दो सदियों पूर्व प्रकृति पर प्रारंभ हुए इस विनाशकारी प्रयोग के परिणाम मिलने शुरू हो गए हैं, कहीं बढ़ता ग्लोबल तापमान और समुद्री जल का स्तर, कहीं घटती उपयोगी वायु और जल की गुणवत्ता इस पीढ़ी और आने वाली पीढ़ियों के लिए अभिशाप से कम प्रतीत नहीं हो रही है। हम अन्य ग्रहों पर जीवन की खोज में अरबों खर्च कर रहे हैं और जिस पृथ्वी पर एक ही जगह अनुकूल जल, वायु और अन्य उपयोगी साधन मिल रहे हैं उसको बर्बाद करने की हमने मानो ठानी हुई हैं। ये किसी समाज या देश का मुद्दा नहीं है अपितु पूरी पृथ्वी का है। हर एक प्राणी का चाहे वो मनुष्य हो या कोई

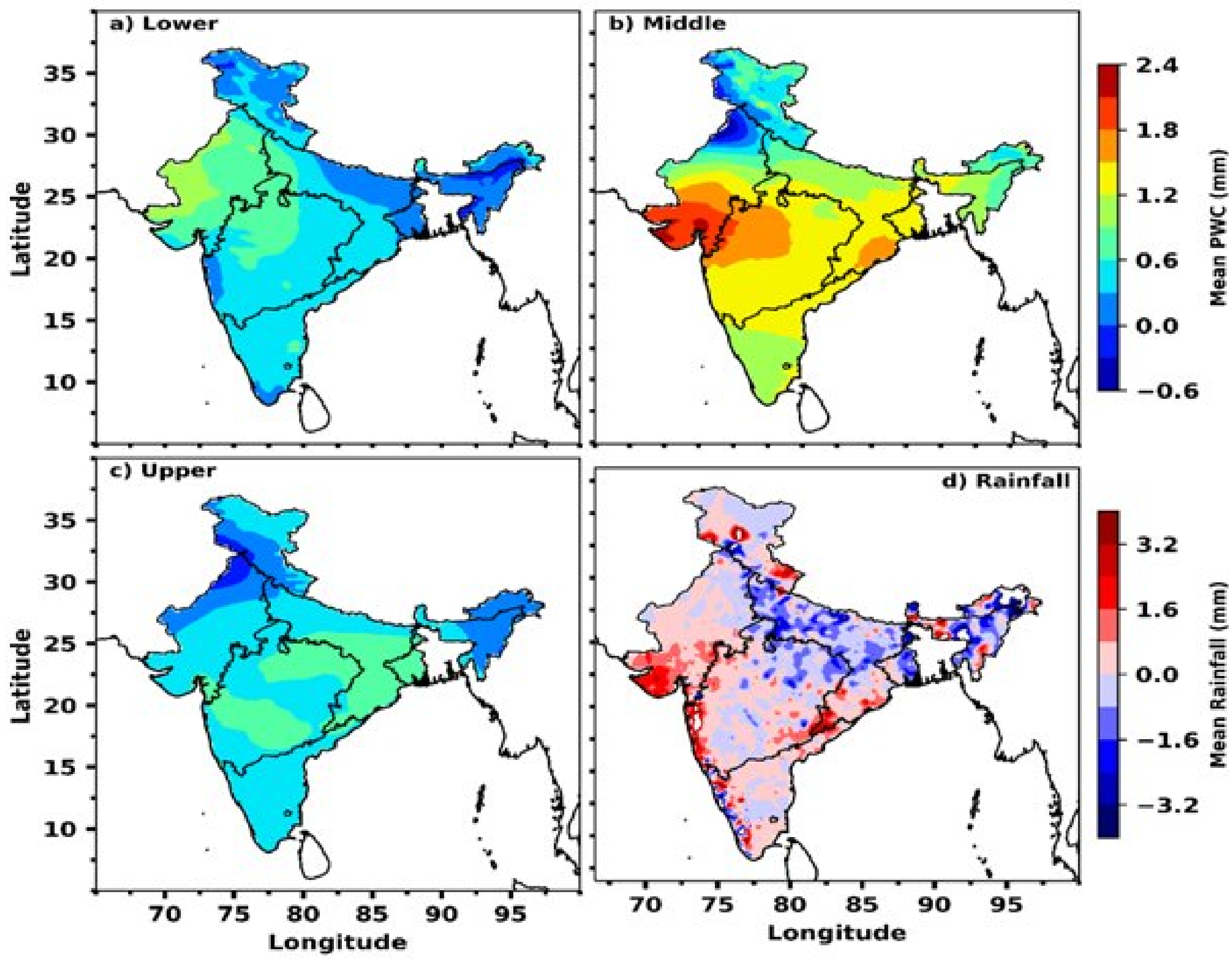

चित्र 1: भारतीय क्षोभमंडल के विभिन्न भागों में बढ़ती नमी (इ,और ब) तथा विभिन्न भारतीय राज्यों में बदलता वर्षा का बदलता पैटर्न (क) घटित हुए परिवर्तनों को दाई ओर दिए गए सूचक से दिखाया गया है। पॉजिटिव मान पैरामीटर्स का बढ़ना और नेगेटिव घटने को प्रदर्शित करते है।

ओर, क्योंकि ये ग्लोबल वार्मिंग राष्ट्रों की सीमा नहीं देखती है ये तो हम सबका साझा कर्तव्य है। ये औद्योगिक नीतियां कितनी जरूरी है क्या इनसे हमने जीवन सरल बनाया है या सरलता की परिभाषा ही हमने बदल दी है, ये सभी के लिए विचारणीय विषय है। हम अपनी सोच बड़ी करें, अपने नैतिक कर्तव्यों को जाने यही एकमात्र समाधान है, अन्य कुछ भी नीं।

वायु प्रदूषण, एरोसोल और तापमान व्युत्क्रमण तथा इसके प्रभाव

अभिषेक ठाकुर
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

वायु प्रदूषण

वायु प्रदूषण से तात्पर्य ऐसी विभिन्न रासायनिक भौतिक या जैविक पदार्थों द्वारा होता है जो आकाश मंडल की प्राकृतिक विशेषताओं को परिवर्तित करते हुए आंतरिक या बाहरी वातावरण को प्रदूषित करते हैं। घरेलू जलन यंत्र, मोटर वाहन, औद्योगिक सुविधाएं और जंगली आग वायु प्रदूषण के सामान्य स्रोत हैं। प्रमुख सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी प्रदूषक तत्वों में तत्व मांस कार्बन मोनो ऑक्साइड, ओजोन, नाइट्रोजन डाइ ऑक्साइड और सल्फर डाइ ऑक्साइड शामिल हैं। बाहरी और आंतरिक वायु प्रदूषण श्वसन और अन्य बीमारियों का कारण बनते हैं और मृत्यु और रोगाणुता के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। वायु गुणवत्ता वैश्विक रूप से पृथ्वी के जलवायु और पारिस्थितिकी से गहराई से जुड़ी होती है। वायु प्रदूषण के कई कारक (जैसे जीवाश्म ईंधन का दहन) ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के स्रोत भी होते हैं। इसीलिए, वायु प्रदूषण को कम करने की नीतियां जलवायु और स्वास्थ्य दोनों के लिए विजयी रणनीति प्रदान करती हैं, जो वायु प्रदूषण से जुड़ी बीमारियों के बोझ को कम करती है, साथ ही जलवायु परिवर्तन के करीबी और दीर्घकालिक समाधान में योगदान देती हैं।

प्राकृतिक स्रोत :

1. प्राकृतिक स्रोतों से उठने वाली धूल आमतौर पर वनस्पति से वंचित बड़े क्षेत्रों या बिना वनस्पति वाले क्षेत्रों से उठती है।
2. मिथेन, जीवों द्वारा खाद्य के पचाने के दौरान उत्पन्न होती है, उदाहरण के लिए पशुओं द्वारा।
3. पृथ्वी की परत में रेडियोधर्मी अपघटन से उत्पन्न रेडॉन गैस। प्राकृतिक स्रोतों से उठी हुई रेडॉन गैस इमारतों में संचालित हो सकती है, विशेष रुप से बेसमेंट जैसे सीमित क्षेत्रों में।
4. जंगली आगों से धुंआ और कार्बन–मोनो–ऑक्साइड।
5. कुछ क्षेत्रों में वनस्पति गर्म दिनों पर पर्यावरणीय रूप से महत्वपूर्ण मात्रा में यापनीय जैविक यौगिकों का उत्सर्जन करती है। यह यापनीय जैविक यौगिक प्राथमिक अंतर्गत प्रदूषकों– विशेष रुप से NOx, SO2, और जैविक कार्बन यौगिकों के साथ प्रतिक्रिया करते हैं और प्रदूषकों का एक मौसमी धुंध उत्पन्न करते हैं।
6. ज्वालामुखी गतिविधि, जो, सल्फर, दहनशील तत्वों और धूल पदार्थों को उत्पन्न करती है।

मानव जनित स्रोत :

यह मुख्य रूप से ईंधन को जलाने से संबंधित होते हैं।

क) स्थायी स्रोत में शामिल है–

- पेट्रोलियम और जैव ईंधन विद्युत संयंत्र, जिनमें धुआ निकलता है (जैसे कि कोयला उद्योग के पर्यावरणीय प्रभाव)
- मिथेन रिसाव वाले तेल और गैस स्थल

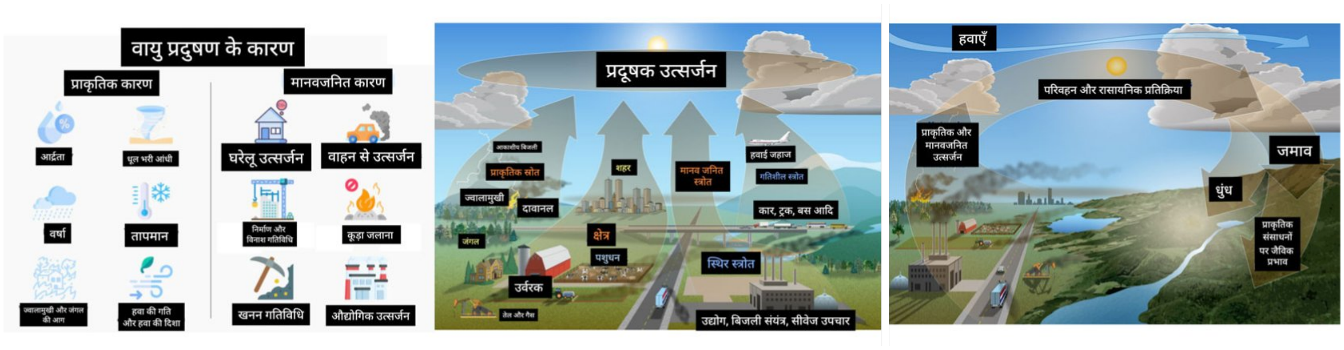

चित्र 1: क) वायु प्रदुषण के कारक, **ख)** वायु प्रदूषकों का परिवहन तथा रासायनिक प्रतिक्रिया और **ग)** प्रदूषक उत्सर्जन

- लकड़ी, फसल के अपशिष्ट और गोबर जैसे पारंपरिक जीवाश्म जलाना (विकासशील देश और गरीब देशों में, पारंपरिक जीवाश्म जलाना हवा प्रदूषण का मुख्य स्रोत है)
- निर्माण सुविधाएं (कारखाने)
- कचरे का भस्मीकरण
- पट्टी और अन्य प्रकार के ईंधन जलाने वाले उपकरण

ख) गतिशील स्रोत में मोटर वाहन, ट्रेन (विशेष रुप से डीजल लोकोमोटिव और डीएमयू), समुद्री जहाज विमान, रॉकेट और घटकों तथा अवशेषों का पुनः प्रवेश। कारों की वायु प्रदूषण वाह्यता, निकास गैस और कार के टायरों (माइक्रोप्लास्टिक सहित) से हवा में प्रवेश करती है।

- कृषि और वन प्रबंधन रणनीतियों में नियंत्रित दहन का उपयोग करना।
- इसके अलावा, दहन के अलावा अन्य प्रक्रियाओं से भी स्रोत होते हैं
- पेंट, हेयर स्प्रे, वार्निश, एरोसॉल स्प्रे और अन्य औषधीय विषैले धुएं
- भूमि में कचरे के ठोस निपटान से मिथेन उत्पन्न होती है।
- परमाणु हथियार, विषाक्त गैसें, जीवाणु युद्ध और रॉकेट्री सैन्य संसाधनों के उदाहरण है।
- कृषि उत्पादन और मांस उत्पादन या पशुधन से वायु प्रदूषण का महत्वपूर्ण योगदान होता है।
- उर्वरकों से प्रदूषण का मुख्य स्रोत नाइट्रोजन ऑक्साइड हो सकता है।

एरोसोल

वायुमंडल में प्रवेश हुए अल्पकण एरोसोल होते हैं। जब यह पर्याप्त बड़े हो जाते हैं, तो हमें इनकी मौजूदगी का एहसास होता है क्योंकि यह सूर्य की किरणों को छितराते और अवशोषित करते हैं। इनकी किरणों का छितराना दृश्यता को कम कर सकता है और सूर्योदय और सूर्यास्त को लाल रंग दे सकता है। वायुमंडलीय एरोसोल सूक्ष्म और अल्प सूक्ष्म कणों के संचार का नाम है जो विभिन्न प्राकृतिक और मानव जनित स्रोतों से उत्पन्न होते है। एरोसोल कण सीधे रूप से विभिन्न स्रोतों जैसे कि तरल और ठोस पदार्थ से शामिल होते हैं, जैसे कि जंगल में जलती हुई वनस्पतियां, जीवाश्म ईंधन का अपूर्ण दहन, ज्वालामुखी, हवा द्वारा या यातायात से।

वायुमंडलीय एरोसोल जलवायु और वायुमंडलीय रासायनिकता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एरोसोल जलवायु पर प्रभाव डालते हैं क्योंकि वह पृथ्वी के विकिरण संतुलन पर प्रभाव डालते हैं। इसका सीधा प्रभाव हो सकता है, जब कण सूर्य की किरणों को छितराने या अवशोषित करने में सहायता करते हैं या यह कण बादल कणों और बर्फीले कणों के रूप में अणुकों को प्रदान करने में सहायता करते हैं, जिससे बादल की प्रतिवर्धिता और उम्र बदलती है। वायुमंडलीय एरोसोल कणों का पृथ्वी की किरण मंजरी और जलवायु के साथ सीधा और परोक्ष रूप से प्रभाव होता है। सीधे प्रभाव में, एरोसोल सूरज की किरणों को सीधे अंतरिक्ष में छितराते हैं जिससे बादल सूर्य की किरणों को कैसे प्रतिबिंबित और अवशोषित करते हैं, इस प्रकार पृथ्वी के ऊर्जा मंत्री को प्रभावित करती है।

एरोसोल रासायनिक प्रतिक्रियाओं में भी अपना योगदान देते हैं। इन प्रतिक्रियाओं में से सबसे महत्वपूर्ण है वह जो समतापमंडलीय ओजोन के नाश का कारण बनती है। उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्रों में सर्दियों के दौरान, एरोसॉल उत्तरी ध्रुवीय समतापमंडलीय बादलों का निर्माण करते हैं। इन बादलों के कणों की बड़ी सतावे रासायनिक प्रतिक्रियाओं के लिए स्थान प्रदान करती हैं। यह प्रतिक्रियाएं प्रतिक्रियाशील क्लोरीन की बड़ी मात्रा का निर्माण करती हैं और अंततः समतापमंडल में ओजोन का नाश करती हैं। प्रमाण अब मौजूद है जो दिखाते हैं कि मुख्य रूप से ज्वालामुखी फटने के बाद समतापमंडलीय ओजोन मात्रा में परिवर्तन होते हैं, जैसे कि 1991 में माउंट पीनातुबो में हुए, जिन्हें वायुमंडल में उड़ा दिया जाता है।

तीन प्रकार के एरोसोल पृथ्वी की जलवायु पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं।

ज्वालामुखी एरोसोल

पहला है ज्वालामुखी एरोसोल परत जो माउंट पीनातुबो जैसे विशाल ज्वालामुखी फटने के बाद समताप मंडल में बनते हैं। प्रमुख एरोसोल वास्तव में CO_2 गैस द्वारा बनती है,

जो समताप मंडल में कुछ हफ्तों से कई महीनों तक सल्फ्यूरिक अम्ल की बूंदों में परिवर्तित हो जाता है। समताप मंडल में हवाएं एरोसोल का विस्तार करती हैं, जब तक कि वह वास्तव में पृथ्वी को प्रायः ढक न लें। एक बार बन जाने के बाद, यह एरोसोल वास्तव में 2 वर्षों तक समतापमंडल में रहते हैं। वे सूरज की किरणों को प्रतिबिंबित करके, निचले वायुमंडल और पृथ्वी की सतह तक पहुंचने वाली ऊर्जा की मात्रा को कम करते हैं, और उन्हें ठंडा करते हैं। 1993 की अप्राकृतिक शीतलता का कारण माउंट पीनतुबो ज्वालामुखी फटने द्वारा उत्पन्न समतापमंडलीय एरोसोल परत थी। 1995 में हालांकि माउंट पीनतुबो घटना के कई वर्ष बीत जाने के बाद भी परत के निशान वायुमंडल में बने रहे थे।

मरुस्थल की धूल

जलवायु पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालने वाले दूसरे प्रकार का एरोसोल धूल है धूल धाराओं में हल्के कण होते हैं जो मरुस्थल सतह से उड़ी हुई मिट्टी के अत्यंत छोटे दाने होते हैं। वायुमंडल के लिए धूल होते हैं और वह तेज धूलधार तूफानों द्वारा भी ऊँचाई (15000 फीट और उससे ऊपर) में नहीं उडाए जा सकते, तो वह आमतौर पर एक छोटे से उड़ान के बाद वायुमंडल से नीचे गिर जाते हैं। क्योंकि धूल खनिजों से मिलकर बनी होती है, इसके कण सूर्य की किरणों को विकीर्ण करने के साथ–साथ इन्हें अवशेषित भी करते हैं। सूर्य की किरणों का अवशोषण करके, धूल के कणों से वायुमंडल की परत गर्म हो जाती है। हाल के अवलोकनों के अनुसार ,कुछ बादल सूर्य की किरणों को आशा से अधिक शोषित कर रहे हैं। सूर्य की किरणों को अवशोषण करने और उन्हें लम्बी दूरियों तक पहुंचाने की क्षमता के कारण, मरुस्थलीय एरोसोल इन बादलों द्वारा सूर्य की किरणों के अतिरिक्त अवशोषण का कारण हो सकते हैं।

मानव निर्मित एरोसोल

तीसरे प्रकार का एरोसोल मानव गतिविधियों से उत्पन्न होता है। हालांकि, मानव निर्मित एरोसोल का एक बड़ा हिस्सा वनों को जलाने से निकलने वाले धुएं से होता है, परंतु प्रमुख घटक कोयले और तेल के जलाने से उत्पन्न, ब्लैक कार्बन, ब्राउन कार्बन, नाइट्रेट एरोसोल तथा सल्फेट एरोसोल के रूप में आता है। मानव निर्मित सल्फेट एरोसोल लगातार तेजी से बढ़ रहे हैं, जब से औद्योगिक क्रांति की शुरुआत हुई है। वर्तमान उत्पादन स्तरों पर, मानव निर्मित सल्फेट एरोसोल की मात्रा को प्राकृतिक रूप से उत्पन्न सल्फेट एरोसोल की मात्रा से भारी माना जाता है। सल्फेट एरोसॉल सूर्य की किरणों को शोषित नहीं करते हैं, लेकिन वे उन्हें विकीर्ण करते हैं, जिससे धरती की सतह तक पहुंचने वाली किरणों की मात्रा कम हो जाती है। सल्फेट एरोसॉल के लिये, माना जाता है कि लगभग 3 से 5 दिनों तक बरकरार रहती है।

सल्फेट एरोसॉल भी बादलों में प्रवेश करते हैं जहां वे बादल की बूंदों की संख्या को बढ़ाते हैं लेकिन बूंदों का आकार छोटा कर देते हैं। इसका सामान्य प्रभाव यह है कि एरोसोल की मौजूदगी के कारण बादलों को निर्माण करने के मुकाबले, बादलों को अधिक प्रतिबिंबी बनाने के साथ–साथ, माना जाता है कि अतिरिक्त एरोसोल प्रदूषण प्रदूषित बादलों को अधिक समय तक टिकाए रखते हैं और गैर प्रदूषित बादलों की तुलना में अधिक सूर्य की किरणों को प्रतिबिंबित करते हैं ।

तापमान व्युत्क्रमण तथा इसके प्रभाव

तापमान व्युत्क्रमण,जब पृथ्वी के निचले वायुमंडल में ऊंचाई के साथ तापमान में वृद्धि होती है। पृथ्वी की सतह के निकटतम परत क्रमशः क्षोभमंडल नामक होती है, जहां हमारे मौसम का अधिकांश भाग होता है। सामान्यतः, जब हम क्षोभ मंडल में ऊपर की ओर जाते हैं तो वायु का तापमान गिरता है तापमान व्युतक्रमण तब होता है, जब यह बदला जाता है

व्युत्क्रमण उष्ण हवा के लिए एक सीमा की तरह कार्य करता है, जो उसे फैलने और ऊपर की ओर उठने से रोकती है जब संवेगी बादल अवरोहण तक पहुंचते हैं, तो उनकी वृद्धि रुक जाती है इन बादलों की उर्ध्वाधिकारी वृद्धि की बजाय, यह बादल अवरोहण के नीचे आधीन मूलक ढंग से फैलना शुरू करते हैं। यदि अवरोहण कम हो, तो संवेगी कोहरे वाले बादलों से वर्षा नहीं होगी। यह कोहरा धुंध और वायुमंडल में विषैली और प्रदूषक तत्वों को रोक कर रखता है।

वायु प्रदुषण में व्युत्क्रमण की भूमिका

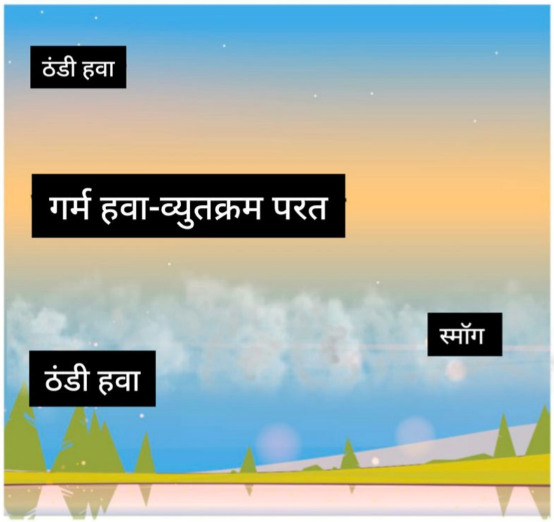

चित्र 2: वायु प्रदूषण में व्युत्क्रमण की भूमिका

वायु और तापमान की प्रकृति के आधार पर कई प्रकार के व्युत्क्रमण होते हैं। इनमें शामिल है–

- **भूमि व्युत्क्रमण**– जब ठंडी पृथ्वी की सतह के पास की हवा ऊपर की हवा की तुलना में तेजी से ठंडी होती है, तो भूमि व्युत्क्रमण होता है। यह एक स्पष्ट और शांत रात में आम है। जब गर्मी पृथ्वी से दूर विकिरित होती है और तेजी से ठंडी होती है। इसके कारण भूमि के पास कोहरा बन सकता है। कभी कभी यह दिन के दौरान धरती फिर से गर्म होने तक रह सकता है।
- **सामोंतरिक व्र्युक्रमण**– सामोंतरिक व्युतक्रमण होता है जब ठंडी हवा का एक द्रव्यमान गर्म हवा से टकराता है और उसे काट देता है। जैसे ही गर्म हवा को ऊपर की ओर धकेला जाता है तो यह ठंडी हो जाती है और धुंध या वाष्प की संघनित परतों में संघनित हो जाती है । ये बादल बनाते हैं। जब ये बादल पर्याप्त रूप से घने होते हैं तो वे बूंदाबांदी, वर्षा या हिमपात देते हैं।
- **निम्ननिचता व्युत्क्रमण**– निम्ननिचता व्युत्क्रमण होता है,जब एक उच्च दबाव वाला क्षेत्र हवा की एक परत को डूबने या कम करने का कारण बनता है। जैसे ही यह गिरता है, ओर सूख जाती है, जिससे यह गर्म हो जाती है। कुछ मामलों में, जियो में भूमि द्रव्यमान, पृथ्वी के पास की हवा ठंडी रहती है। परिणामी उल्टा, बादल की उथली परतों को धुंध में फंसाने और दृश्यता में बाधा उत्पन्न कर सकता है।

तापमान व्युत्क्रमण के वायु प्रदूषण पर प्रभाव

जब एक व्युत्क्रमण होता है तो पृथ्वी की सतह के पास की हवा उच्च वायु के साथ मिश्रित नही होती है। संवहन व्युत्क्रमण मौजूद होने पर प्रदूषण जमा हो सकते हैं। यहाँ वायु प्रदूषण के फैलाव और प्रसार को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

- तापमान व्युत्क्रमण बादलों के गठन को प्रभावित करता है।
- तापमान व्युत्क्रमण वायु के प्रवाह को ऊपर उठने से रोकता है, जिसके परिणामस्वरूप धुंध व्युत्क्रमण रेखा से नीचे तक सीमित रहता है ।
- जब व्युत्क्रमण होता है, वायु प्रदूषक, अणुओं और धुंधली कोहरे का प्रसार भी सीमित होता है।
- पर्याप्त निम्न स्तर के व्युत्क्रमण वाले स्थानों में संवदेनशील बादल वर्षा के लिए पर्याप्त उच्च विकसित नहीं हो पाते हैं।
- कोहरे के अभाव में भी विरुद्ध क्रमण होने के नीचे दृश्यता बहुत कम हो सकती है। यह धूल और धुएं के कणों के जमा होने के कारण होता है।
- यहाँ कोहरा बहुत अहम है क्योंकि ठंडी हवा व्युत्क्रमण आधार के पास मौजूद होती है।
- जितना भी व्युत्क्रमण बढ़ता है, वायु गुणवत्ता बद्तर होती है।
- तापमान व्युत्क्रमण वर्षा पैटर्न पर प्रभाव डालता है।

भारत में स्थलीय कार्बन सिंक का बिगड़ता संतुलनः मानवीय हस्तक्षेप और जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में

राहुल कश्यप और जय नारायणन कुट्टीपुरथ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर

मानवीय छेड़छाड़ ने स्थलीय वनस्पति की जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रतिक्रिया का नेतृत्व किया है। हाल के दशकों में भूमि की सतह और वायुमंडल के बीच पृथ्वी प्रणाली में संवेग, जल और ऊर्जा के प्रवाह में संशोधन ने वनस्पति कार्बन गतिकी में महत्वपूर्ण परिवर्तनशीलता को जन्म दिया है। जलवायु परिवर्तन, वनस्पति कार्बन गतिकी को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण और अप्रत्याशित कारक के रूप में उभरा है। कम वर्षा वातावरण और भूमि दोनों के गर्म होने के कारण सीमित पानी का परिदृश्य स्थलीय उत्पादकता को कम कर सकता है। जलवायु में परिवर्तन के साथ–साथ विभिन्न मानवजनित प्रभाव जैसे भूमि उपयोग–भूमि आच्छादन परिवर्तन, कृषि उत्पादन और सिंचाई वनस्पति कार्बन गतिकी को प्रभावित करते हैं।

ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के शमन में हरी–भरी वनस्पति की महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि स्थलीय वनस्पति एक प्रमुख कार्बन सिंक के रूप में कार्य करती है। दक्षिण एशिया पिछले दो दशकों में हरित रहा है और इसमें अधिकांश योगदान भारत और चीन ने किया है। हालाँकि, स्थलीय कार्बन पृथक्करण के संदर्भ में इस हरियाली की मात्रा काफी हद तक है। दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय जलवायु परिवर्तन से कार्बन चक्र पर जोरदार प्रभाव पड़ेगा, और भारत एक ऐसा क्षेत्र है जिसे कार्बन बजट अध्ययनों के संबंध में अभी तक पर्याप्त रूप से खोजा जाना बाकी है। आँकड़ो की कमी, व्यापक कम्प्यूटेशनल आवश्यकताएं और भारतीय क्षेत्र में जटिल भूमि–वायुमंडल संपर्क इस तरह के अध्ययन करने के लिए बड़ी चुनौतियां पेश करते हैं। कार्बन उपयोग दक्षता वायुमंडलीय कार्बन को अलग करने के लिए वनस्पति की क्षमता का एक मापक है और सकल प्राथमिक उत्पादकता के लिए शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता के अनुपात के रूप में अनुमानित है। यह पारिस्थितिक तंत्र द्वारा प्राप्त शुद्ध कार्बन में से संग्रहित कार्बन की मात्रा बताता है और विकास के लिए उपयोग किया जाता है। कार्बन उपयोग दक्षता वनस्पति के कामकाज पर अंतर्दृष्टि प्रदान करता है क्योंकि यह सकल प्राथमिक उत्पादकता के शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता में रूपांतरण या सकल प्राथमिक उत्पादकता के शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता और ऑटोट्रॉफ़िक श्वसन में विभाजन की दर है। हम अनुमान लगाते हैं कि वनस्पति कार्बन गतिकी स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र के कामकाज को नियंत्रित करता है क्योंकि ये कार्बन कैप्चर (सकल प्राथमिक उत्पादकता), भंडारण (शुद्ध प्राथमिक उत्पादकता) और भंडारण की दर कार्बन उपयोग दक्षता को सम्मिलित करता है। ये कुछ कारकों से प्रभावित होती है जैसे प्रकाश संश्लेषक के रूप में सक्रिय विकिरण, तापमान, वर्षा, मिट्टी की नमी और वायु कार्बनिक कार्बन सामग्री।

यहां, हमने 2000–2019 की अवधि के लिए भारत में कार्बन उपयोग दक्षता परिवर्तनशीलता के प्रमुख चालकों की जांच करने के लिए प्रिंसिपल कंपोनेंट एनालिसिस, संशोधित मल्टीपल लीनियर रिग्रेशन और कैजुअल डिस्कवरी का उपयोग किया है। पानी की उपलब्धता (मिट्टी की नमी और दाब) उच्च कार्बन उपयोग दक्षता को बढ़ावा देती है, लेकिन उच्च ताप और वायु कार्बनिक कार्बन सामग्री, कार्बन उपयोग दक्षता को कम करती है। उत्तर पश्चिम भारत (नमी प्रेरित हरियाली) और गंगा के मैदान (सिंचाई प्रेरित कृषि अधिकता) में कम कार्बन उपयोग दक्षता के क्षेत्रों में उत्पादकता (हरियाली) में वृद्धि हुई है। हालांकि, कम उत्पादकता (ब्राउनिंग) उच्च क्यूई जैसे उत्तर पूर्वी भारत, निचले गंगा के मैदान (वनों की कटाई और चरम घटनाओं) और दक्षिणी भारत (वार्मिंग प्रेरित नमी तनाव) के क्षेत्रों में पाई जाती है। जलवायु चालकों के अलावा, मानवजनित घुसपैठ (जैसे भूमि उपयोग परिवर्तन, सिंचाई, कृषि मशीनीकरण और प्रदूषण) भी वनस्पति कार्बन गतिकी को विनियमित करने में एक भूमिका निभाते हैं। चूंकि ब्राउनिंग उच्च कार्बन उपयोग

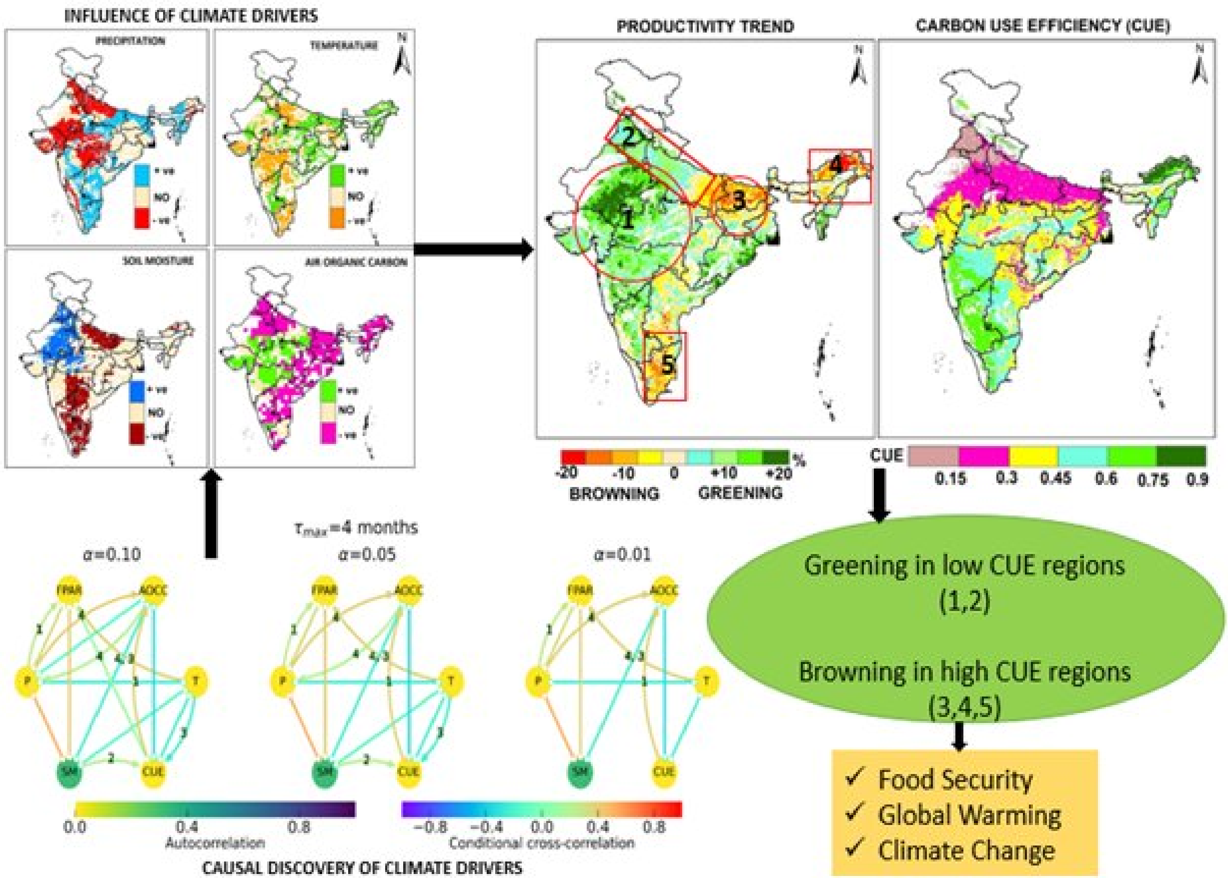

चित्र: अध्ययन के समग्र निष्कर्षों को दर्शाने वाला एक आरेख। '(लेखकों के शोध पत्र से लिया गया है।)

दक्षता के क्षेत्रों में पाया जाता है। यह एक प्रमुख चिंता का विषय है क्योंकि यह कुशल स्थलीय कार्बन सिंक के कमजोर होने का संकेत देता है। इस प्रकार, उच्च कार्बन उपयोग दक्षता के क्षेत्रों में हरित आवरण की सुरक्षा के लिए उचित योजना की आवश्यकता है।

इसलिए, यह अध्ययन स्थलीय कार्बन चक्र में संतुलन बनाए रखने के लिए हरित आवरण के संरक्षण की सिफारिश करता है। विशेष रूप से उच्च वनस्पति कार्बन उपयोग दक्षता के क्षेत्रों में स्वदेशी हरित आवरण और वनीकरण का संरक्षण बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह ग्लोबल वार्मिंग, बढ़ती जनसंख्या और उच्च प्रदूषण की दुनिया में कार्बन फुटप्रिंट को कम करेगा। हमारा विश्लेषण कार्बन आवंटन की दर पर नई अंतर्दृष्टि प्रदान करता है और पारिस्थितिक तंत्र में कार्बन को नए बायोमास में परिवर्तित करने के लिए वनस्पति की क्षमता को सटीक रूप से निर्धारित करने में मदद करता है।

विभिन्न ईकोज़ोन और वनस्पति प्रकारों के लिए CUE की सटीक मात्रा भूमि–वायुमंडलीय अंतःक्रियाओं के लिए बेहतर इनपुट प्रदान करके पृथ्वी प्रणाली मॉडल के प्रदर्शन को बढ़ाएगी। ये निष्कर्ष हमें खाद्य सुरक्षा, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का मुकाबला करने और प्रासंगिक नीतियों का मसौदा तैयार करने और लागू करने से स्थिरता प्राप्त करने में सक्षम बनाएंगे।

मैं भी मूल्यवान हूँ

बरुण मुखर्जी
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

क्या आप जानते हैं कि पृथ्वी के आंतरिक भाग में मेरा जन्म होता है। मैं किन कठिन परिस्थितियों से गुजरता हूँ। कैसे बडा होता हूँ। मुझे भी पृथ्वी के सतह में जीने का अधिकार है। मैं चाहता हूँ मेरा नाम हो, पहचान हो और मेरी भी जीवनी लिखी जाये। लेकिन इस मनुष्य ने मुझे नजरअंदाज कर मुझे दरकिनार किया। कभी भी मेरे मन की दशा को जानने की कोशिश नहीं की। धन्य हो वाडिया संस्थान का जिसने मेरी जरूरत और महत्व को समझा और प्रयास किया मेरे द्वारा हिमालयी विज्ञान को जानने का। यद्यपि मैं इतनी आसानी से हाथ नहीं आने वाला। मुझे जानने के लिए इस मनुष्य को इतनी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा जो कि वह सोच भी नहीं सकते परंतु मेरे सभी साथी यह भी कह रहे हैं कि मैं ज्यादा ही कठोर हो रहा हूँ। अंततः मनुष्य जैसा निर्दयी तो नहीं हो सकता और इस लांछन के साथ अपना जीवन व्यतीत भी नहीं कर सकता हूँ।

आइये मैं स्वयं ही अपनी जीवनी बताता हूँ। आप सभी गणमान्य जानते हैं कि पृथ्वी की संरचना एक प्याज नुमा परत दर परत होती है जो कुछ संकेंद्रीय परतनुमा हैं। पृथ्वी की सतह में सबसे ऊपरी परत को पर्पटी कहते हैं और यह सबसे पतली परत होती है यह महाद्वीपीय सतह में 33–35 किलोमीटर एवं समुद्री सतह में 5–8 किलोमीटर होती है महाद्वीपीय संहति में मुख्य रूप से सिलिका एलमीना जैसे खनिजों से बनता है। यह भाग भंगुर होता है और जल्दी ही टूट जाने की क्षमता रखता है इसका घनत्व 2.7 से ज्यादा होता है एवं इसे सियाल कहा जाता है। ठीक इसके नीचे थोड़ा सी नरम परत होती है जो कि सिलिका और मैग्नीशियम खनिजों से बनती है और इसे सिमा कहा जाता है। इन दोनों के बीच में मोहो असंबधता पायी जाती है। परंतु हिमालय पर्वत के नीचे यह 70 किलोमीटर तक जाती है। पर्पटी के नीचे भू–प्रवार जिसकी गहराई 33 से 2900 किलोमीटर तक होती है और घनत्व 3 से 9 तक होता है। भू–प्रवार दो भागों में बंटा होता है। उपरी प्रवार 33–410 किलोमीटर और निचला प्रवार 660–2900 किलोमीटर गहराई तक फैला होता है। इन दोनों परतों के बीच में प्रवार ट्रांजिशन जोन होता है जो कि 410–660 किलोमीटर तक विस्तृत होता है।

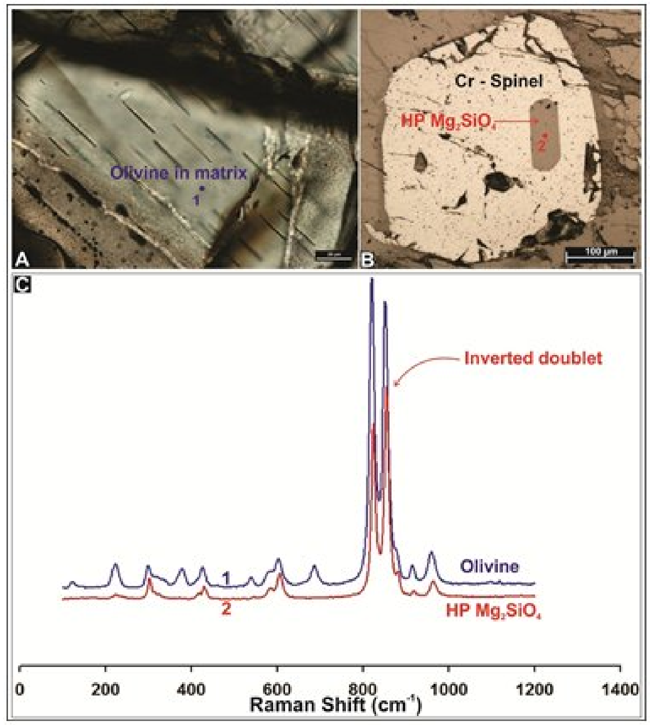

क्रोमाइट में होस्ट किए गए वाडसेलाइट का फोटोमाइक्रोग्राफ और संबंधित रमन चोटियों के साथ

ऐसे कुछ भूगर्भ वैज्ञानिकों ने पृथ्वी की आंतरिक संरचना का अनुमान किया है जोकि घनत्व दबाव उत्कापन, भूकंप के बारे में बताता है। यह सच है पृथ्वी की आंतरिक संरचना का प्रत्यक्ष अनुमान लगाना अत्यंत कठिन है। वैसे तो विद्वानों ने पृथ्वी का कुछ गहराई 3 से 4 किलोमीटर तक अध्ययन किया है परंतु गहराइयों में अत्यधिक तापमान होने के कारण वहाँ तक पहुंचना मुश्किल होता है, फिर भी भूगर्भ वैज्ञानिक यह बताने में सक्षम होते है कि पृथ्वी की आंतरिक संरचना कैसी होती है। यह तभी होता है जब मेरे जैसे खनिज नमूना पाकर उसका अध्ययन करते है।

सबसे पहले मैं अपना संक्षिप्त परिचय देना चाहूँगा। मेरा नाम वाडसेलाइट है। ऐसे हम ओलिविन परिवार के तीन भाई हैं। हम α–अल्फा β–बीटा और γ गामा ओलिविन के नाम से जाने जाते हैं। मैं वड्सलेइट एक ऑर्थोरोम्बिक खनिज हूँ मेरा सूत्र β–$(Mg,Fe)2SiO_4$ है। मुझे प्रकृति में सबसे पहले अल्बर्टा, कनाडा में पीस नदी उल्कापिंड में पाया गया था। यह बढ़ते दबाव के तहत ओलिवाइन (α–(Mg,Fe)2SiO4) से एक चरण परिवर्तन द्वारा बनता है और अंततः दबाव बढ़ने पर स्पिनल–संरचित रिंग–वुडाइट (γ–(Mg,Fe)2SiO4 में बदल जाता हूँ। संरचना मैग्नीशियम के बजाय अन्य द्विसंयोजक धनायनों की सीमित मात्रा ले सकती हूं, लेकिन α और γ संरचनाओं के विपरीत, योग सूत्र Fe_2SiO_4 के साथ एक β संरचना थर्मोडायनामिक रूप से स्थिर नहीं होता। मेरा सेल पैरामीटर लगभग = 5.7 Å, b = 11.71 Å और c = 8.24 Å होता हैं। मैं पृथ्वी के मेंटल के संक्रमण क्षेत्र के ऊपरी भाग में 410–520 किलोमीटर (250–320 मील) की गहराई के बीच स्थिर पाया जाता होता हूँ।

मेरी पहचान सबसे पहले 1966 में रिंगवुड और मेजर द्वारा की गई थी और 1968 में अकिमोटो और सातो द्वारा इसकी एक स्थिर चरण होने की पुष्टि की गई थी। चरण को मूलरूप से β–Mg2SiO4 या 'बीटा–चरण' के रूप में जाना जाता था। मेरा वाडस्लेइट नाम सबसे पहले खनिज विज्ञानी आर्थर डेविड वाडस्ले (1918–1969) के नाम पर रखा गया था।

यहीं से मेरे जीवन का महत्व बढ़ जाता है। मेरे जन्म का स्रोत मेंटल परत में 410–660 किलोमीटर से उत्पन्न होता है। मेरा नाम वैंडसेलाइट है और मेरा घर क्रोमाइट खनिज है। यह मेरे लिये माँ की गोद है। मैं इसमें बैठा रहता हुं। मेरी माँ यानी कि क्रोमाइट मुझे सभी विषम परिस्थितियों से बचाती है। मैं 2000 डिग्री सेल्सियस में उत्पन्न होता हूँ और कुछ मेरा क्रिस्टलीकरण होता है। मैं 400 किलोमीटर की गहराई से ऊपरी सतह तक क्रोमाइट की गोद में और दूसरे साथियों के सहारे मेंटल अपवेलिंग के द्वारा समुद्री सतह तक पहुंचता हूँ। आगे का मार्ग ऑफियोलाईट अपहरण द्वारा तय करता हूँ। ऑफियोलाईट अल्ट्रामाफिक प्रत्यय में अत्यधिक सुक्ष्म अवस्था में पाया जाता हूँ। मुझे माइक्रोस्कोप और रमन स्पेक्ट्रोस्कॉपी द्वारा पहचाना जा सकता है। मेरे में तमाम गुण होते हैं जिससे पृथ्वी की आंतरिक अवस्था के बारे में जाना जा सकता है। मेरा हृदय बहुत नरम है और मनुष्य को शिक्षित बनाने में मददगार हूँ। मुझे पहचानो मैं भी मूल्यवान हूँ।

पेट्रो–भूरसायनिकी का मुख्य उद्देश्य

संजय गोस्वामी
यमुना जी/13, अणुशक्ति नगर, मुंबई–94

बीसवीं सदी के मध्य वैज्ञानिकों ने भू–रसायन विज्ञान में पेट्रोलियम पदार्थों के बार में शोध करना शुरू किया। भू–रसायन का उपयोग उपसतह हाइड्रोकार्बन के पूर्वेक्षण के लिये किया गया। आज भू–रसायन विज्ञान का क्षेत्र पेट्रोलियम भू–रसायन विज्ञान के रूप में प्रभावी रूप से पेट्रोलियम पदार्थो की खोज में मदद कर पेट्रोलियम उद्योग में उपयोगी साबित हुआ है।

भू–रसायनिकी का मुख्य उद्देश्य अवसादी शिलाओं में खनिज तेल के जनन, स्थानान्तरण, संचयन तथा परिवर्तन को रसायनिक सिद्धांतों द्वारा सही प्रकार से समझना कहा जा सकता है। भू–रसायनिक अध्ययन भूवैज्ञानिक तथा भूभौतिकिविद् के लिये एक खास औजार सिद्ध हुआ है। 1974–1980 के समय भू–रसायनिक के प्रसार में बहुत बड़ा उछाल आया।

जिसके मुख्य कारण थे : (1) अवधारणात्मक प्रगति (कन्सेप्चुअल एडवांसमेन्ट), (2) उन्नत विश्लेषणात्मक उपकरण तथा (3) प्रशिक्षण प्राप्त लोगों की उपलब्धता। क्षेत्रीय भू–रसायनिक प्रयोगशालायें अब उच्चस्तरीय हो गई हैं और वह सूक्ष्म संसाधन आधारित उपकरणों से सुगठित हैं। यह प्रयोगशालायें बड़ी संख्या में विभिन्न नमूनों के समूह का विश्लेषण तथा परीक्षण करने में सक्षम हैं। इनके द्वारा उत्पन्न आँकड़े स्वीकार्य स्तर के एवं नियंत्रण योग्य होते हैं। अवसादी शिलाओं में सन्निहित कार्बनिक पदार्थ, खनिज तेल, प्राकृतिक गैस तथा भौम जल आदि की पूरी भू–रसायनिक जाँच के लिये आधुनिक उपकरणों का उपयोग किया जाता है। संक्षिप्त विवरण निम्न है– राकइवेल विधि का पेट्रोलियम उद्योग में स्रोत शैल विभव का मूल्यांकन करने के लिये व्यापक स्तर पर उपयोग किया जाता है। जियोलॉजी में पृथ्वी की उत्पत्ति संरचना तथा उसके संघटन एवं शैलों द्वारा व्यक्त उसके इतिहास की विवेचना की जाती है।

भूविज्ञान के दो प्रमुख भौतिक भूविज्ञान और रासायनिक भूविज्ञान वर्ग है।

भूभौतिकी का विकास भौतिकी और भौमिकी से हुआ है। यह पृथ्वी की भौतिकी है। इसके अंतर्गत पृथ्वी संबंधी सारी समस्याओं की छानबीन होती है। इसमें भूमि समस्याओं और प्राकृतिक रूपों में उपलब्ध पदार्थों के व्यवहार से की जाती है। भूविज्ञानियों की आवश्यकता के फलस्वरूप नए साधनों के रूप में इसका जन्म हुआ।

खनिज तेल संबंधित भू–रसायनिक अध्ययन भारत की अवसादिकीय द्रोणियों में 1960 के पूर्वाद्ध में पूववर्ती तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग ने प्रारम्भ किया। इसके अंतर्गत पेट्रोलियम और उसके प्रारम्भिक पदार्थों के अभिलक्षणन के माध्यम से खनिज तेल के जनन, स्थानान्तरण संचयन तथा परिरक्षण का अध्ययन संभव हुआ। इस प्रकार भू–रसायनिक अध्ययन से प्राप्त आँकड़ें, मूल्य प्रभावी अन्वेषण के लिये मापयोग्य मानदण्डों वाली महत्वपूर्ण सूचनाओं के रूप में अपना योगदान देते हैं।

मुख्य भू–रसायनिक गतिविधियाँ निम्न हैं।

(1) सरफेस जियोकेमिकल प्रोस्पेक्टिंग।
(2) जियोकेमिस्ट्री ऑफ डिसपर्सड सेडिमेन्टरी आर्गेनिक मैटर तथा स्रोत शैल का भूरसायनिक मूल्यांकन ।
(3) अनुवांशिक मॉडलिंग।
(4) सहसंबंध स्थापित करने के लिये तेल का तेल से, तेल/कंडेन्सेट का स्रोत शैल से, गैस का गैस से तथा गैस का स्रोत शैल से अध्ययन ।
(5) जलीय जियोकेमिस्ट्री।
(6) आगार एवं उत्पादन संबंधी जियोकेमिस्ट्री।

यह विश्वसनीय पैरामीटर देता है –

उदाहरण के लिए

S–1 शिखर (नमूने में मुक्त हाइड्रोकार्बन की मात्रा) : इससे बिना केरोजिन को भंजित किये मुक्त हाइड्रोकार्बन की माप होती है।

S–2 शिखर (नमूने में गैर वाष्पशील कार्बनिक पदार्थ के थर्मल ब्रेकिंग से उत्पन्न हाइड्रोकार्बन की मात्रा) : यह केरोजिन के भंजित होने के पश्चात की माप है। इससे स्रोत शैल में कितने हाइड्रोकार्बन का जनन संभव होगा अर्थात् यह स्रोत शैल के विभव को दर्शाता है। तेल/गैस अन्वेषण के अंतर्गत मड, सीमेन्ट, पेट्रोलियम के अनुरक्षण/परीक्षण के लिये रसायनिक अध्ययन तथा पर्यावरण/प्रदूषण नियंत्रण, कूप वेधन और उत्पादन संबंधी समस्यायों के निराकरण के लिये रासायनिक अध्ययन पर दीर्घकालीन अनुभव साथ ही प्रयोगशालाओं के विविध अध्ययनों में की जाती है।

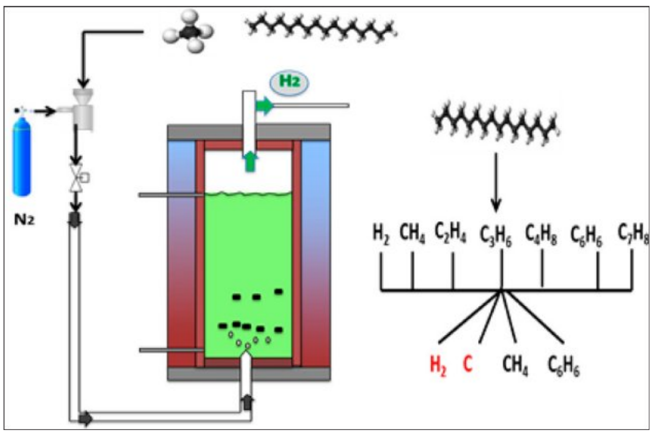

यह उत्पत्ति संबंधी विभव (पोटेन्शियल) की माप है। इससे स्रोत शैल में कुल पेट्रोलियम जनन का पता चलता है।

S–3 शिखर : (केरोजन के पायरेलिसिस के दौरान उत्पादित CO_2 की मात्रा) : केरोजिन के भंजन से जो कार्बन डाइआक्साइड निकलती है यह उसकी माप है और यह केरोजिन की ऑक्सीजन को भी प्रदर्शित करता है।

S–4 शिखर : ऑक्सीजन अवशिष्ट कार्बन पदार्थ के आक्सीकृत दहन से जो कार्बन–डाइ–आक्साइड निकलती

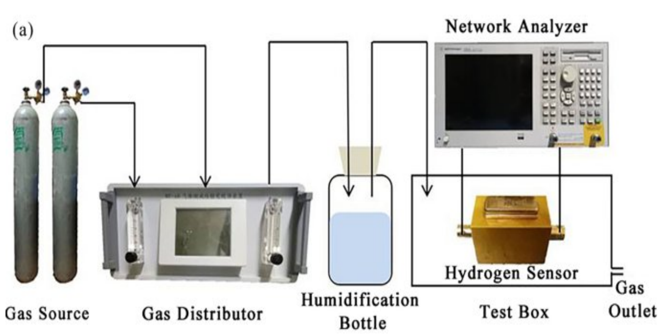

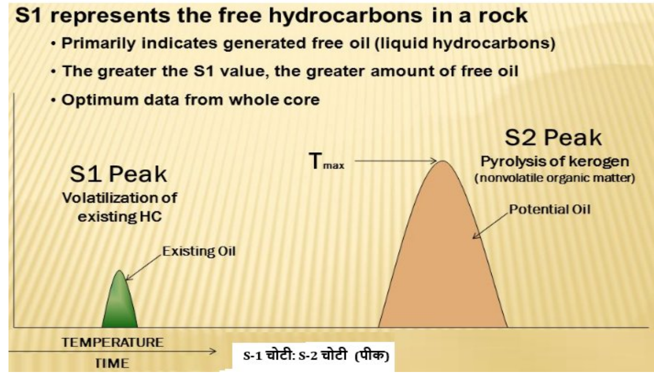

है यह उसकी माप है। इसका उपयोग कुल जैव कार्बन की गणना के लिये किया जाता है।

प्रोडक्टिविटी इंडेक्स : इसे उत्पादन सूचकांक भी कहते है। यह अभिसूचक गहराई बढ़ने के साथ बढ़ता है यह केरोजिन में उपस्थित हाइड्रोजन के परिमाण के अनुपात में होता है अतः शैल के तेल जनन का विभव दर्शाता है। उसकी माप तेल उत्पत्ति के उच्च विभव को दर्शाता है। यह हाइड्रोजन अभिसूचक s1/s2 की माप है। हाइड्रोजन अभिसूचक के मुकाबले में ऑक्सीजन अभिसूचक के केरोजिन की किस्म में गैस प्रवण कोयला तथा कोयलायुक्त शैल सही परिणाम नहीं देते। ऑक्सीजन अभिसूचक केरोजिन में ऑक्सीजन की मात्रा से संबंधित है। सामान्यतयः S3 का परिमाण अधिक विश्वस्त नहीं होता है जितना राकइवेल के अन्य प्राचल होते हैं। ऐसी स्थिति में टी मैक्स से मापा जाता है।

टी मैक्स तकनीक : इसमें तापीय परिपक्वता को मापा जाता है। इससे परिपक्वता की स्थिति का आकलन करते हैं जैसे परिपक्व कार्बनिक पदार्थ जो अधिक गाढ़ा होता है उसे ताप से अपघटित करना आसान नहीं होता। उसके लिये उच्च उष्मा चाहिए। प्रथम और द्वितीय प्रकार के केरोजिन की आणविक संरचना सरल होती है परन्तु तृतीय प्रकार के

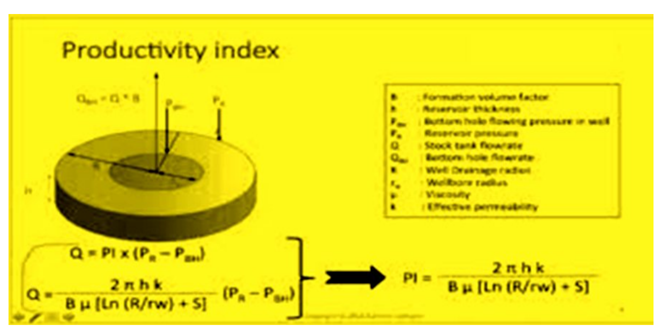

केरोजिन की संरचना जटिल होती है इसलिये प्रत्येक कार्बनिक पदार्थ का टी मैक्स मापा जाता है। जैसे जैसे अवसाद एक के ऊपर दूसरा फिर तीसरा दफन होते जाते हैं उनका तापक्रम बढ़ता जाता है इसलिये अवसाद में निहित कार्बनिक पदार्थ की तापीय परिपक्वता का अवसादों के दफन होने के इतिहास से सीधा संबंध है।

हाइड्रोकार्बन के जनन का समय तथा स्रोत शैल से उसका स्थानान्तरण। दो विधियों से इसका अध्ययन किया जाता है–

(1) विट्रिनाइट परावर्तन द्वारा परिपक्वता प्रोफाइल –

विट्रिनाइट पुरातापक्रम का परिशुद्ध अभिसूचक है इसलिये उसके द्वारा हाइड्रोकार्बन जनन का सूत्रपात (इनीशियेसन), विधिवत प्रारम्भ (आनसेट) तथा पराकाष्ठा (पीक) को निर्धारित किया जाता है।

(2) समय–तापक्रम का इतिहास संबंधी वक्र –

यह अन्य विधि है जिससे हाइड्रोकार्बन जनन के समय को निर्धारित किया जा सकता है। इस विधि में संबंधित क्षेत्र के अवसाद दफन होने के इतिहास के वक्र (कर्व) की संरचना, समय, तापक्रम, अवसादन इतिहास और स्तरिकीय इकाईयों के परिशुद्ध काल को आधार लेकर की जाती है। इससे भी हाइड्रोकार्बन जनन का प्रारम्भ, पराकाष्ठा तथा समाप्ति को समझा जा सकता है।

क्रोटोग्राफिक तकनीक

इससे गैस के यह विज्ञान उन प्रक्रमों पर भी प्रकाश डालता है जिनसे शैलों में परिवर्तन आते रहते हैं। इसमें प्रागैतिहासिक जीवों का संबंध तथा उनकी उत्पत्ति और उनके विकास का अध्ययन भी सम्मिलित है।

इसके अंतर्गत पृथ्वी के संघटक पदार्थों उन पर क्रियाशील शक्तियों तथा उनसे उत्पन्न संरचनाओं भूपटल की शैलों के वितरण पृथ्वी के इतिहास (भूवैज्ञानिक कालों आदि के अध्ययन सम्मिलित हैं।

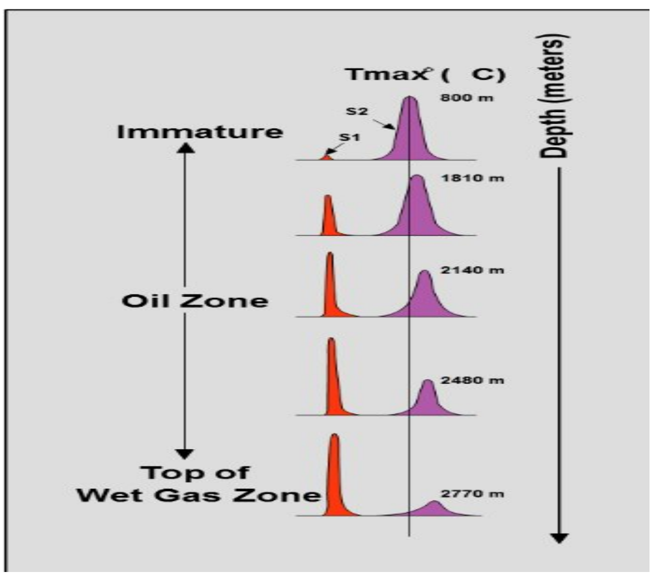

टी मैक्स तकनीक

क्रोटोग्राफिक तकनीक

लोनार–महाराष्ट्र की प्राकृतिक अद्भुति

सुवर्णा कुलकर्णी
जय सिंह पुर, कोल्हापुर

प्रकृति ने हमेशा से मानव मन को मोहित किया है। इस विश्व में अनगिनत रहस्यमय स्थानों ने अपनी एक अद्वितीय छवि बनाई है और उनमें से एक है लोनार। महाराष्ट्र राज्य के बुलढ़ाणा जिले में स्थित यह प्राकृतिक रहस्य वास्तव में एक धातु गिरा निशान है और यह एक दिव्य सुंदरता के साथ भरा हुआ है। लोनार क्रेटर, जो लोनार झील के नाम से भी प्रसिद्ध है, विश्व के प्राचीनतम और बड़े धातु गिरा निशानों में से एक है। इसमें समय के साथ घटित वैज्ञानिक और प्राकृतिक प्रक्रियाओं के संकेत मिलते हैं, जो इसे एक विशेष स्थान बनाते हैं। इस लेख में हम लोनार झील के गठन, प्राकृतिक महत्व, पर्यटन स्थल के रूप में लोनार, वन्यजीव और इसके धार्मिक महत्व के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

लोनार क्रेटर का गठन

लोनार क्रेटर बनना एक अदभुत घटना है जो करीब 50,000 वर्ष पहले हुई। एक समय जब इंसानी जीवन विकसित भी नहीं हुआ था और पृथ्वी अपनी प्राकृतिक रूप रेखा में अप्रभावित थी, तब एक विद्युतग्राहक धातु पिण्ड पृथ्वी की सतह पर टकराया। इस अद्भुत घटना के कारण उच्च तापमान और दबाव उत्पन्न हुआ, जिसने चट्टानें पिघला दी और एक विशाल खाड़ी बना दी। यह विशाल खाड़ी ही लोनार क्रेटर है। जिसका व्यास लगभग 1.8 किलोमीटर है। इस धातु पिण्ड के टकराने से उत्पन्न दबाव ने बेसाल्टिक चट्टानों को पिघलाया और एक आधारभूत आकार में झील बनाई।

लोनार क्रेटर का प्राकृतिक महत्व

लोनार क्रेटर वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी अद्वितीय प्राकृतिक गठन ने वैज्ञानिक समुदाय को विभिन्न पहलुओं में आकर्षित किया है। प्रथमतः यह एक विशाल धातु गिरा निशान है जो धातु विज्ञान और प्लेट तटस्थता के लिए महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करता है। धातु गिरा निशानों के अध्ययन से, वैज्ञानिकों को भू–मंडल के विकास और गतिशीलता की समझ मिलती है। दूसरा, लोनार क्रेटर में पाये जाने वाले जलजीवन और जैविक विविधता भी महत्वपूर्ण है। यहाँ पायें जाने वाले मीठे पानी की झील में अनूठे प्राणियों को निवास है। कई प्रकार के माइक्रोबियल जीवन, जलीय पौधे, जलचर पक्षी, मछलियाँ और अन्य जीव यहाँ पाये जाते है। इससे वैज्ञानिकों को पृथ्वी पर असाधारण जैव विविधता के अध्ययन करने का मौका मिलता है।

लोनार क्रेटर को पर्यटन स्थल के रूप में लोकप्रियता मिली है। इसकी सुंदरता और उन्नत पर्यटन सुविधाओं ने लोगों को आकर्षित किया है। यह एक प्रमुख पर्यटन स्थल बन गया है जहाँ लोग पर्यटन और प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद उठाते हैं। यहाँ कई देशीय और विदेशी पर्यटक आते हैं ताकि वे इस अद्वितीय स्थान को अपनी प्रत्यक्ष आंखों से देख सकें और इसके खूबसूरत दृश्य का आनंद ले सकें। पर्यटकों के लिए यहां कई आवासीय और व्यावसायिक सुविधाएं उपलब्ध हैं, जैसे कि होटल, रेस्टोरेंट, यात्री निवास, गाइड सुविधाएं, जलयात्रा और प्राकृतिक जीवन के दर्शन के लिए नैचर वॉक टूर।

लोनार क्रेटर ने अपने प्राकृतिक महत्व के साथ–साथ धार्मिक महत्व भी प्राप्त किया है। यह स्थान विभिन्न धार्मिक संप्रदायों के श्रद्धालुओं के लिए महत्वपूर्ण है। इसके पास स्थित गौरीशंकर मंदिर, जिसे लोकांगनी मंदिर के नाम से भी जाना जाता है, हिन्दू श्रद्धालुओं की मुख्य धार्मिक स्थलों में से एक है। यहाँ श्रद्धालुओं को धार्मिक आनंद और शांति का अनुभव होता है। इसके अलावा, इस जगह पर अन्य धार्मिक स्थलों जैसे कि बौद्ध विहार, मस्जिद और गुरुद्वारे भी हैं, जो विभिन्न सांस्कृतिक व सामुदायिक सौहार्द का प्रतीक हैं।

लोनार क्रेटर मानव इतिहास के एक महत्वपूर्ण और आश्चर्यजनक रहस्य के रूप में पहचाना जाना चाहिए। यह एक ऐसा स्थान है जो हमें पृथ्वी की सृजनशीलता और

प्राकृतिक शक्ति का आदर्श प्रतिबिम्ब दिखाता है। इसकी गहरी और रहस्यमयी छवि मनोहारी है और इसे देखने वाले लोगों को यह विचारशील और आश्चर्यजनक महसूस कराता है।

लोनार क्रेटर की सुंदरता उसकी प्रमुख आकृति, विशालता और प्राकृतिक तत्वों में छिपे विविध रंगों में छुपी है। यह देखने में एक विशालवाणी की तरह है, जो अपार शक्ति और प्रभाव द्वारा संतुष्ट होती है। इसकी पतली और ऊंची दीवारें, खड़ी कठिनाई, चट्टानों का आकार, और गहरा नीली झील सभी इसे एक अद्वितीय और आकर्षक स्थान बनाते हैं। लोनार क्रेटर एक ऐसा स्थान, जहां प्राकृतिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संगम होताहै।

लोनार क्रेटर का संदर्भ पौराणिक कथाओं में भी आता है जिसकी वजह से इसका ऐतिहासिक महत्व भी हो जाता है। कहा जाता है कि महाभारत काल में यहां एक विशाल घोरा बच्चा स्थित था, जिसे बानासुर नामक राक्षस ने उत्पन्न किया था। इसके साथ ही, कुछ पौराणिक कथाओं में यह बताया जाता है कि लोनार क्रेटर उस स्थान का परिणाम है जहां विष्णु भगवान ने बूंदों को गिराकर एक गहरी झील बनाई थी।

लोनार क्रेटर के आस–पास एक सांस्कृतिक माहौल है जो विभिन्न लोक–नृत्य, संगीत और कला की प्रदर्शनी के माध्यम से दिखता है। यहां प्राचीन मंदिर, मूर्तियाँ, वैदिक यज्ञालय और प्राचीन स्मारक आपको मनोहारी और आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करते हैं। लोनार के पास स्थित आंबा आई मंदिर जैसे धार्मिक स्थल अधिकांशतः नवीनीकृत हो चुके हैं, लेकिन उनमें अपनी मूल संस्कृति और महत्त्व की एक प्रतिष्ठा है। इसके अलावा, लोनार क्रेटर के निकट गांवों में कई आदिवासी समुदाय बसे हुए हैं, जो अपनी परंपरागत जीवनशैली को बनाए रखने में लगे हैं। इन समुदायों के लोग अपने विशेष कला–संस्कृति, गीत, नृत्य और शिल्पकला के माध्यम से आपको अपनी संस्कृतिक विरासत के बारे में जानने का मौका देते हैं। इससे यह स्थान एक सांस्कृतिक और आदिवासी पर्यटन का भी केंद्र बन गया है। इस क्षेत्र में भ्रमण कर पर्यटकों द्वारा क्षेत्र की सांस्कृतिक विरासत का अनुभव किया जा सकता है।

लोनार क्रेटर वैज्ञानिक अध्ययनों के लिए भी महत्वपूर्ण है। इसका अध्ययन मानव ज्ञान को बढ़ाने और जल जीवन के मायने को समझने में सहायक है। यहां वैज्ञानिक अनुसंधान केंद्र स्थापित हैं जहां वैज्ञानिक और शोधकर्ता लोनार क्रेटर के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हैं। यहां विभिन्न जैविक और अजैविक घटकों पर शोध विश्लेषण किया जाता है ।

यह झील मीठे पानी वाली झील है, लेकिन उच्च ऐल्कलिनता और खारापन के बावजूद, यह विविध पारिस्थितिकी को बनाए रखती है। झील का पानी प्रमुख रूप से वर्षा और स्थानीय भूजल स्रोतों द्वारा पूरा होता है। ऐसी महत्वपूर्ण लोनार झील को एक बार अवश्य देखने जाना चाहिए।

वायुमंडल : इसकी संरचना और बलों का अनावरण

वैभव काण्डवाल
भौतिकी विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

हमारे पृथ्वी ग्रह के चारों ओर विद्यमान विशाल एवं गतिमान वायुमंडल अपने भीतर कई रहस्यों और गतिविधियों को समाये हुए है। हमारा वातावरण ही इस ग्रह को रहने योग्य बनाता है। वायुमंडल हमारे परिवेश की जलवायु, मौसम, श्वसनीय वायु आदि के प्रारूप को आकार देने वाले बलों का एक जटिल जाल है। अतः वायुमंडल के भीतर कार्यरत बल एवं वहन तंत्र, वायुमंडल की संरचना तथा संघटन आदि को समझना पृथ्वी पर जीवन बनाये रखने वाले नाजुक संतुलन के लिए महत्त्वपूर्ण है। यह ध्यातव्य है कि पृथ्वी की भांति कुछ खगोलीय पिंडों पर भी वायुमंडल है, जबकि कुछ पर यह अनुपस्थित है। इसका कारण यह है कि पृथ्वी पर मौजूद गैसों का वेग, पृथ्वी के प्रभावी गुरुत्व क्षेत्र से बाहर जाने के लिए आवश्यक पलायन वेग से कम है जिसके फलस्वरूप पृथ्वी पर वायुमंडल का अस्तित्व है। इस आलेख के माध्यम से हम वायुमंडल की रोमांचक यात्रा की ओर बढ़ते हुए वायुमंडल के मूलभूत रहस्यों को जानने का प्रयास करेंगे।

हमारा वायुमंडल विभिन्न गैसों से मिलकर बना हुआ है जिसमें नाइट्रोजन (लगभग 78%) तथा ऑक्सीजन (लगभग 21%) प्रमुख गैस हैं जो कि अधिक मात्रा में उपस्थित होती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य गैसें (लगभग 1%) जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, आर्गन, मीथेन, ओज़ोन, जलवाष्प आदि गैसें भी हमारे वायुमंडल में उपस्थित हैं। इन गैसों के घनत्व तथा भार में अंतर तथा वायुमंडलीय अपवाह के कारण पृथ्वी पर इन गैसों का अनुपात स्थान एवं ऊंचाई के साथ–साथ भी परिवर्तित होता है। इस कारण भिन्न–भिन्न ऊंचाई पर उपस्थित गैसों द्वारा परिलक्षित विभिन्न गुणों के आधार पर वायुमंडल को ऊर्ध्वाधर दिशा में विभिन्न स्तरों अथवा परतों अथवा मंडलों के रूप में विभक्त माना जा सकता है। अधिकांश वायुमंडलीय गैसें पहले 30 किलोमीटर के भीतर मौजूद हैं, जबकि शेष गैसें बड़ी दूरी पर बिखरी हुई हैं। मौसम के पैटर्न और घटनाएं वायुमंडल के पहले 10 से 15 किलोमीटर के भीतर होते हैं। वायुमंडल की प्रत्येक परत कुछ विशेष गुणधर्म रखती है तथा अपनी विशिष्ट भूमिका का निर्वहन करती है। क्षोभमंडल के क्षुब्ध मौसम से लेकर तापमंडल में ऑरोरा के निर्माण जैसी मनोरम घटनाएँ भी वायुमंडल की विभिन्न परतों में होती हैं।

कार्बन–डाइ–ऑक्साइड जैसी ट्रेस गैसें एक छोटे प्रतिशत में उपस्थित होती हैं, परन्तु वैश्विक उष्णता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सौर ऊर्जा से उत्तप्त होकर जब पृथ्वी अवरक्त विकिरण का मोचन करती है, तब जलवाष्प और कार्बन डाइऑक्साइड जैसी गैसें बाहर जाने वाले अवरक्त विकिरण को पकड़ लेती है। परिणामस्वरूप पृथ्वी के तापमान में वृद्धि होती है। इस घटना को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं। इसके अतिरिक्त, वायुमंडल में एरोसोल जैसे निलंबित कण होते हैं, जो बादल बनाने के लिए संघनन नाभिक के रूप में कार्य करते हैं। इस प्रकार मौसम के पैटर्न, जलवायु परिवर्तन और हमारे ग्रह पर जीवन का समर्थन करने वाले नाजुक संतुलन को समझने के लिए पृथ्वी के वायुमंडल की संरचना और संरचना को समझना महत्त्वपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त वायुमंडल में गैसों के परिवहन का जटिल नृत्य विभिन्न प्रकार के वायुमंडलीय बलों द्वारा प्रभावित होता है। ये बल वायुमंडल में अपवाह के साथ–साथ विविध प्रकार की गतिविधियों एवं मौसम आदि के निर्धारण के लिए भी उत्तरदायी होते हैं।

वायुमंडल की ऊर्ध्वाधर संरचना

वातावरण एक गतिशील और हमेशा– बदलने वाली इकाई है जो अलग–अलग परतों में संरचित है। इन परतों की अद्वितीय विशेषताएं पृथ्वी की प्रणालियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ग्रह की सतह से लेकर अंतरिक्ष के किनारे तक वायुमंडल को मुख्य रूप से पांच प्राथमिक परतों में विभाजित किया जा सकता है: क्षोभमंडल (ट्रोपोस्फीयर), समताप मंडल (स्ट्रेटोस्फीयर), मध्यमंडल (मेसोस्फीयर), बाह्यमंडल (थर्मोस्फीयर) और बहिर्मंडल (एक्सोस्फीयर)।

प्रत्येक परत अपना महत्त्व रखती है और वातावरण के समग्र व्यवहार में योगदान करती है।

1. क्षोभमंडल (ट्रोपोस्फीयर)

क्षोभमंडल वायुमंडल की सबसे निचली परत है, जो पृथ्वी की सतह से लगभग 7 से 17 किलोमीटर (4 से 11 मील) की औसत ऊंचाई तक फैली हुई है। यह वह जगह है जहां मौसम की घटनाएं होती हैं, और हवा का तापमान आमतौर पर बढ़ती ऊंचाई के साथ घटता है। क्षोभमंडल में वायुमंडलीय गैसों का क्षुब्ध मिश्रण, संवहन प्रक्रियाओं, और बादलों और वर्षा की उपस्थिति आदि इस परत की विशेषता है।

इस परत के भीतर ही तूफान और पवन प्रणालियों सहित पृथ्वी के अधिकांश मौसम पैटर्न आकार लेते हैं।

2. समताप मंडल (स्ट्रेटोस्फीयर)

क्षोभमंडल के ऊपर समताप मंडल स्थित है, जो क्षोभमंडल के शीर्ष से आरम्भ होकर पृथ्वी तल से लगभग 50 किलोमीटर (31 मील) की ऊँचाई तक फैला हुआ है। क्षोभमंडल के विपरीत, समताप मंडल में तापमान आमतौर पर ऊंचाई के साथ बढ़ता है। यह वृद्धि मुख्य रूप से ओजोन परत की उपस्थिति के कारण होती है, जो सौर पराबैंगनी विकिरण को अवशोषित करती है, जिसके प्रभावस्वरुप इस परत में उष्णता की वृद्धि होती है। थोड़े ऊर्ध्वाधर मिश्रण के साथ समताप मंडल अपेक्षाकृत शांत और स्थिर है। यह एक सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करता है, हानिकारक पराबैंगनी विकिरण को छानता है और पृथ्वी पर जीवन के रखरखाव की अनुमति देता है।

3. मध्यमंडल (मेसोस्फीयर)

समताप मंडल से ऊपर, मध्यमंडल पृथ्वी की सतह से लगभग 50 से 85 किलोमीटर (31 से 53 मील) तक फैला हुआ है। इस परत में ऊंचाई बढ़ने के साथ तापमान घटता जाता है। मध्यमंडल की विशेषता इसका बेहद कम तापमान है, जो इसकी ऊपरी सीमा के पास -90 डिग्री सेल्सियस (-130 डिग्री फ़ारेनहाइट) तक कम हो जाता है। यह वह परत भी है जहां उल्काएं वायुमंडल में प्रवेश करने पर जलती हैं, जिससे प्रकाश की मंत्रमुग्ध कर देने वाली धारियां बनती हैं जिन्हें टूटता तारा (शूटिंग स्टार्स) के रूप में जाना जाता है।

4. बाह्यमंडल अथवा तापमंडल (थर्मोस्फीयर)

बाह्यमंडल, मध्यमंडल के शीर्ष से पृथ्वी की सतह से लगभग 600 किलोमीटर (373 मील) ऊपर तक फैला हुआ है। नीचे की परतों के विपरीत, बाह्यमंडल ऊंचाई के साथ तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि का अनुभव करता है। हालांकि, अणुओं के बेहद कम घनत्व के कारण बाह्यमंडल की ऊष्मा की मात्रा सीधे ध्यान देने योग्य नहीं होती है। बाह्यमंडल वह परत भी है जहां ध्रुवीय क्षेत्रों में प्रकाश के झिलमिलाते ऑरोरा, सूर्य के आवेशित कणों के रूप में पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र के साथ परस्पर क्रिया करते हैं।

5. बहिर्मंडल (एक्सोस्फीयर)

वायुमंडल की सबसे बाहरी परत बहिर्मंडल है, जो पृथ्वी की सतह से लगभग 600 किलोमीटर (373 मील) ऊपर शुरू होती है और धीरे–धीरे अंतरिक्ष में परिवर्तित हो जाती है। बहिर्मंडल के अणुओं का घनत्व काफी कम होता है, और इस परत में मौजूद कण अंतरिक्ष में पलायन कर सकते हैं। उपग्रह और अंतरिक्ष यान अपने स्वयं के संवेग और ग्रह के गुरुत्वाकर्षण खिंचाव से प्रेरित होकर बहिर्मंडल के भीतर पृथ्वी की परिक्रमा करते हैं।

वायुमंडल में होने वाली अनूठी प्रक्रियाओं और घटनाओं को समझने के लिए वातावरण का इन अलग–अलग परतों के रूप में विभाजन आवश्यक है। क्षोभमंडल में गतिशील मौसम प्रणालियों से लेकर समताप मंडल में सुरक्षात्मक ओजोन परत और थर्मोस्फीयर में मंत्रमुग्ध कर देने वाले अरोरा तक, प्रत्येक परत हमारे वायुमंडलीय पर्यावरण के जटिल टेपेस्ट्री में योगदान करती है। जलवायु, मौसम के पैटर्न और पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने वाले नाजुक संतुलन का अध्ययन करने के लिए वातावरण की संरचना की खोज और समझना महत्वपूर्ण है।

वायुमंडल के प्रमुख प्राचलों में परिवर्तन

वायुमंडल एक गतिशील इकाई है, और जैसे ही हम इसकी परतों के माध्यम से आगे बढ़ते हैं, हम दाब, तापमान, घनत्व और संरचना में महत्वपूर्ण भिन्नताओं का सामना करते हैं। वातावरण के व्यवहार और मौसम, जलवायु और समग्र पृथ्वी प्रणाली पर इसके प्रभाव को समझने के लिए ये विविधताएँ आवश्यक हैं।

दाब किसी दिए गए स्थान में किसी एकांक क्षेत्रफल के ऊपर वायुमंडल द्वारा लगाए गए बल को प्रदर्शित करता है। वायुमंडलीय गैसों के लिए तरल यांत्रिकी के सिद्धांतों का प्रयोग करके दाब में परिवर्तन ज्ञात किया जा सकता है। हम जानते हैं कि किसी तरल में नीचे से ऊपर की ओर जाने पर ऊंचाई (y) के साथ दाब (P) में परिवर्तन की दर निम्न सम्बन्ध द्वारा ज्ञात की जा सकती है।

$$\frac{dP}{dy} = -\rho g$$

यदि वायुमंडल में गैसों का व्यवहार आदर्श गैस की भांति माना जाये तो गैसों का घनत्व (ρ) उनके दाब के समानुपाती माना जा सकता है। इस स्थिति में समाकलन करने किसी ऊंचाई (h) पर वायुमंडलीय दाब निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है।

$$P = P_0 e^{-\alpha h}$$

इससे स्पष्ट है कि जैसे–जैसे हम वायुमंडल में ऊपर की ओर जाते हैं, वायुमंडलीय दाब चरघातांकीय रूप से घटता है । दबाव में यह कमी मुख्य रूप से बढ़ती ऊंचाई के साथ हवा के अणुओं के घटते घनत्व के कारण है। पृथ्वी की सतह के पास वायुमंडलीय दाब सबसे अधिक तथा बाह्यतम वायुमंडलीय परत में सबसे कम होता है। हालाँकि, क्षोभमंडल में (जहां मौसम प्रणालियां बनती हैं) दबाव में कमी की दर अपेक्षाकृत स्थिर होती है।

तापमान एक और महत्वपूर्ण प्राचल (पैरामीटर) है जो ऊंचाई के साथ उल्लेखनीय भिन्नता प्रदर्शित करता है। क्षोभमंडल में तापमान आम तौर पर 6.5 डिग्री सेल्सियस प्रति किलोमीटर (3.6 डिग्री फ़ारेनहाइट प्रति मील) की औसत दर से घटता है, जिसे चूक दर के रूप में जाना जाता है। ऊंचाई के साथ तापमान में यह कमी घटते घनत्व और वातावरण के ताप–अवशोषित गुणों के कारण होती है। हालांकि, समताप मंडल में, ओजोन परत की उपस्थिति के कारण तापमान ऊंचाई के साथ बढ़ने लगता है, जो सौर पराबैंगनी विकिरण को अवशोषित और पुनर्वितरित करता है।

समताप पर, एक संक्रमण बिंदु होता है जहां तापमान लगभग एकसमान हो जाता है, जिसका अर्थ है कि यह ऊंचाई के साथ अपेक्षाकृत स्थिर रहता है। मध्यमंडल में, तापमान फिर से घटते हुए काफी कम परिमाण तक पहुंचता है। दूसरी ओर, उच्च–ऊर्जा सौर विकिरण के अवशोषण के कारण तापमंडल ऊंचाई के साथ एक पर्याप्त तापमान वृद्धि प्रदर्शित करता है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि तापमान में वृद्धि के बावजूद, हवा के अणुओं के कम घनत्व के कारण तापमंडल में बहुत कम मात्रा में ऊष्मा (ऊर्जा) होती है।

गैसों का वितरण ऊंचाई के साथ भिन्न हो सकता है, विशेषकर वायुमंडल की ऊपरी परतों में। उदाहरण के लिए, ओजोन परत मुख्य रूप से समताप मंडल में केंद्रित है और पृथ्वी को हानिकारक पराबैंगनी विकिरण से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जलवाष्प की उपस्थिति भी ऊंचाई के साथ–साथ वातावरण के निचले स्तरों में उच्च सांद्रता के साथ महत्वपूर्ण भिन्नता प्रदर्शित करती है।

इस प्रकार वायुमंडलीय प्रक्रियाओं, मौसम के पैटर्न और जलवायु की गतिशीलता का अध्ययन करने के लिए दाब, तापमान, घनत्व और संरचना में होने वाले परिवर्तनों को समझना महत्त्वपूर्ण है। ये विविधताएँ वायुमंडल के व्यवहार को आकार देती हैं, वायु परिसंचरण और बादल निर्माण से लेकर सौर विकिरण और ग्रीनहाउस गैसों के बीच परस्पर क्रिया तक सब कुछ प्रभावित करती है। वायुमंडलीय विविधताओं के जटिल व्यवहार को उजागर करके, वैज्ञानिक हमारे ग्रह की वायुमंडलीय प्रणाली की जटिलताओं और पृथ्वी पर जीवन पर इसके गहरे प्रभाव के बारे में अंतर्दृष्टि प्राप्त करते हैं।

वायुमंडल में कार्यरत बल

वातावरण एक स्थिर इकाई नहीं है; यह लगातार गति में रहता है एवं विभिन्न बलों द्वारा संचालित होता है। ये बल इसके परिसंचरण पैटर्न को आकार देते हैं और मौसम प्रणालियों के व्यवहार को नियंत्रित करते हैं। वायुमंडलीय गतिकी के रहस्यों को जानने के लिए इन बलों को समझना महत्वपूर्ण है। आइए हम अपने वातावरण के भीतर खेलने वाली मूलभूत शक्तियों का पता लगाएं।

1. गुरुत्वाकर्षण

गुरुत्वाकर्षण प्राथमिक बल है जो वायुमंडल को पृथ्वी

की सतह के करीब रखता है। यह त्रिज्य–दिशा में कार्य करता है, वायु के अणुओं को ग्रह के केंद्र की ओर खींचता है। गुरुत्वाकर्षण बल किसी वस्तु के द्रव्यमान के सीधे अनुपातिक होता है, जिसका अर्थ है कि सतह के पास सघन हवा अधिक गुरुत्वाकर्षण खिंचाव का अनुभव करती है। गुरुत्वाकर्षण वातावरण की ऊर्ध्वाधर संरचना को बनाए रखने के साथ–साथ वायु द्रव्यमान के वितरण को प्रभावित करने और उच्च और निम्न दबाव प्रणालियों के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

2. दाब प्रवणता बल

दाब प्रवणता बल वायुमंडल में एक मौलिक बल है जो वातावरण के भिन्न–भिन्न स्थानों में वायु दाब में अंतर के कारण उत्पन्न होता है। हवा स्वाभाविक रूप से उच्च दाब वाले क्षेत्रों से कम दाब वाले क्षेत्रों की ओर चलती है, जिससे हवा बहती है। दाब प्रवणता बल विभिन्न पैमानों पर पवन प्रणालियों के विकास के लिए जिम्मेदार है। कोमल आनंददायक समीर से लेकर शक्तिशाली तूफान तक इसी बल के कारण उत्पन्न होते हैं। बल का परिमाण दाब प्रवणता की स्थिरता पर निर्भर करता है, जिसमें शक्तिशाली दाब प्रवणता तेज हवाओं को अपने अनुरूप दिशा में बहने के लिए उत्तरदायी होती है।

3. कोरिओलिस बल

पृथ्वी के घूर्णन का वायुमंडल में वायु की गति पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जिससे कोरिओलिस बल उत्पन्न होता है। यह एक प्रकार का छद्म बल है जो मुख्यतः उत्तरी गोलार्ध में दाईं ओर तथा दक्षिणी गोलार्ध में बाईं ओर वायु पार्सल सहित गतिमान वस्तुओं के मार्ग को विक्षेपित करता है। कोरिओलिस बल बड़े पैमाने पर पवन प्रणालियों के चक्रण (रोटेशन) के लिए जिम्मेदार है, जैसे कि वायुमंडल के परिसंचरण पैटर्न और तूफान का रोटेशन। इसका प्रभाव उच्च अक्षांशों पर सबसे मजबूत होता है और भूमध्य रेखा के पास नगण्य हो जाता है।

4. वायुमंडलीय घर्षण बल

पृथ्वी की सतह पर, गतिमान वायु और सतह के बीच की अन्योन्य क्रिया स्वयं एक घर्षण बल उत्पन्न करती है। यह बल विशेष रूप से सतह के पास हवा की गति को धीमा करने का कार्य करता है। वायुमंडलीय घर्षण बल भूमि जैसी खुरदरी सतहों पर अधिक प्रमुख होता है, और पानी जैसी चिकनी सतहों पर कम महत्वपूर्ण होता है। निचले वातावरण में, वायुमंडलीय घर्षण बल सतही हवाओं की गति और दिशा को प्रभावित करता है, जिससे दाब प्रवणता और कोरिओलिस बलों द्वारा नियंत्रित आदर्श वायु प्रवाह से विचलन होता है।

5. वायुमंडलीय उत्प्लावक बल

वायुमंडलीय उत्प्लावक बल, तापमान और घनत्व में अंतर से प्रेरित एक बल है जो वायुमंडलीय स्थिरता, बादलों और बिजली के तूफ़ान बनने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हम जानते हैं कि जब एक गर्म गैस के गुब्बारे को हवा में छोड़ा जाता है तो वह वायुमंडलीय उत्प्लावक बल के कारण ऊपर की ओर उठता है। उसी प्रकार जब हवा के पार्सल अपने परिवेश की तुलना में गर्म और कम घने हो जाते हैं, तो वे वायुमंडल में उपस्थित तरल (गैस) के कारण एक उत्प्लावक बल का अनुभव करते हैं जिससे वे ऊपर उठ जाते हैं। यह ऊर्ध्व गति संवहनी बादलों के विकास की ओर ले जा सकती है (उदाहरणार्थः क्यूम्यलस बादल) और गुप्त/प्रसुप्त ऊष्मा के मोचन को गति प्रदान कर सकते हैं, जिससे तूफानों की तीव्रता बढ़ जाती है।

इन मूलभूत बलों को समझकर, शोधकर्त्ता हल्की हवा से लेकर शक्तिशाली तूफान तक, मौसम प्रणालियों के व्यवहार का अनुमान और विश्लेषण करते हैं। गुरुत्वाकर्षण, दबाव प्रवणता बल, कोरिओलिस बल, वायुमंडलीय घर्षण और वायुमंडलीय उत्प्लावक बल के बीच की परस्पर क्रिया परिसंचरण पैटर्न और वायुमंडलीय गतियों को आकार देती है जो हमारे मौसम और जलवायु को निर्धारित करती है। ये बल वायु द्रव्यमान की गति, वायु प्रवाह और तूफानों के निर्माण तथा दुनिया भर में गर्मी और नमी के वितरण को निर्धारित करते हैं। वायुमंडलीय बलों के अध्ययन के माध्यम से, हम उन जटिल अंतःक्रियाओं के लिए गहरी समझ प्राप्त करते हैं जो हमारे वातावरण की गतिशील प्रकृति को संचालित करती हैं।

निष्कर्ष

हमारा गतिशील और हमेशा बदलने वाला वातावरण, हमारे ग्रह के मौसम, जलवायु और पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने वाले नाजुक संतुलन को नियंत्रित करने वाले जटिल तंत्र को समझने की कुंजी रखती है। इस लेख में हमने वातावरण के विभिन्न पहलुओं को समझने का प्रयोग किया है, जिसमें इसकी मूलभूत संरचना और इसके भीतर काम करने वाले बल शामिल हैं।

पृथ्वी की सतह से लेकर अंतरिक्ष के रोमांचक किनारे तक, वातावरण अलग–अलग परतों में संरचित है जो अद्वितीय विशेषताओं का प्रदर्शन करते हैं। क्षोभमंडल, समताप मंडल, मध्यमंडल, तापमंडल और बहिर्मंडल हमारे मौसम के पैटर्न को आकार देने, हमें हानिकारक विकिरण से बचाने और उपग्रहों और अंतरिक्ष यान की गति को सुविधाजनक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमने इसकी परतों के माध्यम से ऊपर जाते समयदाब, तापमान, घनत्व और संरचना में परिवर्तन को उजागर करते हुए वायुमंडल की ऊर्ध्वाधर रूपरेखा को भी जाना है। ये विविधताएं वायुमंडल के व्यवहार को प्रभावित करती हैं, मौसम की घटनाओं को जन्म देती हैं, जैसे तूफान, और ग्रीनहाउस गैसों के जटिल संतुलन में योगदान करती हैं जो पृथ्वी की जलवायु को नियंत्रित करती हैं।

इसके अलावा, हमने वातावरण के भीतर काम करने वाले मूलभूत बलों का अध्ययन किया है। गुरुत्वाकर्षण, दाब प्रवणता बल, कोरिओलिस बल, घर्षण, और उत्प्लावक परिसंचरण पैटर्न को आकार देते हैं, वायु द्रव्यमान के संचलन को चलाते हैं, और कोमल हवाओं से शक्तिशाली तूफानों तक मौसम प्रणालियों के गठन को गति देते हैं। इन बलों की समझ मौसम प्रणालियों के चाल की पूर्वानुमान और विश्लेषण करने के लिए महत्वपूर्ण है।

वायुमंडल पृथ्वी की प्रणालियों के अंतर्संबंधों की एक प्रमाणित कथा है, जहां वायुमंडल, जलमंडल, स्थलमंडल और जीवमंडल के बीच पारस्परिक क्रियाएं जीवन के फलने–फूलने की परिस्थितियों को आकार देती हैं। यह एक नाजुक संतुलन है जिसके लिए हमारे नेतृत्व और समझ की आवश्यकता है। हमारे वातावरण के भीतर संरचना, संघटन और बलों का अध्ययन करके, हम जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने, गंभीर मौसम की घटनाओं की भविष्यवाणी करने और हमारे ग्रह के लिए एक स्थायी भविष्य की दिशा में काम करने के लिए आवश्यक ज्ञान प्राप्त करते हैं। जैसा कि हम अपने वातावरण के रहस्यों का पता लगाना जारी रखते हैं। आइए हम इस गतिशील प्रणाली की विस्मयकारी परिणामों को अपनाएं और आने वाली पीढ़ियों के लिए अपने वातावरण के अनमोल उपहार की रक्षा के लिए मिलकर काम करें।

स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस : भारत की प्रगति का आधार

सौरभ सैनी
कंप्यूटर विज्ञान एवं इंजीनियरिंग विभाग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान इंदौर, म.प्र.

परिचय

भारतीय स्वास्थ्य सेवा प्रणाली एक समृद्ध ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समेटे हुए है, जिसमें प्राचीन ग्रंथ और प्रथाएं हजारों साल पुरानी हैं। हालांकि, महत्वपूर्ण प्रगति के बावजूद, प्रणाली को बड़ी आबादी, सीमित संसाधन, स्वास्थ्य सेवाओं का दूरस्थ इलाकों में ना पहुंचना और कुशल स्वास्थ्य पेशेवरों की कमी जैसी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

हाल के वर्षों में, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) भारत में स्वास्थ्य सेवा वितरण में क्रांति लाने की क्षमता वाले शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरे हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का मतलब है कि कंप्यूटर और मशीन को सोचने और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान की जाती है। जैसे हमारे पास बुद्धिमत्ता होती है और हम विभिन्न कार्यों को सोचकर करते हैं, ठीक वैसे ही AI कंप्यूटर और मशीन को इंस्ट्रक्शन देने और समस्याओं का हल निकालने की क्षमता प्रदान करता है। यह लेख भारत की ऐतिहासिक स्वास्थ्य सुविधाओं का अन्वेषण करता है कि कैसे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) भारतीय स्वास्थ्य सेवा प्रणाली के सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान कर सकते हैं, जिससे यह अपने नागरिकों को बेहतर देखभाल प्रदान कर सके।

भारत में ऐतिहासिक स्वास्थ्य सुविधाएं

भारत में हमारे देश के पूर्वजों ने स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसे प्राचीन काल में खोजा जा सकता है। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति बहुत प्राचीन है, जो लगभग हजारों साल पहले प्रारंभ हुई थी। इसमें समग्र और प्राकृतिक उपचार पर जोर दिया गया तथा आहार, जड़ी–बूटी के उपयोग, योग और ध्यान इत्यादि के द्वारा रोगों के उपचार को भी महत्त्व दिया गया। आयुर्वेद की प्राचीन पुस्तकें, जैसे चरक संहिता और सुश्रुत संहिता, विभिन्न बीमारियों, उपचार तकनीकों और शल्य चिकित्सा के बारे में व्यापक ज्ञान प्रदान करती हैं। देश ने नालंदा और तक्षशिला जैसे शिक्षा के प्रसिद्ध केंद्रों की स्थापना भी देखी है, जिसमें चिकित्सा शिक्षा को उनके पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग के रूप में शामिल किया गया। प्राचीन भारतीय चिकित्सकों ने रोगों के वर्गीकरण, शल्य चिकित्सा तकनीकों और जड़ी–बूटी के उपयोग सहित चिकित्सा ज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

मध्यकालीन भारत में, मुग़ल और ब्रिटिश शासकों ने अपनी स्वयं की स्वास्थ्य प्रणालियों की शुरुआत की, जिससे भारत में नई चिकित्सा तकनीकों और संस्थानों का प्रवेश हुआ। ब्रिटिश राज ने स्वास्थ्य ढांचे को आधुनिकीकृत करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। देशभर में मेडिकल कॉलेज, अस्पताल और सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली स्थापित किए गए। इन ऐतिहासिक विकासों के बावजूद, भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली अभी भी विभिन्न चुनौतियों के कारण अपनी विशाल आबादी के स्वास्थ्य आवश्यकताओं को पूरा करने में संघर्ष कर रही है।

भारतीय स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में चुनौतियां

भारतीय स्वास्थ्य सेवा प्रणाली को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो सभी नागरिकों को गुणवत्ता पूर्ण स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने में कठिनाईयाँ उत्पन्न करती हैं। इन कठिनाईयों में निम्न चुनौतियाँ शामिल हैं।

जनसंख्या का दबाव

भारत की 1.4 अरब से अधिक की आबादी स्वास्थ्य संसाधनों और बुनियादी ढांचे पर एक महत्वपूर्ण बोझ डालती है। रोगियों की विशाल संख्या समय पर गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने की प्रणाली की क्षमता को प्रभावित करती हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा का अभाव

स्वास्थ्य सेवाएं अक्सर शहरी क्षेत्रों में केंद्रित होती हैं, जिससे ग्रामीण और दूर दराज के क्षेत्रों को कम सेवा मिलती है। लंबी दूरी, परिवहन की कमी, और अपर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाओं जैसी अभिगम्यता बाधाएं कई व्यक्तियों को समय पर चिकित्सा प्राप्त करने से रोकती हैं।

स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों की कमी

भारत में डॉक्टर, नर्स और अन्य स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों की कमी है, जिससे मरीजों की संख्या के साथ पेशेवरों की संख्या में अंतर हो जाता है। यह कमी स्वास्थ्य कर्मियों के लिए काम के बोझ को बढ़ाती है, इसके कारण स्वास्थ्य कर्मियों को अधिक काम करना पड़ता है जिससे स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता पर काफी असर पड़ता हैं।

इंफ्रास्ट्रक्चर और संसाधनों की कमी

भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली को इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी, सीमित मेडिकल उपकरणों की उपलब्धता और स्वास्थ्य सेवा के लिए पर्याप्त वित्त की कमी के कारण चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कई स्वास्थ्य सुविधाओं में आवश्यक संसाधन, जैसे निदान उपकरण और आधुनिक चिकित्सा उपकरण, उन्नत स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने की उनकी क्षमता को सीमित करते हैं।

चिकित्सा में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस द्वारा चुनौतियों पर काबू पाना

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस भारत में स्वास्थ्य सेवा के सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान करके भारत में स्वास्थ्य सेवा को बदलने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता हैं। कुछ प्रमुख क्षेत्र हैं जहाँ आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं।

रोगों की पहचान और निदान का समय पर खोज

एआई–संचालित एल्गोरिदम चिकित्सा आंकड़ों का विश्लेषण कर सकते हैं, जैसे कि लक्षण, चिकित्सा इतिहास और नैदानिक रिपोर्ट, स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों को रोगों की पहचान और निदान में अधिक सटीकता और तेजी से मदद कर सकते हैं। इससे उपचार जल्दी शुरू करने और रोगी के चिकित्सीय परिणामों में सुधार करने में मदद मिल सकती है।

टेलीमेडिसिन और रिमोट हेल्थकेयर

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस संचालित टेलीमेडिसिन प्लेट फॉर्म द्वारा दूरस्थ क्षेत्रों में रहने वाले लोगो तक स्वास्थ्य सेवाओं को पहुंचाया जा सकता हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एल्गोरिदम दूर से रोगी डेटा का विश्लेषण कर सकता हैं। डॉक्टरों को रोगी के साथ शारीरिक रूप से मौजूद नहीं होने पर भी निदान और उपचार के निर्णय लेने में मदद करते हैं।

पूर्वानुमानीय विश्लेषण और रोग सतर्कता

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से बड़ी मात्रा में स्वास्थ्य संबंधी आंकड़ो का विश्लेषण करके पैटर्न की पहचान करने और रोग के प्रकोप की भविष्यवाणी कर सकते हैं। इससे जनस्वास्थ्य के लिए प्रतिक्रियाशील उपाय लिए जा सकते हैं, जैसे रोकथाम रणनीतियों को लागू करना और संसाधनों का आवंटन करना, जहां उनकी सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है।

संसाधनों के प्रभावी उपयोग

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस स्वास्थ्य संसाधनों की बेहतर प्रबंधन में मदद कर सकते हैं, जैसे कि कर्मचारियों, अपॉइंटमेंट और अस्पताल कार्यों को संचालित करने में। इससे संसाधनों का प्रभावी उपयोग होगा, रोगियों को प्रतीक्षा करने का समय कम होगा, और स्वास्थ्य संसाधनों का प्रभावी उपयोग होगा।

मेडिकल इमेजिंग और डायग्नोस्टिक्स

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस मेडिकल इमेजिंग, जैसे कि एक्स–रे, एमआरआई, और सीटी स्कैन का विश्लेषण और मेडिकल स्थितियों की सटीक–डायग्नोसिस करके डॉक्टरों को मदद कर सकता हैं। यह डायग्नोसिस की प्रक्रिया को तेजी से करता है, जिससे समय पर उपचार की संभावना बढ़ जाती है।

निष्कर्ष

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विज्ञान भारतीय स्वास्थ्य सिस्टम में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। भारत का पारंपरिक स्वास्थ्य प्रथाओं का एक समृद्ध इतिहास

है, लेकिन उच्च जनसंख्या, स्वास्थ्य सुलभता की सीमाएं, पेशेवरों की कमी और संसाधनों की सीमाएं जैसी चुनौतियों का सामना अभी भी करना पड रहा हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से इन चुनौतियों का समाधान किया जा सकता है। यह पहले से ही बीमारियों की पहचान और निदान में मदद कर सकता है। टेलीमेडिसिन के माध्यम से दूरस्थ चिकित्सा प्रदान की जा सकती है। रोग फैलाव की पूर्वानुमान, नई दवाओं की खोज, संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन, और सटीक निदान के लिए चिकित्सा छवियों का विश्लेषण कर सकता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग करके स्वास्थ्य सेवाओं के पेशेवरों को सही निर्णय लेने और समय पर उपचार सुनिश्चित करने में सहायता की जा सकती हैं। भविष्य में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विज्ञान को स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों को सशक्त बनाने, संसाधनों का उपयोग अधिकतम करने, निदान और उपचार में सुधार करने और अंततः सभी नागरिकों के लिए बेहतर स्वास्थ्य परिणाम प्रदान करने में मदद कर सकता है। निवेश, शोध और योजनाबद्ध अमल के साथ, भारतीय स्वास्थ्य तंत्र आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विज्ञान की शक्ति को उपयोग करके एक स्वस्थ भविष्य निर्माण कर सकता है।

भारत में ऊर्जा भंडारण के रूप में लिथियम–आयन बैटरी

प्रवीण कुमार
रसायन शास्त्र विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

वैश्विक स्तर पर सभी प्रमुख ऑटोमोटिव बाजारों में, हम विद्युत गतिशीलता में परिवर्तनकारी बदलाव देख रहे हैं। अपने जलवायु लक्ष्यों को पूरा करने, वायु गुणवत्ता में सुधार लाने, आयातित तेलों पर निर्भरता कम करने और मिश्रण में बढ़ती नवीकरणीय हिस्सेदारी के साथ अपनी ऊर्जा अधिशेष का दोहन करने की दृष्टि से, भारत इस वैश्विक प्रवृत्ति का पालन करने का इच्छुक है। इलेक्ट्रिक वाहनों (ईवी) में, बैटरी न केवल ऊर्जा भंडारण का माध्यम हैं, बल्कि प्रदर्शन निर्धारण करने, विश्वसनीयता सुनिश्चित करने और लागत, वाहन रेंज और चार्जिंग गति सहित मेट्रिक्स में ग्राहक स्वीकृति प्राप्त करने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।

Li–आयन बैटरी की संरचना

लिथियम–आयन बैटरी दो सम्मिलन इलेक्ट्रोड (एनोड और कैथोड) से बनी होती हैं, जिनके बीच में एक इलेक्ट्रोलाइट होता है। इलेक्ट्रोलाइट एक आयनिक प्रवाहकीय माध्यम है जो लिथियम आयनों को एनोड और कैथोड के बीच परिवहन करने की अनुमति देता है। एनोड और कैथोड इलेक्ट्रॉनिक रूप से एक गैर–प्रवाहकीय झिल्ली से अलग होते हैं, जिससे लिथियम आयनों के परिवहन की अनुमति मिलती है लेकिन शॉर्ट–सर्किट से बचने के लिए इलेक्ट्रॉन को इस झिल्ली द्वारा रोक दिया जाता है।

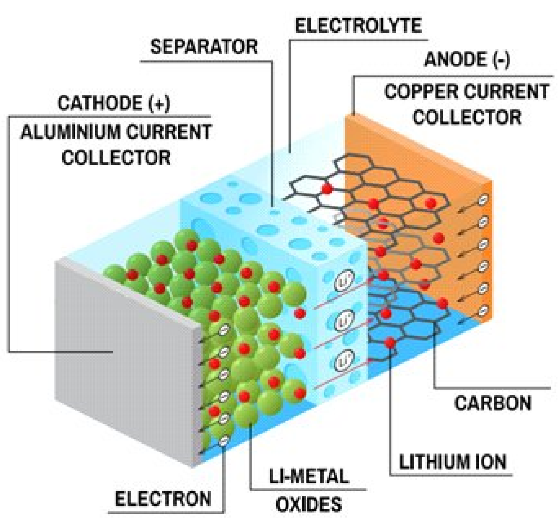

चित्र 1 : आवेशित अवस्था के दौरान Li–आयन बैटरियों में अंतर्संबंध तंत्र का आरेखीय दृश्य।

भारत में बैटरी अनुसंधान और विकास की उन्नति

शैक्षणिक मोर्चे पर, कुशल ऊर्जा भंडारण प्रणालियों, विशेष रूप से बैटरी के विकास की दिशा में भारत के प्रमुख संस्थान इस दिशा में काम कर रहे हैं। 2018 में, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के विक्रम सारा भाई स्पेस सेंटर ने उपग्रहों और लॉन्च वाहनों में उपयोग के लिए 1.5 से 100Ah (एम्पीयर–ऑवर) तक की क्षमता वाली लिथियम–आयन सेल को सफलतापूर्वक विकसित और योग्य बनाया है। इसरो ने भारत में इलेक्ट्रिक वाहनों हेतु लिथियम–आयन बैटरी बनाने के लिए भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड के साथ एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं। सीएसआईआर–केंद्रीय विद्युत रसायन अनुसंधान संस्थान ने 18650 सेलों के लिए प्रोटोटाइप लिथियम–आयन निर्माण सुविधा विकसित की है। यह भारत की पहली पायलट प्लांट सुविधा है जो लिथियम–आयन बैटरी की क्षमता में सुधार के लिए समर्पित है, और 1500 मिली एम्पीयर / 3.7 वोल्ट की क्षमता के साथ लिथियम–आयन सेल का निर्माण करेगी।

सीएसआईआर–केंद्रीय विद्युत रसायन अनुसंधान संस्थान एक दशक से अधिक समय से जिंक ब्रोमाइड (ZnBr) रेडॉक्स फ्लो बैटरी के विकास में शामिल है। सेंटर फॉर मैटेरियल्स फॉर इलेक्ट्रॉनिक्स टेक्नोलॉजी पुणे प्रयोगशाला वर्तमान में नैनो कार्यात्मक सामग्री और उच्च ऊर्जा घनत्व लिथियम–आयन सेल/बैटरी का उपयोग करके ईंधन सेल प्रोटोटाइप के विकास पर काम कर रही है। सेंटर फॉर ऑटोमोटिव एनर्जी मैटेरियल्स, आईआईटी–मद्रास पायलट प्लांट स्केल पर लिथियम–आयन सेल और बैटरी पैक के लिए अनुसंधान सुविधा स्थापित करके

इलेक्ट्रिक वाहनों और हाइब्रिड इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए लिथियम– आयन बैटरी विकसित कर रहे हैं। अशोक लेलैंड जैसे निजी उद्योग पहले से ही लिथियम–आयन बैटरी पर आधारित ईवी के निर्माण में लगे हुए हैं और सेंटर फॉर ऑटोमोटिव एनर्जी मैटेरियल्स ने ईवी के लिए इन–हाउस लिथियम– बैटरी तकनीक का प्रदर्शन करने के लिए बातचीत शुरू की है। आईआईटी–मद्रास वैनेडियम रेडॉक्स फ्लो बैटरी के लिए इलेक्ट्रोड सामग्री और विशिष्ट रेडॉक्स जोड़े पर काम कर रहा है। आईआईटी–बॉम्बे मुख्य रूप से ईवी अनुप्रयोगों के लिए लीथियम–आयन बैटरी और ईंधन सेल के लिए ऊर्जा भंडारण सामग्री विकसित करने पर केंद्रित है। कई आईआईएसईआर और आईआईटी के शोध समूह भी हाइब्रिड आयन कैपेसिटर उपकरणों के विकास की दिशा में काम कर रहे हैं।

भारत में लिथियम–बैटरी विनिर्माण–वर्तमान क्षमताएं और भविष्य की जरूरतें

लागत संरचना के संदर्भ में लिथियम–आयन सेल पूरी बैटरी का ~65 प्रतिशत बनाते हैं। वर्तमान में भारत को सेल निर्माण के लिए सभी कच्चे माल का आयात करना पड़ता है। यह भी संभावना है कि अगले चार से पांच वर्षों में, सेल निर्माण के लिए आवश्यक सभी कच्चे माल का ~55% अभी भी अन्य देशों (मुख्य रूप से चीन) से प्राप्त किया जाएगा। जैसा कि चित्र 2 दिखाता है, बैटरी निर्माण में निवेश उत्तरी क्षेत्र में केंद्रित है। दक्षिणी क्षेत्र में कम निवेश है, जिसमें अमर राजा और ग्रीनटेक एकमात्र बड़े खिलाड़ी हैं, जिसके बाद अपने दूरसंचार ग्राहकों के लिए कोसलाइट इंडिया है। वर्तमान में उपलब्ध आंकड़ों का विश्लेषण करते हुए, भारत 30 GWh से अधिक की संचयी लिथियम–आयन सेल निर्माण क्षमता के लिए ~US$2.2 बिलीयन के निवेश का केंद्र बनेगा। वर्ष 2030 तक 50 GWh की सेल निर्माण क्षमता तक पहुंचने के भारत सरकार के लक्ष्य और उसी के लिए भारत सरकार की प्रोडक्शन लिंक्ड इंसेंटिव स्कीम और नेशनल प्रोग्राम ऑन एडवांस्ड केमिस्ट्री सेल बैटरी स्टोरेज के तहत प्रोत्साहन को देखते हुए, रिलायंस की योजना लक्ष्य को प्राप्त करने में बहुत मदद कर सकती है।

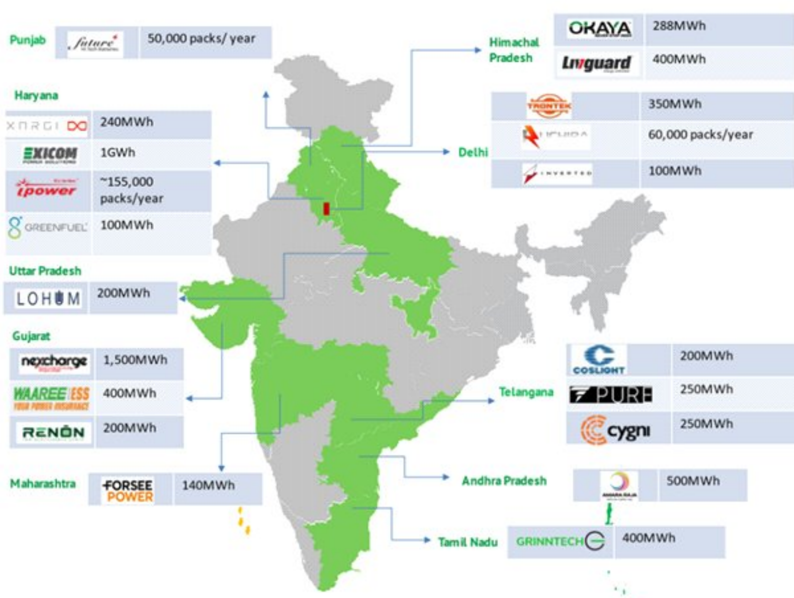

चित्र 2: लिथियम–आयन बैटरी पैक निर्माताओं की मौजूदा क्षमताएं। स्रोतः उद्योग समाचार लेख, साक्षात्कार अंतर्दृष्टि, जेएमके रिसर्च।

भारत विशेष रूप से ईवी उद्योग से लिथियम–आयन बैटरी की भारी मांग देखने के लिए तैयार है। हालाँकि, भारत अब तक लिथियम–आयन सेल का उत्पादन नहीं कर रहा है और आयात के माध्यम से अपनी सभी घरेलू माँगों को पूरा कर रहा है। चीन के साथ चल रहे सीमा तनाव को देखते हुए, भारत लिथियम जैसे प्रमुख खनिजों के लिए केवल चीन पर निर्भर नहीं रह सकता है। हमारे देश में बड़ी संख्या में प्रतिभाशाली और बहुत सक्षम अनुसंधान समूह हैं। भारत सरकार एक ही बैटरी सिस्टम पर काम कर रहे संभावित अनुसंधान समूहों की पहचान करने के लिए प्रयास कर सकती है और विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए संयुक्त परियोजनाएं और स्टार्टअप शुरू कर सकती है।

।। पृथिवीमातुः रक्षणं अस्माकं दायित्वम् अस्ति।।

****

मेट्रोलॉजी : यंत्रों की माप का गुणवत्ता नियंत्रण

संजय गोस्वामी
अणुशक्ति नगर, मुंबई–94

मेट्रोलॉजी शब्द ग्रीक के दो शब्दों से बना है जिसमें मेट्रो का अर्थ होता है माप और लॉजी का अर्थ है विज्ञान। अतः मेट्रोलॉजी एक सटीक माप का विज्ञान है। किसी यंत्र की उच्च सटीकता से लंबाई, चौड़ाई, गहराई, व्यास जैसी मात्रा का मापन जो दो आयामों में होता है और त्रियामों में जैसे बेलन, शंकु, दीर्घवृत्त, गोला आदि का आयतन व कोण जैसे संबंधित मापने का विज्ञान है मेट्रोलॉजी इंजीनियरिंग। मेट्रोलॉजिस्ट वो कहलाता है जो माप के विज्ञान का अध्ययन और उससे संबधित कार्य करता है।

माप, विज्ञान का अध्ययन (मेट्रोलॉजी) का एक शानदार इतिहास रहा है, जिसकी शुरुआत शायद 8,000 साल पहले प्राचीन दुनिया में हुई थी जब कृषि विकास में फसलों के भंडारण और वितरण और परिवारों द्वारा खपत की गई राशि को निर्धारित करने के लिए गणना की आवश्यकता हुई। 2,000 साल पहले रोमन मील की स्थापना की गई थी। 1,000 साल पहले मध्ययुगीन यूरोप में, कीमती धातुओं और व्यापार योग्य वस्तुओं के वजन की गणना के तरीकों की स्थापना की गई। 16वीं से 17वीं शताब्दी में जब तक वैज्ञानिक क्रांति शुरू नहीं हुई, तब तक मेट्रोलॉजी में लंबाई, समय और वजन के लिये एक सुसंगत प्रणाली बनाई गयी जो प्रकृति के सभी पहलुओं यथा मौसम, समय, आदि को माप सकती है। बिजली, परमाणु, उष्मागतिकी आदि के मूल वैज्ञानिक सिद्धांतों के लिए इसकी आवश्यकता थी। 1790 में, क्रांति के मध्य में, फ्रांसीसी सरकार ने अपनी विज्ञान अकादमी से 'सभी मापों और सभी भारों के लिए एक अपरिवर्तनीय मानक निकालने' का अनुरोध किया। इसे 1795 में पूरी तरह से अपनाया गया था। लगभग एक सदी बाद 1875 में, अन्य देशों द्वारा नई मीट्रिक प्रणाली को अपनाने के बाद, पेरिस में मीट्रिक सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें 17 देशों ने संधि पर हस्ताक्षर किए थे (संयुक्त राज्य अमेरिका सहित, जिसके कारण इसकी स्थापना हुई थी)।

वर्ष 1960 ई. में अंतर्राष्ट्रीय मात्रक पद्धति (International System of Units or S-I- Units) को अंतर्राष्ट्रीय माप–तौल के अधिवेशन में स्वीकार किया गया। इस पद्धति में मूल मात्रकों की संख्या सात है।

1. **लंबाई** : इस पद्धति में लंबाई का मूल मात्रक मीटर है।
2. **द्रव्यमान** : द्रव्यमान का मात्रक किलोग्राम को माना गया है।
3. **समय** : इस पद्धति में समय का मात्रक सेकेंड है।
4. **विद्युत–धारा** : विद्युत धारा का मूल मात्रक ऐम्पियर है।
5. **ताप** : ताप का मूल मात्रक 'केल्विन' को माना गया है।
6. **ज्योति–तीव्रता** : इसका मूल मात्रक 'कैण्डेला' है।
7. **पदार्थ की मात्रा** : इसका मात्रक 'मोल' माना गया है।

दशमलव आधारित इकाई मात्रकों की परिकल्पना सर्वप्रथम फ्रांस की क्रान्ति के दौरान पेरिस में 22 जून 1799 को की गई थी। उसके बाद पुनः 1875 और फिर 1889 की गोष्ठियों के बाद मीटर और किलोग्राम के लिए मानक पिण्ड का चयन किया गया। फिर काल (समय) मापन के लिए सेकेण्ड को मानक माना गया और तीन यांत्रिक मात्रकों की स्थापना हुई। समय के साथ विद्युत धारा के लिए एम्पियर, ताप के लिए केल्विन और प्रकाश की दीप्ति के लिए कैण्डिला, का प्रयोग किया जाने लगा। वर्ष 1960 से इन्हें अन्तर्राष्ट्रीय मानक की तरह प्रयोग के लिए अनुमोदित किया गया है। पुनः 1971 में इसमें पदार्थ के द्रव्यमान के लिए मोल इकाई जोड़ी गयी। इसे लघुरूप में एस आई (SI) इकाई भी कहते हैं। सेकेण्ड और मीटर के लिए परिभाषाएँ स्थापित एवं मान्य हैं। किलोग्राम, एम्पियर, केल्विन और गोल इकाइयों की नयी परिभाषाओं को अभी स्थापित किया जाना है। विज्ञानियों की अंतर्राष्ट्रीय समिति की अक्टूबर 2018 में सम्पन्न हुई पेरिस गोष्ठी में निर्णय लिया गया है कि इकाई की नयी परिभाषाएँ स्थापित की जाएं। इनके अनुमोदन के लिए नवम्बर 2019 में समिति की 27वीं गोष्ठी हुई और मई 2020 से नयी परिभाषाओं का प्रयोग आरम्भ हुआ।

इन मात्रकों की परिभाषा में बदलाव का कारण यह है कि

जब हम स्थापित इकाई से परे अति दीर्घ या अति लघु संख्या की ओर जाते हैं तो अनिश्चितता बढ़ती जाती है। उदाहरण के लिए किलोग्राम की परिभाषा एक नियत स्थिरांक है परन्तु जब हम किसी वस्तु का वजन मिलीग्राम में करते हैं तो अनिश्चितता लगभग 2500 गुनी बढ़ जाती है या दूसरे शब्दों में कहें तो वजन के सही परिमाण में त्रुटि होती है। इस त्रुटि का कारण है इकाई मात्रक का चयन करते समय जो तथ्य प्रयुक्त हुआ वह स्वयं स्थिर नहीं है। किलोग्राम इकाई के लिए प्लेटिनम–इरीडियम मिश्र धातु के एक टुकड़े का वजन मात्रक मान लिया गया है। पेरिस की एक तिजोरी में रखे इस टुकड़े की प्रतिकृतियाँ अन्य प्रयोगशालाओं में भी हैं। (इस धातु पिण्ड का भार 4 डिग्री सेंटीग्रेड पर 1 घन डेसीमीटर पानी के आयतन के समान है)। विज्ञानियों को इस तथ्य का भी भान है कि कोई भी पदार्थ हवा के सम्पर्क में कुछ परमाणु मुक्त कर सकता है या अवशोषित कर सकता है। इसके फलस्वरूप 50 वर्षों बाद इस टुकड़े के भार में लगभग 50 माइक्रोग्राम वृद्धि हुई है। अतः अब एक ऐसी इकाई मात्रक की आवश्यकता पर बल दिया जा रहा है जो नियतांकों पर आधारित हो। विज्ञानियों ने दशकों के अथक परिश्रम के बाद मात्रकों की ऐसी नयी परिभाषाएँ गढ़ने में सफलता पाई है जो नियतांकों पर आधारित है। इस प्रकार माप तौल में अनिश्चितता को समाप्त करने में सहायता मिलेगी साथ ही स्थापित इकाई मात्रकों में आपस में संबंध भी दर्शाया जा सकेगा। उदाहरण के लिए किलोग्राम की परिभाषा में प्लांक नियतांक, मीटर और सेकेण्ड तीन इकाइयों का आपसी संबंध होगा।

किलोग्राम का वजन तय करने के लिए वॉट तुला का प्रयोग किया जायेगा। इस तुला में एक पलड़े पर तार की कुण्डली होती है जिमसें विद्युत धारा प्रवाहित कर चुम्बकीय क्षेत्र का निर्माण किया जाता है और दूसरे पलड़े में अज्ञात भार का पिण्ड रखा जाता है। अब भार की गणना के लिए कुण्डली को विस्थापित कर वोल्टेज उत्पन्न किया जाता है और तुला को सन्तुलित करने के लिए प्रयोग किए जाने वाले चुम्बकीय बल, वोल्टेज, धारा की गति और प्लांक नियतांक के आपसी संबंध से एक मात्रा का चयन किया जाता है। इसी प्रकार तापमान की इकाई केल्विन के लिए ध्वनि की गति का प्रयोग किया जाता है। एक ऐसे गैस से भरे गोले में जिसका आयतन ज्ञात है, एक नियत तापमान पर ध्वनि के अनुनाद की आवृत्ति की गणना और गैस के परमाणुओं की गति की सहायता से केल्विन की परिभाषा नियत की जायेगी। इसे एकाउस्टिक थर्मामीटर का नाम दिया गया है। एम्पियर की परिभाषा नियत करने के लिए एकल इलेक्ट्रॉन पम्प की परिकल्पना की गई है। मोल की गणना के लिए सिलिकॉन–28 के शुद्धतम स्वरूप से निर्मित एक गोले में स्थित परमाणुओं की संख्या की गणना की गयी है। भौतिक राशियों के मापन पद्धतियाँ में सेन्टीमीटर–ग्राम–सेकण्ड पद्धति, मीटर–किलोग्राम–सेकण्ड पद्धति अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक पद्धति, फुट–पाउण्ड–सेकण्ड पद्धति हैटर–किलोग्राम–सेकण्ड पद्धति में केवल तीन मौलिक मात्राएँ होती हैं। वे हैं लंबाई, द्रव्यमान और समय। अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक पद्धति (SI) प्रणाली में 7 मौलिक मात्राएँ होती हैं। वे हैं लंबाई, द्रव्यमान, समय, बिजली, प्रकाश की तीव्रता, पदार्थ की मात्रा, तापमान। भौतिक राशियों के मापन के लिए विभिन्न यंत्र मीटर पैमाना, वर्नियर कैलीपर्स, स्क्रूगेज, भौतिक तुला, स्फेरोमीटर, विराम घड़ी आदि हैं। जटिल चीजें गैर–संपर्क लेजर स्कैनिंग, फोटोग्रामेट्री, रोबोटिक निरीक्षण और कंप्यूटेड टोमोग्राफी स्कैनिंग जैसी 3 डी माप प्रौद्योगिकी, जो अब उन्नत और स्मार्ट निर्माण का एक नियमित हिस्सा हैं में सही माप हेतु मेट्रोलॉजिस्ट की डिमांड काफी बढ़ गई है। जिस तरह उद्योग को बुनियादी ढांचे जैसे सड़क, रेलवे, बंदरगाह, हवाई अड्डे, बैंक आदि की आवश्यकता होती है, वैसे ही आर्थिक रूप से सतत विकास सुनिश्चित करने के लिए उद्योग के लिए मेट्रोलॉजिकल सेवाएं आवश्यक हैं। किसी भी परीक्षण प्रयोगशाला को खोलने के लिए इसे एनएबीएल (परीक्षण और अंशांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड) द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए इसके लिए अंशांकन और परीक्षण प्रयोगशालाओं की मान्यता, अंशांकन सेवाएं, माप उपकरणों के रखरखाव के लिए सेवा, आईएसआई का पता लगाने की क्षमता, अंशांकन और परीक्षण प्रयोगशालाओं की मान्यता, प्रमाणन निकायों और निरीक्षण निकायों की मान्यता, विशेष प्रयोगशालाओं द्वारा प्रदान की जाने वाली परीक्षण सेवाएं, परीक्षण उपकरण परीक्षण सुविधा, प्रमाणन निकायों और निरीक्षण निकायों की मान्यता, परामर्श सेवाएं तथा विवाद की स्थिति में तीसरे पक्ष के विशेषज्ञों से परामर्श के लिए

मेट्रोलॉजिकल सेवाएं मेट्रोलॉजी इंजीनियर की आवश्यकता होती है। मेट्रोलॉजी उद्योग, मापन व अंशांकन प्रयोगशालाओं, और विश्वविद्यालयों के लिए परीक्षण के लिए मेट्रोलॉजी विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है उद्योग, व मापन प्रयोगशालाओं, के बीच साझेदारी स्थापित करना, और उपयुक्त अंतरराष्ट्रीय मेट्रोलॉजी मंचों में राष्ट्रीय विशेषज्ञों मेट्रोलॉजी में अनुसंधान और तकनीकी सहयोग और मापन व अंशांकन के बारे में सुझाव भी मेट्रोलॉजी इंजीनियर को देना होता है।

आज मेट्रोलॉजिस्ट मापन, गुणवत्ता नियंत्रण से लेकर अंशांकन तक अनुसंधान और विकास से लेकर ऑनसाइट इंस्टॉलेशन सेटअप तक करते हैं। अनिवार्य रूप से, कुछ भी जिसमें सटीक माप शामिल है और विशेष मशीनों और तकनीकों के उपयोग के लिए मेट्रोलॉजी विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है।

मेट्रोलॉजिस्ट को किसी उपकरण के संचालन के एक समान समान विचलन को व्यवस्थित त्रुटि, कैलिब्रेशन, इंस्ट्रुमेंटेशन त्रुटि, पर्यावरण त्रुटि, यह सुनिश्चित करने के लिए उपकरणों की सटीकता को निर्धारित करने और समायोजित करना होता है। जैसे वॉल्यूमेट्रिक माप में कांच के बने पदार्थ का आयतन मानक परीक्षण उपायों और प्रोवर्स, एलपीजी प्रोवर्स को सटीक रूप से कैलिब्रेट कर शुद्धता जिसके साथ पठन एक स्वीकृत मानक मान तक पहुंचता है।

मेट्रोलॉजी के प्रकार

1. **कानूनी मेट्रोलॉजी**– 'कानूनी मेट्रोलॉजी' मेट्रोलॉजी का वह हिस्सा है जो माप की इकाइयों, विधियों को मानता है माप और माप उपकरण, तकनीकी कानूनी माप विज्ञान अधिनियम, 2009 का पालन कर उपभोक्ता को सप्लायर कोई भी वस्तु देने के लिए मान्यता प्राप्त मानक के आधार पर ही दे सकता है।

'कानूनी माप विज्ञान' की सेवा की गतिविधियाँ हैं:

1) माप उपकरणों का नियंत्रण
2) माप उपकरणों के प्रोटोटाइप / मॉडल का परीक्षण
3) वैधानिक के अनुरूप इसकी पुष्टि करने के लिए एक माप उपकरण की जांच आवश्यकताओं आदि

इन परिवर्तनों और अन्य जो भविष्य में स्पष्ट हो सकते हैं के प्रति उत्तरदायी हैं, तो यह महत्वपूर्ण है कि शुरू की गई व्यवस्थाओं में लचीलापन बनाया जाए। पाँच मुख्य क्षेत्रों पर विचार करना उपयोगी है नीति विकास; संस्थागत संरचनाएं; विधायी व्यवस्था; कार्मिक प्रशिक्षण एवं विकास; तथा जनता और समाज के साथ जुड़ाव होए 'कानूनी मेट्रोलॉजी' में वस्तुतः भारत और राज्य सरकार के उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, सहकारी समितियों, मूल्य निगरानी, द्वारा आवश्यक उपलब्ध वस्तु पर उपभोक्ता और आपूर्तिकर्ता के लिये भारतीय मानक ब्यूरो (बीआईएस) जैसे वैधानिक निकाय पर आधारित वजन और माप के नियंत्रण के लिए नीति का निर्धारण करता है। यदि कोई उपभोक्ता आपूर्तिकर्ता द्वारा देय वस्तु से संतुष्ट नहीं है तो कानूनी मेट्रोलॉजी का सहारा लेकर इसे स्थानीय स्तर के स्थानीय कार्यालय, के संबंधित मंत्रालयों में शिकायत दर्ज कर सकता है जिसे मेट्रोलॉजी इंजीनियर उस वस्तु की स्पष्ट माप मानक के आधार पर देखकर, उपभोक्ता मामलों के मंत्रालय को रिपोर्ट सौंप देता है इसके बाद उपभोक्ता अदालत उस मामले को देखता है।

2. **डायनेमिक मेट्रोलॉजी** : डायनामिक मेट्रोलॉजीएक गतिशील माप को एक माप के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जहां मापी जा रही भौतिक मात्रा समय के साथ बदलती है गतिशील माप के लिए इंटरफेरोमेट्री और समय–औसत इन–लाइन डिजिटल होलोग्राफी की कार्यप्रणाली प्रस्तुत की जाती है में 'एक घूमते हुए सामग्री के बल, टॉर्क को मापने की तकनीक है। यह तकनीक आज बहुत कारगर साबित हुई है और एक से अधिक निरंतर माप का रिकॉर्ड भी मापने वाले यन्त्र में रहता है टॉर्क, मोटर वाहन और जहाज निर्माण अनुप्रयोगों के क्षेत्र में हैं इलेक्ट्रॉनिक उपकरण में ट्रांसड्यूसर के क्षेत्र में बल का सही मापन करना व मुख्य रूप से एयरोस्पेस और घूर्णी गति सामग्री परीक्षण मशीनों में पर लागू होता है। आखिरकार, आखिरकार, घूर्णी गति और शक्ति दोनों के मापन कोमापने की तकनीक है और जहां इस भिन्नता का माप परिणाम और सूक्ष्म–इलेक्ट्रो–मैकेनिकल सिस्टम उपकरणों से संबंधित गतिशील चर को कोड के अनुसार मापा जाता है।

3. **नियतात्मक मेट्रोलॉजी**: नियतात्मक मेट्रोलॉजी संवेदनशील या क्रांतिक मशीन की इकाइयों का किसी

मानक कोड के आधार पर सटीकता से माप करता है जिसमें भाग माप को प्रक्रिया माप द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। इस तकनीक का उपयोग बहुत उच्च परिशुद्धता निर्माण मशीनरी के लिए किया जाता है इसमें महत्वपूर्ण यंत्र को सीएनसी (कंप्यूटर न्यूमेरिकल कंट्रोल) सिस्टम द्वारा 3डी त्रुटि को हटाकर नई तकनीक की विशेषज्ञ प्रणालियाँ लागू की जाती हैं, जिससे यंत्र पूरी तरह से अनुकूली नियंत्रण में होता है। इस तकनीक का उपयोग सूक्ष्म प्रौद्योगिकी और नैनो प्रौद्योगिकी सटीकता प्राप्त करने के लिए बहुत उच्च परिशुद्धता विनिर्माण मशीनरी और नियंत्रण प्रणाली के लिए किया जाता है। विज्ञान एवं अभियांत्रिकी के विभिन्न सूक्ष्म उपकरण, माइक्रो इलेक्ट्रॉनिक्स मैकेनिकल सिस्टम और नैनो टेक्नोलॉजी के कारण माइक्रो मशीनिंग की आवश्यकता बढ़ गई है, जैसे सूक्ष्म पैमाने पर गतिमान यांत्रिक भागों के साथ सूक्ष्म सेंसर, एक्चुएटर और ट्रांसड्यूसर माइक्रो फिल्टर, दवा वितरण प्रणाली, सूक्ष्म सुई और अर्द्ध कंडक्टर उपकरण, रोबोटिक्स और ऑटोमेशन आदि हैं। इसमें इंजीनियरिंग ड्राइंग एवं 3डी सीएडी, प्रिसिजन मशीनिंग (टर्निंग, मिलिंग, ग्राइंडिंग) मेट्रोलॉजी और कोऑर्डिनेट मेजरिंग मशीन, सीएनसी टर्निंग तथा सीएनसी मिलिंग और कैम (CAM) तथा एडवांस मल्टीएक्सिस मशीनिंग और ईडीएम (EDM) वायरकट जैसे यंत्र शामिल हैं।

4. **औद्योगिक मेट्रोलॉजी** : औद्योगिक मेट्रोलॉजी माप उपकरणों की उपयुक्तता सुनिश्चित करने, उनके अंशांकन और गुणवत्ता नियंत्रण को सुनिश्चित करने के लिए विनिर्माण और अन्य प्रक्रियाओं में उनके उपयोग के लिए माप से संबंधित है। यांत्रिक उपकरणों का गुणवत्ता नियंत्रण उद्योग में, मेट्रोलॉजी का उपयोग अक्सर आयामी अनुरूपता की जांच के लिए किया जाता है, यह गुणवत्ता नियंत्रण सुनिश्चित करने का एक तरीका है। यांत्रिक उपकरणों का गुणवत्ता नियंत्रण के लिए यांत्रिक उपकरणों का आयामी निरीक्षण किया जाता है।

भूमिका :

किसी भी उद्योग हेतु माप की अहम् भूमिका है। उद्योगों में मापन का उपयोग इसलिए बढ़ गया है कि यदि मापन में कोई त्रुटि पाई गई तो प्लांट को कमीशन के समय एक यन्त्र दूसरे से मैच नहीं होगा फिटिंग में परेशानी होगी और फिर उसे काटकर दूसरा यन्त्र लगाना होगा किसी भी प्लांट को बनाने के क्रम में पहले उसका ड्राइंग क्लियर करना होता है फिर बीओ क्यू यानि बिल ऑफ मेटेरियल फिर साइट लेआउट के बाद उस साइट का जियोलॉजिक सर्वे व एनवायरनमेंट असेसमेंट करना होता है और इन सब के क्रम में मापन बहुत ही अहम् भूमिका अदा करता है क्योंकि डिज़ाइन में साइट को बाउंड्री करने में सही व सटीक मापन करना अति आवश्यक है जब प्रोजेक्ट चालू होता है तो उसे कमीशन करने के पहले मेजर वर्क को चार भाग में आवंटन करते हैं जिसे सीएमईआई कहा जाता है जिसका मतलब होता है सिविल, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल व इंस्ट्रूमेंटेएशन क्योंकि यह ही सभी काम को जोड़ता है व अलग अलग इंडस्ट्री को इस आधार पर काम को सुचारु रूप से चलाने हेतु पैकेज के आधार पर टेंडर दिया जाता है। अतः वह मात्रा प्रणालियों, माप इकाइयों और मापने के तरीकों को विकसित करने में शामिल रहता है जिनका उपयोग विज्ञान के प्रायः सभी क्षेत्र में किया जाता है। अधिक सटीक माप और जानकारी के लिए माप के लिए नई विधियों और उपकरणों को विकसित करने के लिए एक मेट्रोलॉजिस्ट जिम्मेदार है।

अधिक सरल शब्दों में, एक मेट्रोलॉजिस्ट को एक वैज्ञानिक के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो माप का अध्ययन करता है। उसे इंस्ट्रूमेंटेशन इंजीनियरिंग, मेट्रोलॉजी की अच्छी समझ है और वैज्ञानिक अनुसंधान करने का ज्ञान है। मेट्रोलॉजिस्ट कैरियर का उद्देश्य उन प्रक्रियाओं और प्रणालियों का अनुसंधान और विकास करना है जो सामग्री के सटीक माप में योगदान करते हैं। जैसे किसी इंडस्ट्री में किसी टैंक के निर्माण में पहले स्टील के प्लेट की माप की जाती है जो आयत के आकार का एक मोटाई के साथ रॉ मटेरियल के रूप में इस्तेमाल होता है उसके बाद टैंक के ऊपरी डिश एन्ड जो टोरिस्पेरिकल, हेमीस्पेरीकल, कोनिकाल आदि के ज्यामिती के आकार का होता है। अतः प्लेट पर डिशएन्ड के बराबर साइज हेतु बराबर कैलकुलेशन कर वृत्ताकार के साइज में एक सटीक रेडियस पर कटिंग की जाती है यदि साइज के मापन में जरा सी चूक हो गया तो जब उस वृत्ताकार साइज के प्लेट को डिशएन्ड हेतु पॉइंट प्रेसिंग किया जायेगा तो डिश का स्टेट फेस कम हो जायगा और टैंक के बीच का भाग जिसे शैल कहते हैं मिशमैच हो जायेगा। ऐसी स्थिति में मेट्रोलॉजी इंजीनियर को टैंक का डिज़ाइनर सलाह लेता है कि प्लांट

में लगाते समय कोई समस्या तो नहीं आएगी। मेट्रोलॉजिस्ट इसके लिए स्टैण्डर्ड कोड का इस्तेमाल कर मापन त्रुटि के टॉलरेंन्स को देखता है और फिर उसके लिए डिज़ाइनर डिज़ाइन कॉन्सेसन रिपोर्ट बनाता है। तभी वह प्लांट में लग सकता है लेकिन कभी कभी ऐसा भी होता है सही माप की कटिंग के बाद जब डिश के लिए पॉइंट प्रेसिंग किया जाता है तो डिश के स्टेट फेज में अत्यधिक दबाब के कारण क्रैक आ जाता है। ऐसी स्थिति इनकोनल के प्लेट में प्रायः देखा जाता है क्योंकि वह बहुत ही हार्ड मटेरियल होता है। इस्पात में इलास्टिसी होती है अतः प्रायः ऐसी (दरार) सम्भावना कम होती है ऐसी स्थिति में मेट्रोलॉजिस्ट की सलाह ली जाती है कि कितनी मात्रा में काटा जायेगा कि दरार ख़त्म होगा व उसकी गुणवत्ता में उतना अंतर नहीं आएगा मेट्रोलॉजी इंजीनियरिंग मापन प्रक्रिया में उपयोग की जाने वाली माप तुलना सटीकता के आधार पर माप के विभिन्न के तरीके हैं। सटीकता में आवश्यक और अनुमेय त्रुटि की मात्रा,माप के तरीकों को एल सीधा तरीका, अप्रत्यक्ष विधि, निरपेक्ष या मौलिक विधि, तुलनात्मक विधि, स्थानान्तरण विधि, संयोग विधि, विक्षेपण विधि, पूरक विधि, संपर्क विधि, संपर्क रहित विधि को माप के लिए अपनाया जाता है वॉल्यूमेट्रिक माप में कांच के बने पदार्थ, का आयतन मानक परीक्षण उपायों और प्रोवर्स, एलपीजी प्रोवर्स, 3डी प्रिंटिंग को सटीक रूप से कैलिब्रेट करना वॉल्यूमेट्रिक मानकों के अनुपालन कर किया जाता है, जिन्होंने, में डिप्लोमा किया हो तो वे मेट्रोलॉजी इंजीनियरिंग में बीई या बी.टेक कर सकते हैं।

ऑप्टिकल मेट्रोलॉजी : ऑप्टिकल माप विभिन्न प्रकाश स्रोतों का उपयोग करके गैर–संपर्क माप को संदर्भित करता है। इसमें आमतौर पर कम से कम एक लेंस, एक प्रकाश स्रोत और एक डिटेक्टर की आवश्यकता होती है। ऑप्टिकल मेट्रोलॉजी एक तेजी से बढ़ता हुआ क्षेत्र है जिसमें लेजर के साथ ऑप्टिकल दूरी माप पर आधारित होता है इंटरफेरोमीटर या प्रकाश किरणों की उड़ान के समय के माप, यह आयामी मेट्रोलॉजी एक उदाहरण है। ऑटोकॉलीमीटर के साथ अत्यधिक सटीक कोणीय माप संभव है, विशेष रूप से लेजर पर आधारित इलेक्ट्रॉनिक ऑटोकॉलीमीटर के साथ। सतही स्थलाकृतियों को मापने के लिए ऑप्टिकल प्रोफिलोमीटर का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, उदाहरण के लिए सेमीकंडक्टर चिप उत्पादन में और ऑप्टिकल फैब्रिकेशन में गुणवत्ता नियंत्रण के लिए किया जाता है। फॉर्म मेट्रोलॉजी सतह के आकार (समोच्च) और सतह खुरदरापन को मापने के लिए कई अन्य प्रकार के उपकरणों का भी उपयोग करती है। परीक्षण के तहत किसी वस्तु के समग्र रूप/आकार को निर्धारित करने के लिए एकत्र माप किया जाता है, जो इसकी समतलता को संदर्भित करता है। ऑप्टिकल टाइम–डोमेन रिफ्लेक्टरमीटर का उपयोग फाइबर–ऑप्टिक लिंक का निरीक्षण करने के लिए किया जाता है– उदाहरण के लिए, दोषपूर्ण फाइबर स्प्लिसेस या फाइबर कनेक्टर ढूंढना। फ्री–स्पेस रिफ्लेक्टरमीटर का उपयोग किया जाता है। पतली फिल्म ऑप्टिकल उपकरणों की विशेषता के लिए ऑप्टिकल शक्तियों को फोटोडायोड्स, थर्मल पावर मीटर या अन्य उपकरणों से मापा जा सकता है। ऑप्टिकल विकिरण और अन्य रोशनी माप या तो कुछ शुद्ध भौतिक मात्रा को संबोधित कर सकते हैं जैसे ऑप्टिकल तीव्रता (प्रति इकाई क्षेत्र की शक्ति) (रेडियोमेट्री) या एक कथित चमक (फोटोमेट्री) की तरह कुछ। एकीकृत क्षेत्रों का उपयोग दिशा की एक विस्तृत श्रृंखला में उत्सर्जित विकिरण के लिए किया जाता है। स्पेक्ट्रल ऑप्टिकल गुणों को स्पेक्ट्रोग्राफ या अन्य स्पेक्ट्रोमीटर, वेवमीटर और सेल्फ–हेटरोडाइन सेटअप जैसे उपकरणों से मापा जाता है। इसकी वैज्ञानिक और तकनीकी विकास दोनों ही माप, गुणवत्ता नियंत्रण, गैर–विनाशकारी परीक्षण फोटोनिक्स के क्षेत्र में मेट्रोलॉजी इंजीनियर के लिए एक चुनौतीपूर्ण क्षेत्र है।

समिति द्वारा प्रस्तावित नयी परिभाषाएँ कुछ इस प्रकार हैं–

1. **सेकेण्ड**– समय की गणना सीजियम–133 के परमाणु के दोलन पर आधारित है– दो सीजियम परमाणुओं के मध्य विकिरण का 9,19,26,31,770 चक्र पूरा करने में लगने वाला समय 1 सेकेण्ड है।
2. **मीटर**– दूरी के मापन हेतु प्रकाश की गति पर आधारित है। इसके अनुसार निर्वात में प्रकाश द्वारा 1/299,792458 सेकेण्ड में तय की गयी दूरी 1 मीटर के बराबर है।
3. **किलोग्राम**– भार के लिए प्लांक नियतांक पर आधारित।

4. **मोल**– पदार्थ के द्रव्यमान के लिए एवोगाड्रो संख्या पर आधारित है।

5. **केल्विन**– तापमान के लिए बोल्ट्ज़मैन नियतांक पर आधारित है और ताप ऊर्जा में $1.38064852x10^{23}$ जूल के परिवर्तन के लिए उत्तरदायी ताप को 1 डिग्री केल्विन कहा जायगा।

6. **कैण्डिला**–प्रकाशदीप्ति के मापन हेतु एकवर्णी प्रकाश की $540x10^{12}$ हर्ट्ज आवृत्ति और 1/683 वाट प्रति स्टेरेडियन की दीप्ति वाले प्रकाश को इकाई कैण्डिला माना जाएगा।

7. **एम्पियर**– विद्युत धारा के मापन के लिए यह इलेक्ट्रॉन के आवेश पर आधारित है। इसके अनुसार 1/1. $6021766208x10^{19}$ आवेश के समतुल्य प्रवाह की धारा को इकाई एम्पियर माना जायगा।

इस प्रक्रिया से गणना की परिशुद्धता के परिमाण में तो बहुत अन्तर नहीं होगा परन्तु निष्कर्षों की स्थिरता बनाए रखने के लिये ये परिवर्तन महत्वपूर्ण हैं।

वर्तमान परिदृश्य में माप विज्ञान का अध्ययन : मेट्रोलॉजी में सटीक मापन, कोड, यांत्रिक प्रणाली, मेट्रोलॉजी और मापन सिद्धांत, यूनिवर्सल बेवल मापन सिद्धांत, वर्नियर कैलिपर्स और माइक्रोमीटर जैसे विभिन्न लंबाई मापने वाले उपकरणों का उपयोग सतह का मूल्यांकन वर्नियर कैलिपर्स और माइक्रोमीटर जैसे विभिन्न लंबाई मापने वाले उपकरणों का उपयोग किसी सतह के दो विपरीत पक्षों के बीच की दूरी को मापा जाता है। प्रोट्रैक्टर, साइन बार, अज्ञात मात्रा या इंजीनियरिंग के पैरामीटर जैसे विभिन्न कोण मापने वाले उपकरण, सतह का मूल्यांकन के लिए किया जाता है। फोटोनिक्स वितरण मीटरिंग, स्मार्ट मीटर और मांग प्रबंधन मेट्रोलॉजी के महत्व की व्याख्या, मेट्रोलॉजी के लिए कानून, भविष्य के लिए मेट्रोलॉजी, सिस्टम विकसित करना, मेट्रोलॉजी में ज्ञान और दक्षताओं के प्रसार के लिए संरचनाएगणित, रसायन शास्त्र,संचार के लिए अंग्रेजी, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग, यांत्रिकी, विनिर्माण प्रक्रिया का परिचय, अनुप्रयुक्त भौतिकी, प्रोग्रामिंग और डेटा संरचना, बैस्क इलेक्ट्रॉनिक्स, इंजीनियरिंग ड्राइंग और ग्राफिक्स, मेकेनिक मशीन टूल, मेंटेनेंस तथा मेकेनिकल, इंडस्ट्रियल अथवा प्रोडक्शन पर्यावरण का अध्ययन किया जाता है। थर्मोडायनामिक्स, द्रव यांत्रिकी, कार्यशाला प्रक्रिया, विद्युत मशीन, पर्यावरण, इंजीनियरिंग, गतिशील, ठोस यांत्रिकी, हीट ट्रांसफर, मशीन का सिद्धांत, धातु काटने और उपकरण डिजाइन, नियंत्रण प्रणाली, कंप्यूटर ग्राफिक्स, सीएनसी प्रोग्रामिंग, ऑपरेशन रिसर्च, सामग्री की ताकत, औद्योगिक अभियांत्रिकी, उत्पादन प्रबंधन मशीन का डिजाइन, हाइड्रोलिक मशीनों का डिजाइन, औद्योगिक अर्थशास्त्र और प्रबंधन, सामग्री विज्ञान और धातु विज्ञान, भौतिक धातुकर्म, फाउंड्री इंजीनियरिंग, पाउडर धातुकर्म, फाउंड्री इंजीनियरिंग प्रैक्टिकल मेट्रोलॉजी नीति और मेट्रोलॉजी सिस्टम के लिए 3–डी प्रिंटिंग'' के लिए डायल–कैलिपर ओडी, आईडी और गहराई को मापता है। थ्रेड मापन प्रणाली, स्कैनिंग टनलिंग माइक्रोस्कोप (नैनो अवलोक एसटीएम) आईओटी इनेबल एक्सिस मिलिंग, आईओटीइनेबल 3डी प्रिंटिंग चमक तीव्रता, डिटेक्टर रेस्पोंसिविटी, रंग तापमान के लिए किया जाता है। रेडियोमितीय मापदंडों अर्थात् वर्णक्रमीय चमक और वर्णक्रमीय विकिरण के लिए अंशांकन हार्ड मशीनिंग टेक्नोलॉजी" डायमेंशनल मेट्रोलॉजी ऑप्टिकल मेजरमेंट सिस्टम" के लिए मल्टी–सेंसर फ्यूजन और स्मार्ट प्रिसिजन आदि मुख्य हैं।

****

जयशंकर प्रसाद जी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के दर्शन

डॉ. (श्रीमती) स्वाति चड्ढा
हिन्दी अधिकारी
सीएसआईआर–राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, डॉ. होमी भाभा मार्ग, पाषाण, पुणे

जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्य आंदोलन के प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कवि हैं। काव्य धारा के रूप में छायावाद को एक निश्चित आकार देने में प्रसाद की विशिष्ट भूमिका रही है। सन् 1916 से 1936 तक का समय छायावाद का रहा। हिंदी कविता में छायावाद और भारतीय राजनीति मंच पर 'महात्मा गांधी' का उदय लगभग साथ ही हुआ था। 'डॉ. नगेंद्र' के अनुसार जिन परिस्थितियों ने हमारे दर्शन और कार्य को अहिंसा की ओर प्रेरित किया, उन्होंने ही भाव सौंदर्य वृद्धि को छायावाद की ओर। इसका अर्थ यह हुआ कि स्वाधीनता के संदर्भ में छायावाद और गांधी दोनों की ही परिकल्पनाएं उस दौर में लगभग एक समान ही थी। स्वाधीन चेतना, सूक्ष्म कल्पना, लाक्षणिकता, नए प्रकार का सादृश्य विधान, नया सौंदर्य बोध इन विशेषताओं को एक साथ प्रसाद की राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना और नवीन भाव बोध के आधार पर समझने की जरूरत होगी। उन्होंने राष्ट्रीय जागरण में भी बढ़ चढ़कर भाग लिया था। उनकी ख्याति मुख्य रूप से नाटककार तथा कवि के रूप में हुई है। उनके ऐतिहासिक नाटकों ने जनसामान्य को नवजागरण के लिए प्रेरित किया, जिसमें उन्होंने अतीत के गौरव को जन सामान्य के समक्ष रखा। उनके पूर्वज किस प्रकार के गौरवशाली थे, हमारा इतिहास कितना गौरवशाली था, किंतु आज छोटे–मोटे राग द्वेष के कारण हम क्या हो गए हैं। इस प्रकार के अनेकों संदेश देते हुए उन्होंने राष्ट्रीय जागरण में अहम भूमिका निभाई।

जयशंकर प्रसाद जी यद्यपि सौन्दर्य, प्रेम तथा प्रकृति के चित्रकार हैं तथापि युग की प्रवृत्तियों से भी वे अछूते नहीं रहे हैं। उनके काव्य में पराधीनता के प्रति आवेश एवं स्वाधीनता के लिए ललक पायी जाती है। उनकी राष्ट्रीय भावनाओं की अभिव्यक्ति काव्य की अपेक्षा नाटकों में अधिक एवं स्पष्टता से हुई है। अतीत का चित्रण करते समय कवि ने राष्ट्रीय उद्‌गारों को व्यक्त करने का अवकाश निकाल ही लिया है। 'चन्द्रगुप्त' नाटक में कार्नेलिया का 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' तथा स्कन्दगुप्त में 'प्रथम जिसे किरणों का दे उपहार' बाल गीत भारत के प्रति उनकी असीम भक्ति प्रदर्शित करता है। उन्होंने 'चन्द्रगुप्त में स्वतन्त्रता की बलिदेवी पर सहर्ष बलिदान होने वाले का आह्वान किया है

हिमादि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतन्त्रता पुकारती।।
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है बढ़े चलो बढ़े चलो।।

अपने काव्य–ग्रन्थों में उन्होंने यत्र–तत्र राष्ट्रीय भावनाओं को व्यक्त किया है। 'लहर' में संग्रहित अतीत की घटनाओं पर दी हुई कुछ कविताएं– करुणा की सहस्रधार, वैशाली की मतिध्वनि, प्रलय की छाया आदि में भारतीय गौरव और गरिमा के प्रति उनका प्रेम प्रदर्शित होता है। महाकाव्य 'कामायनी' में भी उनके राष्ट्रीय भावों की छाप स्पष्ट लक्षित होती है। कामायनी 'मनु' के पशुवध का विरोध करती है, इस भावना में गांधीवाद की अहिंसा सजग हो उठी है। इसी प्रकार कामायनी द्वारा कवि ने सूत कतवाकर गांधीवाद का समर्थन किया है–

तुम दूर चले जाते हो जब, तब लेकर तकली यहाँ बैठ
मैं उसे फिराती रहती हूँ, अपनी निर्जनता बीच पैठ
मैं बैठी गाती हूँ तकली के प्रवर्तन में स्वर विभोर–
चल री तकली धीरे–धीरे प्रिय गये खेलने को अहेर।

'लहर' की एक और लम्बी कविता 'पेशोला की प्रतिध्वनि' में प्रसाद न भारतीय इतिहास के गौरवशाली प्रसंग का स्मरण करके तत्कालीन आधुनिक गुलामी की जंजीरों में जकड़े भारत की दयनीय स्थिति पर शोक प्रकट किया है। महाराणा प्रताप की जन्मभूमि उदयपुर में स्थित पेशोला झील को देखकर कवि प्रसाद का हृदय रो उठता है। उस झील से प्रसाद जी को सुनाई पड़ती है कि गुलाम भारत में कोई महाराणा प्रताप जैसा वीर नहीं है जो अपने शौर्य, पराक्रम, साहस, वीरता, धैर्य एवं स्वाभिमान से देश को

स्वतन्त्र करा सके। यह कविता भारतीयों में देशभक्ति और राष्ट्रीयता की अलख जगाने वाली है। स्वेदश–प्रेम, त्याग, बलिदान एवं कर्तव्यपरायणता की जागृत करने वाली है। इस कविता को जब–जब, जिन–जिन संदर्भों में पढ़ा–सुना जाएगा यह तब–तब प्रासंगिक बनी रहेगी–

''कौन लेगा भार यह? जीवित है कौन?
सांस चलती है किसकी, कहता है कौन ऊँची छाती कर,
मैं हूँ–मैं हूँ–मेवाड़ मैं''

प्रसाद जी की राष्ट्रीयता न तो संकुचित थी और न उनका अतीत प्रेम पुरातनता के प्रति आग्रह था, अपितु वे नवयुग में विकास के लिए नूतनता के पक्षपाती थे। उन्होंने जिस प्रकार से हिन्दी–काव्य को नवीन भावना, नवीन विचार, नवीन भाषा, नवीन छन्द और नवीन शैली प्रदान की, उसी प्रकार वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नवीनता देखना चाहते थे। तभी तो उन्होंने कहा है–

पुरातनता का यह निर्भीक सहन करती न प्रकृति पल एक।
नित्य नूतनता का आनन्द, किए है परिवर्तन में टेक।।

जब इतिहासकारों ने भारतीयों को आर्य, द्रविड़ में बाँटने का सिद्धांत प्रस्तुत किया कि भारतीय मध्य एशिया से आए थे और आर्य भारत के मूलनिवासी नहीं हैं तब कवि कहते हैं–

"किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यहीं।
हमारी जन्मभूमि थी यहीं, कहीं से हम आये थे नहीं

कवि के प्यारे देश में जब जब विदेशी शक्ति का आधिपत्य या आक्रमण हुआ, तब तब कवि की लेखनी दृढ़ होकर लोगों के जनमानस तक पूर्ण संग्राम में बलवीर बनकर शामिल होने के लिए पुकारती रही। ऐसी ही पुकार सिकंदर के आक्रमण के उपरांत प्रणय गीत में देखने को मिलती है–

"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती।।"

इस प्रणय गीत में देशवासियों को शत्रु का डटकर सामना करने की प्रेरणा दी गई है। भारत के अमर वीरों तथा साहसी युवाओं का आह्वान किया गया है कि वह देश में घुस आए विदेशी शत्रुओं का वीरतापूर्वक सामना करें।

उन्होंने न सिर्फ सोई जनता को जागृत ही नहीं किया बल्कि जागृत जनता का पथ प्रदर्शन भी किया है। वे जागृत जनता को स्वतंत्रता समर में आगे बढ़ने एवं विजय श्री को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं –

अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्य पंथ है – बढ़े चलो, बढ़े चलो
असंख्य कीर्ति– रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह–सी।
सपूत मातृभूमि के, रुको न शूर साहसी
अराति सैन्य सिंधु में – सुबाड़वाग्नि–से जलो।
प्रवीर हो जयी – बनो, बढ़े चलो बढ़े चलो।।

कवि बार–बार देशवासियों को जगाते हुए गौरवमय अतीत जिसमें हमने हूण, शक, कुषाण, मुगल सबको पराजित किया है, का स्मरण कराते हैं। साथ ही देशवासियों को मातृभूमि के गौरव का स्मरण करवाते हुए वे कहते हैं कि हम वही आर्य संतान हैं जिन्होंने मातृभूमि की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। अतः हमें भी अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र कराने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहना चाहिए, क्योंकि व्यक्ति का अस्तित्व तभी तक सुरक्षित है जब तक उसका देश, जाति, साहित्य, अतीत आदि सुरक्षित है, अन्यथा गुलामों का कोई अस्तित्व नहीं होता है । वे लिखते है –

''वही है रक्त, वही है देश, वही है साहस, वैसा ज्ञान।
वही है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य–संतान।।

छायावादी कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना के विकास एवं अतीत के गौरव गान की दृष्टि से प्रसाद जी का काव्य अद्वितीय है। प्रसाद उस अर्थ में राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय चेतना के कवि नहीं हैं, जिस अर्थ में 'माखनलाल चतुर्वेदी', 'बालकृष्ण शर्मा नवीन' और 'सुभद्रा कुमारी चौहान' हैं। जयशंकर प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना अधिक स्पष्ट रूप में उनके नाटकों में व्यक्त हुई है। वास्तव में छायावादी काव्य में 'राष्ट्रीय जागरण', 'सांस्कृतिक जागरण' के रूप में आता है। इस सांस्कृतिक जागरण की अभिव्यक्ति प्रसाद की 'प्रथम प्रभात' 'अब जागो जीवन के प्रभात' 'बीती विभावरी जाग री' आदि कविताओं में है।

लहर में संकलित प्रसाद की कविता 'अब जागो जीवन के प्रभात' पर विचार करें तो प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना स्वच्छंदतावाद की मूल चेतना से अभिन्न जान पड़ेगी–

'अब जागो जीवन के प्रभात
वसुधा पर ओस बने बिखरे।

हिमकन आंसू जो क्षोभ भरे
उषा बटोरती अरुण गात।।'

कवि जयशंकर प्रसाद उपर्युक्त पंक्ति के माध्यम से देशवासियों को जगाने की बात कर रहे हैं। वह देशवासियों को राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल होने को प्रेरित कर रहे हैं। वह कह रहे हैं कि जिस प्रकार सूर्य रात के अंधकार को समाप्त करता है, उसी प्रकार तुम भी जागो और पराधीनता रूपी रात को समाप्त करो।

कवि जयशंकर ने 'बीती विभावरी जाग री' के माध्यम से भी लोगों को जागृत करने के लिए प्रेरित किया है –

'बीती विभावरी जाग री
अंबर पनघट में डुबो रही
तारा घट उषा नागरी।।'

कवि इन पंक्तियों में भी जनमानस को स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने को प्रेरित कर रहा है। कवि का कहना है कि अब गुलामी रूपी रात का छटने का समय आ गया है। अब आजादी रूपी उषा को फैलना है। अतः सभी देशवासी एक साथ मिलकर विदेशियों का सामना कर उन्हें अपने देश से भगा दें और सूर्य की तरह अपने मातृभूमि पर फैल जाए।

कवि जनमानस को अनेक प्रकार से समझाने का प्रयास कर रहे हैं, कभी प्रकृति के माध्यम से तो कभी नायक–नायिका के माध्यम से। कवि का मानना है कि जब सभी लोग एकत्रित होकर इस लड़ाई को लड़ेंगे तभी आजादी हमें मिल पाएगी। जब मानव चाहेगा तभी, उसके लिए कोई कार्य असंभव नहीं है–

'मानव जब जोर लगाता है पत्थर पानी हो जाता है'

अतः जयशंकर प्रसाद के काव्य में राष्ट्र जागरण के साथ ही समग्र चेतना का जागरण और आह्वान है, व्यक्ति में निहित शक्ति के उद्घाटन का उपक्रम है। यह राष्ट्रीय नहीं अपितु सम्पूर्ण सांस्कृतिक जागरण का काव्य है। इस प्रकार कहा जा सकता है प्रसाद जी की के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के दर्शन होते हैं, उनकी कविताएं जिन प्रवृत्तियों को लेकर चली उनमें– अतीत का गौरव गान, वर्तमान की दुर्दशा पर क्षोभ, जागृति और उद्यमशीलता का संदेश, अंग्रेजी शोषण और अत्याचार पर प्रहार, राष्ट्रीय एकता और उत्थान का संदेश, देशानुराग और क्रांति की अभिव्यक्ति, अंग्रेजी सत्ता के प्रति विद्रोह और देश के प्रति आत्मबलिदान, स्वदेशी और स्वतंत्रता की प्रबल आकांक्षा, देशोत्थान प्रमुख है। उनके काव्य में समाज को बदलने का प्रलयंकारी उद्घोष है, ओज, शक्ति और स्फूर्ति का भव्य रूप उनकी कविताओं के भाव पक्ष का प्राण तत्व है।

संदर्भ ग्रन्थः

1. जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला– मधुरेश, विश्वविद्यालय प्रकाशन, दिल्ली, 1989
2. जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली, प्रसाद वाड्.मय भाग–1
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास डॉ. नगेंद्र मयूर प्रकाशन, 1996
4. प्रसाद का विकासात्मक अध्ययन, किशोरीलाल गुप्त
5. प्रसाद के काव्य का काव्य शास्त्रीय अध्ययन, डा. सुरेन्द्रनाथ सिंह
6. प्रसाद का साहित्य, कृष्णदेव प्रसाद गौड़

हिंदी– संक्षिप्त परिचय

शुभ्रा बैनर्जी
धनपुरी, शहडोल (म.प्र.)

हिंदुस्तान में जन्मी, अखंड भारत की प्राकृत, शुद्ध और सार्थक भाषा है, हिंदी। युगों–युगों से संवाद का माध्यम रही हिंदी, अलग–अलग प्रांतों, कस्बों व नगरीय परिवेश में नवीन अलंकरणों से, अलंकृत होती रही है। हिंदी, 'संस्कृत' मां की प्रिय पुत्री है। शब्दों के अर्थ पूर्ण चमत्कार का स्वरूप इतना सरल है कि, उच्चारण करते ही अर्थ का बोध हो जाता है। संतों–महात्माओं के सानिध्य में, यज्ञ की आहुति में तप –तप कर हिंदी ने पुण्य अर्जित किए हैं। देवताओं की कथाओं का माध्यम बन कर इसने स्वर्ग के अमृत का सुख भी चखा है। संवादों के आदान–प्रदान में हिंदी, अपने स्वर और व्यंजनों के समावेश से हृदय को स्पर्श करती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति में हिंदी का योगदान उल्लेखनीय है। देशप्रेम की भावना जागृत करने में संस्कृति का खूब साथ निभाया है, हिंदी ने। 14 सितंबर 1949 को हिंदी भाषा को राजभाषा के रूप में स्वीकृति मिली थी और इसी दिन को ही हिंदी दिवस के रूप में मनाया जाता है। राजभाषा बनने के बाद से हिंदी के लिए नए–नए प्रावधान बने। जैसे–

संवैधानिक प्रावधान

राजभाषा अधिनियम – 1963
राष्ट्रपति का आदेश – 1960
राजभाषा संकल्प – 1968
राजभाषा नियम – 1976

संघ की राजभाषा नीति

संसदीय राजभाषा समिति की सिफारिशों पर जारी राष्ट्रपति आदेश

संकल्प –केंद्रीय हिंदी समिति का पुनर्गठन

राजभाषा अधिनियम 1963 के अनुसार 'हिन्दी' से वह हिन्दी अभिप्रेरित है, जिसकी लिपि देवनागरी है। केंद्र सरकार के द्वारा केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना, शिक्षा मंत्रालय के अधीन 1952 में की गई। हिंदी ना जानने वालों के लिए यह सुनहरा अवसर प्रदान किया गया ताकि केंद्र सरकार की नीतियों का उचित विश्लेषण, समन्वयन और नियमन हो सके।

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के अधीन सुचारू रूप से संचालित एक ऐसा प्रकोष्ठ है जो भारत की एकता और अखंडता को आधार देता है। देश में केंद्र सरकार की योजनाओं व विभिन्न नीतियों के कुशल संचालन की जिम्मेदारी इस विभाग की है। विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को देश हित में जोड़ने का दायित्व है हिंदी के कंधों पर। यह भारत की सांस्कृतिक विरासत है, जिसके अस्तित्व को बचाए रखना हर नागरिक का कर्तव्य है। मानव सभ्यता के जीर्ण अवशेषों की सहायता से पुरातत्व विभाग द्वारा प्राचीन युगों के साक्ष्य प्रस्तुत किए जाते रहें हैं, प्रमाण के साथ। आयुर्वेद, प्राणी और जंतु विज्ञान, योग, विज्ञान, शल्य चिकित्सा, खगोलीय विज्ञान, अंतरिक्ष आदि और भी ना जाने कितनी रहस्यमई जानकारी के बारे में, सैकड़ों साल से। जन्म –मृत्यु के विशिष्ट चक्र भी संरक्षित किए जा चुके हैं, पांडुलिपियों में।

आधुनिक भारत में बच्चों के सर्वांगीण विकास पर अधिक महत्व देते हुए हिंदी का ज्ञान अनिवार्य किया गया है। धरती की उत्पत्ति से ही मानव सभ्यता की उत्पत्ति हुई है। प्रकृति ने अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना को हिंदी का अभयदान दिया है। देवनागरी लिपि सर्वाधिक विश्वसनीय और प्राकृतिक रूप है हिंदी का। विदेशी देशों से अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को बेहतर बनाने में हिंदी का बहुत बड़ा योगदान रहा है। यह भाषा ही नहीं अपितु आवेग है जीवन का।

केंद्र सरकार द्वारा समय–समय पर हिंदी के विकासोन्मुखी अनंत यात्रा में, प्रोत्साहित करने वाले कार्यक्रम अति प्रशंसनीय हैं। उन्नति का आशय नवीन विद्या सीखना ही नहीं, अपितु अपनी जड़ों से जुड़े रहना भी है। राष्ट्र गान, राष्ट्र गीत, शपथ ग्रहण समारोह, अथवा किसी भी सरकारी परियोजनाओं में होने वाला हिंदी का प्रयोग, इसकी विशिष्टता को प्रमाणित करता है। विश्व पटल पर भारत के

ध्वज को शिखर पर पहुंचाने का हिमालय, गंगा, ताज, लालकिले, समुद्री लहरों ने, तीर्थ स्थलों, औद्योगिक नगरियों ने तो किया ही है,साथ ही भारत भूमि के अभिमान को हिंदी ने भी गौरवान्वित किया है।

सोलह श्रृंगार किए नवयौवना अशिमका सी क्षितिज से उतरती हुई, अप्सरा है हिंदी।

है भाल भारत का हिमालय,
तो भुजाएं यमुना गंगा हैं
चरण पखारें सिन्धु सागर,
क्षत्र पर विराजे तिरंगा है।
सघन गगन की काली घटाएं,
भारत मां के केश हैं
ऊंचे गिरि शिखर पर सजे,
शक्ति का अवशेष हैं।
उर्मियां सागर की स्पंदन,
सुर ताल छंद नव राग हैं
माथे की बिंदी है 'हिंदी',
जगे मनुज के भाग हैं।
है सत्य सनातन सार्थक रामायण,
अयोध्या में जन्में श्री राम हैं
महाभारत है कर्म परायण,
गीता के उपदेश निष्काम हैं।

छोटे पैमाने की खेती में सतत खरपतवार प्रबंधन के लिए एलेलोपैथी का उपयोग

दीप्ति सिंह वशिष्ठ, अर्चना बछेती और राकेश कुमार बछेती
पर्यावरण विज्ञान विभाग, ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून

कृषि में खरपतवार प्रबंधन को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनसे किसानों और कृषि विशेषज्ञों को उत्पादक और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बनाए रखने के लिए निपटना होगा। समय के साथ, सिंथेटिक शाकनाशी के लगातार और लंबे समय तक उपयोग से शाकनाशी–प्रतिरोधी खरपतवार आबादी का विकास हो सकता है।

ये प्रतिरोधी खरपतवार शाकनाशियों के प्रभाव के प्रति कम संवेदनशील हो जाते हैं, जिससे पारंपरिक खरपतवार नियंत्रण विधियाँ कम प्रभावी हो जाती हैं और वैकल्पिक रणनीतियों की खोज की आवश्यकता होती है। शाकनाशी और अन्य रासायनिक खरपतवार नियंत्रण विधियों का गैर–लक्षित पौधों की प्रजातियों और परागणकों और लाभकारी कीड़ों सहित लाभकारी जीवों पर अनपेक्षित परिणाम हो सकते हैं।

ये अनपेक्षित प्रभाव पारिस्थितिकी तंत्र संतुलन और जैव विविधता को बाधित कर सकते हैं, जिससे संभावित पारिस्थितिक असंतुलन हो सकता है। सिंथेटिक शाकनाशी के उपयोग के परिणामस्वरूप रासायनिक अपवाह हो सकता है और आस–पास के जल निकायों में रिसाव हो सकता है, जिससे जल प्रदूषण हो सकता है।

इसके अतिरिक्त, शाकनाशी मिट्टी में जमा हो सकते हैं, जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है और भूजल दूषित हो सकता है। कुछ शाकनाशी लंबे समय तक मिट्टी में बने रह सकते हैं, जिससे बाद की फसलें प्रभावित हो सकती हैं और यहां तक कि फसल को नुकसान हो सकता है या रोटेशन प्रणाली विफल हो सकती है। यह अवशिष्ट प्रभाव टिकाऊ फसल चक्र पद्धतियों को लागू करने का प्रयास कर रहे किसानों के लिए चुनौतियां खड़ी करता है।

वाणिज्यिक सिंथेटिक शाकनाशी महंगे हो सकते हैं, खासकर सीमित वित्तीय संसाधनों वाले छोटे पैमाने के किसानों के लिए। शाकनाशियों की खरीद की लागत कृषि लाभप्रदता और व्यवहार्यता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकती है। मैन्युअल खरपतवार नियंत्रण विधियाँ, जैसे कि हाथ से निराई करना, श्रम–गहन, समय लेने वाली और महंगी हो सकती हैं।

यह छोटे पैमाने के किसानों के लिए विशेष रूप से चुनौतीपूर्ण है जिनके पास बड़े खरपतवार–संक्रमित क्षेत्रों का प्रबंधन करने के लिए पर्याप्त श्रम या संसाधनों की कमी हो सकती है। खरपतवार अक्सर बड़ी संख्या में बीज पैदा करते हैं जो लंबे समय तक मिट्टी में बने रह सकते हैं, जिससे खरपतवार बीज बैंक बनते हैं। ये बीज बैंक लगातार नए खरपतवार अंकुरों की आपूर्ति कर सकते हैं, जिससे दीर्घकालिक खरपतवार प्रबंधन मुश्किल हो जाता है।

आक्रामक खरपतवार प्रजातियाँ तेजी से क्षेत्रों में बस सकती हैं और उन पर हावी हो सकती हैं, देशी वनस्पतियों को मात दे सकती हैं और फसल की पैदावार और जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। बदलते मौसम के पैटर्न और बढ़ते तापमान से खरपतवार की आबादी प्रभावित हो सकती है, जिससे उनके वितरण, विकास के पैटर्न और प्रबंधन की चुनौतियाँ बदल सकती हैं।

कुछ किसानों में एकीकृत खरपतवार प्रबंधन पद्धतियों या जड़ी–बूटियों के टिकाऊ विकल्पों के बारे में जागरूकता की कमी हो सकती है, जिससे खरपतवारों को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने की उनकी क्षमता में बाधा आ सकती है। कुछ शाकनाशी का उपयोग नियामक प्रतिबंधों के अधीन हो सकता है, जिससे किसानों के पास खरपतवार नियंत्रण के विकल्प सीमित हो सकते हैं।

इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए, टिकाऊ खरपतवार प्रबंधन पद्धतियां एकीकृत दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करती हैं जो सिंथेटिक शाकनाशी पर निर्भरता को

कम करने और नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने के लिए सांस्कृतिक प्रथाओं, फसल रोटेशन, कवर क्रॉपिंग, मल्चिंग और जैविक नियंत्रण जैसे विभिन्न तरीकों को जोड़ती है।

कृषि में छोटे पैमाने के किसानों के लिए एलेलोपैथी द्वारा खरपतवार प्रबंधन एक मूल्यवान और टिकाऊ दृष्टिकोण हो सकता है। एलेलोपैथी पौधों और उनके आसपास के वातावरण के बीच रासायनिक अंतःक्रिया को संदर्भित करता है, जहां कुछ पौधे रासायनिक यौगिक छोड़ते हैं जो आस–पास के अन्य पौधों के विकास को रोक सकते हैं। एलेलोपैथिक खरपतवार प्रबंधन एक प्राकृतिक और पर्यावरण के अनुकूल तरीका है।

सिंथेटिक रसायनों पर निर्भर रहने के बजाय, किसान खरपतवारों को नियंत्रित करने, हानिकारक रसायनों के उपयोग को कम करने और जैविक खेती पद्धतियों को बढ़ावा देने के लिए कुछ फसलों द्वारा उत्पादित प्राकृतिक रसायनों का उपयोग कर सकते हैं। अनियंत्रित खरपतवार वृद्धि पोषक तत्वों, पानी और सूरज की रोशनी के लिए फसलों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकती है, जिससे फसल की उपज कम हो सकती है।

एलेलोपैथी खरपतवार की वृद्धि को दबाने में मदद करती है, जिससे फसलें उपलब्ध संसाधनों का अधिक कुशलता से उपयोग कर पाती हैं, जिससे पैदावार में सुधार होता है। ऐलेलोपैथिक फसलों को कृषि प्रणाली में एकीकृत करने से जैव विविधता में वृद्धि हो सकती है। फसलों के बीच विविधता को बढ़ावा देकर, किसान एक अधिक लचीला पारिस्थितिकी तंत्र बनाते हैं जिसमें कीट और बीमारी के प्रकोप का खतरा कम होता है।

समय के साथ, खरपतवार सिंथेटिक शाकनाशी के प्रति प्रतिरोध विकसित कर सकते हैं, जिससे वे कम प्रभावी हो जाते हैं। एलेलोपैथी एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करती है जो खरपतवारों में शाकनाशी प्रतिरोध में योगदान नहीं करती है। एलेलोपैथिक पौधे मिट्टी में कार्बनिक यौगिक छोड़ सकते हैं जो मिट्टी की उर्वरता और स्वास्थ्य में योगदान करते हैं। ये यौगिक माइक्रोबियल गतिविधि और पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ा सकते हैं, जिससे समग्र मिट्टी की संरचना और स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है।

अपनी खरपतवार प्रबंधन रणनीति के हिस्से के रूप में एलेलोपैथी को शामिल करके, छोटे पैमाने के किसान बाहरी आदानों पर अपनी निर्भरता कम कर सकते हैं और अपनी कृषि पद्धतियों में आत्मनिर्भरता में सुधार कर सकते हैं। एलीलोपैथिक फसलों को मौजूदा फसल प्रणालियों में एकीकृत करना अपेक्षाकृत सरल है।

किसान उपयुक्त एलीलोपैथिक पौधों की पहचान कर सकते हैं, उनके अवशेषों को गीली घास या हरी खाद के रूप में उपयोग कर सकते हैं, या एलीलोपैथिक प्रजातियों के साथ फसल चक्र का अभ्यास कर सकते हैं। छोटे पैमाने के किसानों के पास अक्सर सीमित संसाधन होते हैं, और वाणिज्यिक सिंथेटिक शाकनाशी खरीदना महंगा हो सकता है। प्राकृतिक खरपतवार शमनकर्ता के रूप में ऐलेलोपैथिक पौधों का उपयोग करने से महंगी शाकनाशियों की आवश्यकता काफी कम हो सकती है, जिससे उत्पादन लागत कम हो सकती है।

हालाँकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एलेलोपैथी का सार्वभौमिक अनुप्रयोग नहीं है और इसे सभी स्थितियों में समान रूप से लागू नहीं किया जा सकता है। कुछ एलीलोपैथिक पौधे कुछ फसलों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं, इसलिए सावधानीपूर्वक योजना और उपयुक्त संयोजनों का ज्ञान आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, संतुलित और टिकाऊ कृषि प्रणाली को बनाए रखने के लिए उचित फसल चक्र और प्रबंधन प्रथाओं को नियोजित किया जाना चाहिए।

किसानों को ऐलेलोपैथिक पद्धतियों का उपयोग करते समय लाभकारी पौधों की प्रजातियों और पर्यावरण पर संभावित नकारात्मक प्रभावों के बारे में भी सावधान रहना चाहिए। कृषि विशेषज्ञों के साथ परामर्श करने और खेत पर परीक्षण करने से इष्टतम परिणामों के लिए एलेलोपैथिक खरपतवार प्रबंधन के कार्यान्वयन को बेहतर बनाने में मदद मिल सकती है।

भारतीय जैविक विविधता : एक परिचय

आशीष कुमार आर्य और डॉ. अर्चना बछेती
पर्यावरण विज्ञान विभाग, ग्राफ़िक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून

भारत एक अद्भुत देश है जो अपने विविधता और प्राकृतिक सौंदर्य के लिए प्रसिद्ध है। भारतीय जैविक विविधता उसकी अनूठी पहचान है, जो विश्वभर में अद्भुत वनस्पति, पशु और जीव–जंतुओं के लिए अपना खास स्थान बनाती है। इसे विविधता का भण्डार गृह कहना गलत नहीं होगा। यहां प्राकृतिक पर्वत, मैदान, झीलें, नदियां, वन्यजीवन और समुद्री समृद्धि मिलती है, जो भारतीय जैविक विविधता के प्रमुख कारणों में से एक हैं।

भारतीय जैविक विविधता में वनस्पतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। यहां लगभग 47000 से अधिक प्रकार की वनस्पतियां पाई जाती हैं, जिसमें वनस्पति विभागीय और अविभागीय दोनों प्रकार की वनस्पतियां शामिल होती हैं। भारत में वनों की विशाल संपदा है और ये वनस्पतियां अपने आवासीय जीवों के लिए सांचा बनती हैं। कुछ प्रमुख वन्यजीव संग्रहालय और राष्ट्रीय उद्यान भारत में स्थित हैं, जैसे कि जिम कॉर्बेट राष्ट्रीय उद्यान, बंदिपुर राष्ट्रीय उद्यान, गिर राष्ट्रीय उद्यान और भरतपुर पक्षी अभयारण्य।

भारतीय जैविक विविधता में पशु पक्षी भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहां लगभग 1300 से अधिक प्रकार के पक्षियों का आवास है। कुछ लोकप्रिय पक्षियों में भारतीय मोर, भारतीय बाज, बाघ, हत्ती, सिंह, छोटे और बड़े प्रजातियों पक्षी शामिल होते हैं। इसके अलावा, भारत में अनेक प्रकार के अम्फिबियन्स, रेप्टाइल्स, मछलियां और कीटाणु भी पाए जाते हैं।

भारतीय जैविक विविधता का सबसे अद्भुत हिस्सा है उसके विभिन्न भू–भागों में स्थानीय जीव–जंतु प्राकृतिक संधि में रहते हैं। इसमें बाघ, एकहोंर, एकरन, लकड़बग्घा, नीलगाय, बारासिंघा, भालू, नखरी, गौर, अनाजा और गैलोंग जैसे जीवों को शामिल किया जा सकता है।

भारतीय जैविक विविधता की अविश्वसनीय संख्या में विभिन्न प्रकार के वन्यजीवों, पौधों, पशुओं, पक्षियों, अवारा पशुओं और कीट–पतंगों को शामिल किया जा सकता है। भारत के वन्यजीवों में बाघ, शेर, हाथी, राजभांगा, लिंगा, चीता, गौर, हरिण, भैंस, बारासिंगा, संभर, बंगार, जुंगली सूअर, नीलगाय, गैल, वाइल्ड डॉग, नीलीगिद्ध, गण्डक बच्चा, सारस, वुडपैकर, पिंकफ्लैमिंगो, पर्वतीयमूर्गा, चकोर, तोता, मैना, पिकॉक, अलेक्सांद्रिया पुलिवर, लेकड्वार्फबंजी, आदि शामिल हैं।

भारत के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की परंपरागत और स्थानीय वन्यजीव जलवायु के अनुसार विविध होते है। उत्तरी हिमालय में बर्फीले पर्वतीय प्रदेशों में बार्डिया राष्ट्रीय उद्यान, काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान और मनास वन्यजीव अभयारण्य जैसे बहुत से प्रसिद्ध उद्यान विराजमान हैं जहां बड़े प्राकृतिक विकास और वन्यजीवों को संरक्षित किया जाता है।

उत्तर–पूर्वी भारत में, दर्जीलिंग के चाय बागानों, सिक्किम के पहाड़ी जंगलों, मेघालय के जलप्रपातों और मिजोरम के घने जंगलों में वन्यजीव विविधता पाई जाती है। पूर्वी भारत की भू–भागीय भूमि और वन्यजीवों के लिए एक सुरम्य स्थान है जो उन्हें नेचुरल हैबिटेट में जीने की अनुमति देता है।

मध्य भारत में, सतपुड़ा, विंध्य, और अरावली पर्वत श्रृंगों के बीच संसाधनीय वन्यजीव जलवायु की विविधता मिलती है। यहां पर शेर, बाघ, चीता, हाथी, जंगली कुत्ता, गैल, साम्भर, बारासिंगा, जंगली सूअर, जंगली बकरी, तितहरी, और कई अन्य प्राचीन जातियों के वन्य जीव रहते हैं।

दक्षिण भारत में, विशेष रूप से केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना में वन्यजीव विविधता को देखा जा सकता है। नीलगिरि, बनस्वाडी, नागरहोले, नामदफा, नेलपट्टी, दचिगम, नगरहोले, पेरियार, और बांध व गढ़ जैसे राष्ट्रीय उद्यान और अभयारण्य यहां प्रसिद्ध हैं। इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के वन्यजीव जैसे बाघ, शेर, गौर, हाथी, वुडपीकर, मालाबारहांगिंगपीकर, मालबारटापी, लियोपार्ड, मलबारगिड्ड, वायल्डडॉग, चित्रकुट, मेनफोअर,

एचोले, और शैलडांगा जैसे स्थानीय वन्यजीव रहते हैं।

भारतीय जैविक विविधता को संरक्षित करने के लिए सरकार ने कई राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव अभयारण्य, वन्यजीव संरक्षण क्षेत्र, विशेष वन्यजीव क्षेत्र, और वन्य जीव ध्यान केंद्र स्थापित किए हैं। इन संरक्षण क्षेत्रों में वन्यजीवों को सुरक्षित रखने के लिए संबंधित संगठन और अधिकारियों द्वारा निगरानी और उनकी देखभाल की जाती है।

भारतीय जैविक विविधता का परिचय निम्नलिखित क्षेत्रों में होता है–

वन्यजीवः भारत की वन्यजीव विविधता अद्भुत है। यहां पर बाघ, शेर, हाथी, गाय, बारहसिंगा, भैंस, नीलगाय, बंगाल तथा अफ्रीकी सहजन, खरगोश, भालू, लँगूर, मक्कीकरी, नीलकंठ, चित्ताहरियाल, तोते आदि जैसे विभिन्न प्रकार के वन्य जीव देखे जा सकते हैं।

पक्षी भारत में विश्वभर में प्रसिद्ध विविधता के साथ लगभग 1300 से अधिक प्रकार के पक्षी पाए जाते हैं। भारत बर्ड वॉचर्स के लिए एक स्वर्ग के रूप में जाना जाता है।

पानी में जीवजंतु भारत में विविधता वाले जल जीवजंतु भी पाए जाते हैं। यहां पर मगरमच्छ, गंगा डॉल्फिन, कछुआ, कर्प, मछली, बगदड़, जलकुकर्म, टोड़ आदि जल जीवन होते हैं।

पौधे भारत में विविधता से भरे हुए पौधे भी हैं। यहां जंगलों में बहुत से प्राकृतिक वन्य पशु जैसे किस्में की जाती हैं।

समुद्री जीव जंतु भारत के समुद्री भाग में भी विविधता देखी जा सकती है। यहां पर डॉल्फिन, कछुआ, करंटों, मछली भारतीय जैविक विविधता को संरक्षित करने का एक और महत्वपूर्ण कदम जनता के जागरूकता और संवेदनशीलता को बढ़ाना है। लोगों को जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, विकसित और शहरी करण के लिए स्वच्छ विकल्प, और जैविक विविधता के संरक्षण के लिए सक्रिय योगदान देने के लिए उत्साहित करना आवश्यक है।

इस तरह, भारतीय जैविक विविधता उसके समृद्ध और सामर्थ्य पूर्ण नागरिकों और सरकारी नीतियों के सहयोग से संरक्षित रखी जा सकती है। यह विश्व में अपने अद्भुत

चित्रः हिमालयन बुलबुल

प्राकृतिक सम्पदा के लिए गर्व कर सकता है और भविष्य के पीढ़ियों को भी विश्वास दिला सकता है।

भारतीय जैविक विविधता एक मूल्यवान संसाधन है जिसे संरक्षित रखने और समृद्ध करने के लिए हमें संबंधित प्रयास करने की जरूरत है। जैविक विविधता का संरक्षण उन्हें सुरक्षित करने और प्राकृतिक परिवार के अन्य सदस्यों के साथ संतुलन बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है।

भारतीय जैव विविधता के संरक्षण के लिए समुदाय के सहयोग, सरकारी नीतियों का समर्थन और जनजागृति अत्यंत महत्वपूर्ण है। संरक्षित जीवजंतुओं और वन्य जीवियों के संख्या में सुधार, वन्यजीवी क्षेत्रों का संरक्षण, प्राकृतिक अभयारण्य और उद्यानों का विकास, वन्यजीवियों के संबंध में शोध और जागरूकता को बढ़ावा देने के लिए निरंतर प्रयास किए जाने जरूरी हैं।

भारत को अपने अनुभवी वैज्ञानिकों, प्राकृतिक रंग रंगी विभिन्नता और संस्कृति से भरे वन्यजीवी और जैवविविधता के लिए विश्व भर में प्रसिद्धा किया जाता है। इसलिए, हम सभी को भारतीय जैव विविधता के संरक्षण और समृद्धि के लिए साथ मिलकर काम करने की जरूरत है।

नई शिक्षा नीति 2020 और भारतीय भाषाएं

डॉ रेखा सिंह
राजकीय महाविद्यालय, पावकी देवी, टिहरी गढ़वाल

भारत सदा से ही सनातन संस्कृति परंपरा का पुजारी रहा है, और परंपरा को जीवित रखने के लिए अपनी मातृभाषा का ज्ञान सर्वोपरि रहा है। आज भारत समर्थ, सशक्त और उन्नति को ओर मजबूती से बढ़ रहा है। किसी भी राष्ट्र को आगे बढ़ाने में वहाँ की भाषा को प्राथमिकता देने से ही संभव होता है। हमें भी अपनी मातृभाषा को लेकर सजग और सहज होना जरूरी है।

भारत ने स्वतंत्रता के बाद से ही इस ओर निरंतर ध्यान देना शुरू कर दिया था। धीरे–धीरे 18 भाषाएं और अब भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं शामिल हैं। इन भाषाओं के अतिरिक्त कई बोलियों का भी भारत में (लगभग एक हजार से अधिक) वर्चस्व है, और युनेस्को के अनुसार विगत 50 वर्षों में दो सौ के आस–पास भाषाएं प्रायः लुप्त हो चुकी हैं, और कई लुप्त होने की कगार पर हैं। अगर इन सभी तथ्यों पर गौर करें तो एक भाषा या बोली के लुप्त होने पर हम अपनी सभ्यता एवम् संस्कृति को खो देते हैं।

इन्हीं परिस्थितियों को मद्देनजर रखते हुए 'नई शिक्षा नीति 2020' ने स्वीकार किया है, और स्पष्ट कहा है कि संस्कृति–सभ्यता को बचाए रखने के लिए भाषा का संवर्धन और सरंक्षण आवश्यक है। प्रारंभ से ही शिक्षा नीति पर त्रिभाषा सूत्र' लागू करने पर जोर दिया जाता रहा है, क्योंकि भारत के कई राज्यों में अहिंदी भाषी लोग भी रहते हैं, जिन्हें हिंदी पढ़ने लिखने में समस्या होती है। इस समस्या को दूर करने के लिए एक दूसरे को भाषा शिक्षकों का आदान–प्रदान करने का सुझाव भी दिया जा सकता है।

'त्रिभाषा सूत्र' में यह प्रावधान भी है कि छात्रों को तीन भाषाओं में से कोई दो भाषाएं चुनना आवश्यक है। इस नीति में ई–लर्निंग शिक्षण को भी बढ़ावा दिया गया है। केंद्रीय स्तर पर भारतीय भाषाओं के साफ्टवेयर तैयार किए जा रहे हैं। साथ ही एनसीआरटी, सीआईटी, सीबीएससी, एनआईओएस और भी कई संस्थायें क्षेत्रीय भाषाओं को विकसित करने के लिए प्रतिबद्ध खड़े हैं, यही नहीं तकनीकी एवम् प्रौद्योगिकी पर बल तो पूर्व समय से ही गतिमान था।

नई शिक्षा नीति में प्राथमिकी से लेकर और उच्च शिक्षा तक सभी स्तर पर भाषाओं पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए खेल, ऐप्स आदि को विकसित किया जा रहा है, जिससे बालक भाषा को आनंदित होकर सीख सकें। अगर हम देश पर दृष्टि डालें तो यहां विभिन्न राज्यों का गठन और आकार वहाँ की प्रचलित भाषा और बोलियों के आधार पर है। एक राज्य में कई भाषा– बोली कही जाती है, इन सभी तथ्यों पर ध्यान दें तो छात्र अपने राज्य की राजभाषा भी सही से नहीं सीख पाते। इन्हीं सब खामियों को सुधार की दृष्टि से नई शिक्षा नीति में स्थानीय भाषा को प्राथमिकता दी गई है। हमारे देश में बहुभाषा/बोली के लिए यह कहावत प्राचीन समय से प्रचलित है–

कोस–कोस पर पानी बदले
चार कोस पर वाणी

स्थानीय भाषा अर्थात् मातृ भाषा को 'नई शिक्षा नीति 2020' में बहुत ज्यादा जोर दिया गया है। मातृ भाषा संस्कारों की संवाहक होती है, यही नहीं, यह हमें राष्ट्रीयता से भी जोड़ती है, और देश प्रेम की भावना जाग्रत करती है।

इस समय अनुवाद पर भी जोर दिया गया है। इसकी कमी से हम उत्कृष्ट साहित्य से वंचित रहते हैं। ज्ञान को यदि बढ़ाना है तो अनुवाद जरूरी है। इसके लिए विभिन्न राष्ट्रीय अनुवाद संस्थान और उच्च गुणवत्ता वाले पाठ्यक्रम चलाने पर भी जोर दिया गया है, जिससे देशभर के विभिन्न संस्थानों में बिखरी पड़ी पांडुलिपियों को एकत्रित कर सरंक्षित कर अनुवाद और अध्ययन की प्रतिबद्धता पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। हमारी सारी भाषाओं की जननी संस्कृत है, लेकिन सभी भाषाओं में सर्वश्रेष्ठ जो भाषा का दर्जा प्राप्त है वह अंग्रेज़ी है।

वर्तमान समय में अंग्रेज़ी को ओहदे और ज्ञान का भंडार समझा जा रहा है, जो की अर्द्ध सत्य है। संस्कृत को

मुख्यधारा में लाने के लिए भिन्न वैज्ञानिकता, सृजनात्मकता और नवाचार के माध्यम से इस भाषा पर ध्यान दिया जा रहा है। इसके लिए संस्कृत संस्थानों और विश्वविद्यालयों को विस्तारित करने का कार्य किया जा रहा है।

स्वतंत्र भारत में राष्ट्र निर्माण के लिए ज्ञानवर्धक शिक्षा नीति की आवश्यकता होती रही। इसके लिए पहली शिक्षा नीति वर्ष 1968 में तथा द्वितीय शिक्षा नीति वर्ष 1986 में लागू की गई, तथा 1992 में इस शिक्षा नीति पर कुछ संशोधन किए गए। इसमें क्षेत्रीय भाषाओं के अलावा अंग्रेज़ी व अन्य विदशी भाषाओं के अध्ययन पर बल दिया गया, साथ ही हिंदी को संपर्क भाषा के तौर पर विकसित करने की तरफ ध्यान दिया गया।

परंतु नई शिक्षा नीति 2020 में भाषाओं विशेषकर मातृ भाषा में शिक्षा पर बल दिया गया तथा बहुभाषिकता को समय की जरूरत व आवश्यकता बताई गई है। ग्रेड 5 तक अनिवार्य रूप से मातृभाषा, स्थानीय/ क्षेत्रीय भाषा को बेहतर बताया है ताकि छोटे बच्चे सार्थक धारणाओं के साथ तेजी से सीख सकें।

दुनियाभर के भाषाविद् और शिक्षाविद् इस बात पर एकमत हैं कि मातृभाषा के माध्यम से बालक की मौलिक रचनात्मक अभिव्यक्ति और प्रतिभा विकसित होने में मदद मिलती है। भाषाविदों का मानना है कि जिन बच्चों की मातृभाषा में पकड़ जितनी अधिक मजबूत होती है, उनकी उतनी ही अधिक कल्पनाशीलता, रचनाशीलता और सृजनशीलता मजबूत होती है, और उनके मस्तिष्क में अनावश्यक बोझ भी नहीं पड़ता है।

निष्कर्ष स्वरुप कह सकते हैं कि भारतीय भाषाओं की उन्नति और प्रगति तभी संभव है जब उसे प्रत्यक्ष तौर पर रोजगार से जोड़ा जाए, जिसको सबसे अधिक फायदा अभी तक हुआ है वह अंग्रेजी भाषा है। इस तथ्य को राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी समझा गया है। इसलिए स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भारतीय भाषाओं में प्रवीणता को रोजगार के मानदंडो की अर्हता में शामिल किया जाएगा।

इसीलिए नई शिक्षा नीति में इस समय मातृभाषा और भाषाओं पर बहुत अधिक जोर दिया गया है, जो हमारे देश की शिक्षा और संस्कृति के लिए अवश्य ही फायदेमंद साबित होगा। इसके महत्व को और अपनी निजी भाषा की ताकत को भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने शब्दों में बहुत पहले ही व्याख्यायित किया–

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।'

अंग्रेज़ी भाषा का ज्ञान व देश–विदेश की भाषा को ग्रहण करने में कोई बुराई नहीं है, परंतु अपनी मातृभाषा में जो गुण है वह अन्य भाषाओं में नहीं दिखते हैं। इसी बात को महात्मा गांधी व पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम खुद सार्वजनिक तौर पर व्यक्त कर चूके है। इसी बात को नवजागरण के अग्रदूत व आधुनिक काल के कवि ने कहा–

'अंग्रेज़ी पढ़ के जदपि, सब गुण होत प्रवीन,
पै निज भाषा ज्ञान के, रहत हीन के हीन।'

अथार्थ अंग्रेज़ी भाषा और विदेशी भाषाओं में प्राप्त शिक्षा से प्रवीण तो हो जाओगे किंतु सांस्कृतिक एवम व्यवहारिक दृष्टिकोण से हीन ही हीन रहोगे।

पुराः ग्रामीण भारत के सततविकास के लिए एक अनूठी योजना

विनीत शर्मा,
भौतिकी विभाग, एम.एल.टी. कॉलेज, सहरसा, बिहार

देश की 75 प्रतिशत से अधिक आबादी गांवों में रहती है, अकेले शहरी केंद्रों में विकास देश के समग्र विकास का संकेत नहीं देता है। ग्रामीण विकास के महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक परिवहन और बुनियादी ढांचे की सुविधाओं में सुधार है। इसके साथ ही, पानी की उपलब्धता और सामान्य स्वच्छता में सुधार समग्र विकास के पथ में चुनौतियां बनी हुई हैं।

जल जनित रोगों को समाप्त करने के लिए स्वच्छ जल की उपलब्धता और पर्याप्त स्वच्छता सुविधाओं का अत्यधिक महत्व है। इसके साथ ही गांवों को शहरी केंद्रों के साथ भौतिक, संचार और ढांचागत कनेक्टिविटी प्रदान करने की आवश्यकता है। इसके अलावा प्रशासन द्वारा ग्रामीण आबादी के लिए पर्याप्त नौकरी/आय के अवसर उपलब्ध कराए जाने चाहिए ताकि शहरी केंद्रों की ओर ग्रामीण प्रवास को नियंत्रित किया जा सके।

तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. कलाम ने 2003 में अपने अध्यक्षीय भाषण में ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाएं (Providing Urban Amenities in Rural Areas,पुरा) प्रदान करने के इस नए प्रस्ताव का अनावरण किया। यह एक ऐसी योजना है जिसमें ग्रामीण भारत में विकास क्रांति लाने और निकट भविष्य में ग्रामीण भारत को विकास की कहानी में समान भागीदार बनाने की क्षमता है।

पुरा (PURA) के उद्देश्य :

- ग्रामीणों की सामाजिक आर्थिक जरूरतों की पहचान करना और उन्हें संबोधित करना।
- भूमि, जल, ऊर्जा और अन्य जैव संसाधनों का सतत उपयोग।
- सड़क, बिजली, संचार, बाजार जैसी बुनियादी सुविधाओं की स्थापना।
- अस्पताल, स्कूल एवं लघु उद्योग इकाइयों का निर्माण।
- उत्पादों और जनशक्ति के मूल्यवर्धन के माध्यम से रोजगार के अवसरों का सृजन।
- ग्रामीण समाज के सांस्कृतिक और तकनीकी उन्नयन के लिए अभियान।

ग्रामीण बुनियादी ढांचे और ग्रामीण–शहरी विभाजन की वर्तमान स्थिति को काफी हद तक ग्रामीण संसाधनों के उचित व्यवस्थित प्रबंधन की कमी के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। ग्रामीण जरूरतें और शहरी जरूरतें काफी अलग हैं, इसलिए विकास का एक ही मॉडल देश के ग्रामीण और शहरी हिस्से के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता है। ग्रामीण बुनियादी ढांचे और संसाधनों के प्रबंधन के लिए भौतिक और सामाजिक कारकों को ध्यान में रखते हुए एक जन केंद्रित दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। ग्रामीण विकास के दृष्टिकोण को प्रकृति में अधिक समग्र होने की आवश्यकता है ताकि ग्रामीण मानव और भौतिक संसाधनों का इष्टतम उपयोग किया जा सके APURA पीपीपी (सार्वजनिक निजी भागीदारी) के विकास के माध्यम से गांवों में पर्याप्त रोजगार के अवसर प्रदान करने का इरादा रखता है। इसके अलावा, यह स्थानीय लघु और कुटीर उद्योगों में संलग्न होनेकेलिए एसएचजी (Self Help Group, स्वयं सहायता समूहों) के गठन को प्रोत्साहित करने का भी प्रस्ताव करता है। इससे ग्रामीण स्तर पर बेहतर रोजगार और आय के अवसर पैदा होंगे और इस प्रकार शहरों पर जनसांख्यिकीय दबाव को कम करने में मदद मिलेगी। पीपीपी संरचना पुरा को भरोसेमंद बनाएगी और बाजार निधि का दोहन किया जा सकेगा। परिकल्पित सभी विकासात्मक उद्देश्यों का निर्माण किया जा सकता है और सरकार से व्यवहार्यता अंतर वित्त पोषण के प्रावधान के साथ परियोजना व्यवहार्यता निर्धारित की जाती है। पीपीपी मॉडल PURA क्लस्टर में विभिन्न प्रकार के व्यवसाय, औद्योगिक, कृषि गतिविधियों के अनुकूल हो सकता है। डॉ. ए.पी.जे. कलाम ने इस बात पर जोर दिया कि पुरा को व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है और इसका आर्थिक पहलू भी होना चाहिए। अंत में यह

समग्र विकास है जो सरकारी योजनाओं, वित्तीय सेवाओं और बाजार कनेक्टिविटी का इष्टतम उपयोग प्रदान करता है।

स्वतंत्रता के बाद भारत ने जिस तरह की कल्याणकारी अर्थ व्यवस्था अपनाई परंतु निरंतर पंचवर्षीय योजनाएं ग्रामीण–शहरी विभाजन को पाटने में विफल रहीं और विकास मॉडल को विकृत कर दिया। ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के अवसरों, आधुनिक सुविधाओं और सभ्य जीवन के लिए सेवाओं की कमी के कारण लोगों का शहरी क्षेत्रों में प्रवास होता है। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के बीच भौतिक और सामाजिक बुनियादी ढांचे की उपलब्धता में व्यापक अंतर है। इन मुद्दों के समाधान के लिए भारत के राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुविधाओं के प्रावधान (पुरा) के लिए एक मेगा मिशन शुरू करके ग्रामीण भारत के परिवर्तन की दृष्टि पर प्रकाश डाला। भारत के 54वें गणतंत्र दिवस 2003 की पूर्व संध्या पर डॉ. अब्दुल कलाम ने राष्ट्र को संबोधित करते हुए उन्हें एक नए भारत के लिए अपने दृष्टिकोण के बारे में बताया। उन्होंने भौतिक कनेक्टिविटी, इलेक्ट्रॉनिक कनेक्टिविटी और ज्ञान कनेक्टिविटी प्रदान करने की कल्पना की, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक कनेक्टिविटी हो और जहां शहरी–ग्रामीण विभाजन कम होगा। पुरा की अवधारणा आत्मनिर्भर और व्यावहारिक ग्रामीण विकास के व्यावहारिक माध्यम के रूप में की गई थी सरकार की भूमिका में बुनियादी ग्रामीण बुनियादी ढांचे का उन्नयन और रख रखाव और व्यवस्थित प्रबंधन प्रदान करना शामिल है। भारत के प्रधानमंत्री ने 15 अगस्त 2003 को हमारे स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर ग्रामीण क्षेत्रों में निम्नलिखित सुविधाओं को विकसित करने के मिशन के साथ पुरा योजना शुरू की:

1. पानी और सीवरेज 2. गांव की सड़कें 3. शैक्षिक और प्रशिक्षण संस्थान 4. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन 5. कौशल विकास 6. आर्थिक गति विधि का विकास 7. ग्रामीण स्ट्रीट लाइटिंग 8. टेलीकॉम 9. बिजली 10. गांव से जुड़ा पर्यटन

इसलिए पुरा (PURA) योजना का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में आवश्यक शहरी सुविधाएं प्रदान करने के लिए किया जा सकता है, इससे न केवल महानगरीय शहरों पर जनसांख्यिकीय दबाव कम होगा बल्कि राष्ट्र का समग्र विकास भी होगा। इससे देश के प्राकृतिक और मानव संसाधनों का ईष्टतम उपयोग भी होगा और अंततः देश का सतत विकास होगा।

विश्व पर्यावरण व भारतीय प्रयास

पी.एस. नेगी
देहरादून

संयुक्त राष्ट्र संगठन द्वारा पर्यावरण के प्रति समाजिक, राजनैतिक जागरूकता बढ़ाने हेतु सन् 1972 में 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाने की घोषणा की थी। और तभी से प्रत्येक वर्ष इस दिन विश्व भर में लाखों लोगों द्वारा चिन्तन, मनन व जनजागरण कर पर्यावरण दिवस मनाया जाता है। भारतवर्ष ने विश्व पर्यावरण के प्रति चिन्ता व संकल्प प्रकट करते हुये विभिन्न पर्यावरण संरक्षण गतिविधियों को बढ़ावा देने के साथ–साथ अपने आम बजट 2022–23 में भी पर्यावरण संरक्षणवादी नीति को अपना कर विश्व को चौंका दिया। यूं तो आम बजट का बेसब्री से इन्तजार समाज के कुछ ही वर्गों जैसे उद्योगपतियों, छोटे–बड़े व्यापारियों व नौकरी पेशा लोगों द्वारा किया जाता है, किन्तु इस वर्ष के आम बजट ने प्रकृति विदों व पर्यावरण प्रेमियों का ध्यान भी आकर्षित किया है। प्रस्तावित बजट में आधुनिक विकास योजनाओं के साथ–2 अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के अनुरूप प्राकृतिक संसाधनों व स्थानीय परिस्थिति की तन्त्रों के संरक्षण, संवर्धन व सतत् विकास हेतु नवोदित योजनाओं का समावेश किया गया है जिससे स्वच्छ हवा, जल, जंगल, जमीन जैसे मूलभूत प्राकृतिक तत्वों के संरक्षण के साथ इंसानी सतत विकास की वैदिक अवधारणा को बल मिलता है। प्रस्तुत बजट व तत्संबंधी योजनाओं में बजट निर्माताओं की भारतीय जलवायु भिन्नता से संचालित परिस्थितिकीय तत्रों व उन पर निर्भर सामाजिक–आर्थिक विकास के प्रति गहरी समझदारी को दर्शाता है।

भारतीय जीवन दर्शन में विकास की अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के प्रतिआभार श्रृद्धा व सम्मान भाव रखकर उनके न्युनतम उपभोग की है जिससे इंसान व प्रकृति का आपसी सामंजस्य अनादि काल तक सम्भव है। प्रकृति को देवता स्वरूप व जीवन–रोटी दाता मानकर जीवन यापन करने की शिक्षा भारतीय ऋषि–मुनियों द्वारा भी दी गई है। प्रकृति ने भी भारत को चहुमुखी विकास सम्भावना हेतु भू–स्थिति के भौगोलिक वरदान से नवाजा है। पृथ्वी पर भूमध्य रेखा व कर्क रेखा के सापेक्ष विशेष भौगोलिक स्थिति, उत्तर भारत में 2400 किमी लम्बी विशाल हिमालय पर्वत श्रृंखला, दक्षिण व अन्य क्षेत्रों में 7516 किमी लम्बा समुद्र तटीय क्षेत्र होने के कारण विभिन्न ऋतुओं–मौसमों व अनोखी जलवायु व जैवविविधता का वरदान विरासत में मिला है। इसी प्रकृति प्रद्त जैवविविधता का संरक्षण व जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के न्यूनीकरण के प्रयास बजट में स्पष्ट झलक रहे है।

आम बजट में भारत के तटीय क्षेत्रों में मैंग्रूव जंगलों के संरक्षण व सवंर्धन हेतु विशेष योजना क्षेत्रीय परिथितिकीय तंत्रों के सामाजिक–आर्थिक सरोकारों से जोड़ने का प्रस्ताव सराहनीय कदम है। सम्पूर्ण भारतीय महाद्वीप के लिये महत्वपूर्ण हिमालय पारिस्थितितंत्र के प्रमुख घटक ग्लेशियर, बर्फ, औषधीय वनस्पति, जीव–जन्तु जंगल व प्राकृतिक जल श्रोतों आदि के संरक्षण व संवर्धन हेतु विशेष योजना की अपेक्षा प्रकृति प्रेमियों व पर्यावरण विदों को थी। वस्तुतः विश्व की नवीनतम व विशाल हिमालय पर्वत श्रृखला भौगोलिक व जलवायु विविधता के लिये दुनिया के सात संरक्षित क्षेत्रों में से एक है। इसी हिमालय क्षेत्र में लगभग 7 करोड़ जनसंखया निवास करती है तथा 50 करोड़ की आबादी इस क्षेत्र पर पारिस्थतिकीय सेवाओं हेतु निर्भर है।

हिमालय क्षेत्र के 13 राज्यों में से अकेले उत्तराखण्ड़ राज्य 3 लाख करोड़ की पर्यावरणीय सेवायें प्रदान कर रहा है जिससे 1 लाख का योगदान सिर्फ जंगलों का है तथा इसी राज्य से निकलने वाली जीवनदायनी गंगा नदी के जल पर देश की 40 प्रतिशत आबादी निर्भर है। हिमालय पर्यावरण सामाजिक–आर्थिक सरोकारों की नब्ज का ज्ञान रखने वालों का मानना है कि हिमालय क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा घोषित दो महत्वकांक्षी योजनाओं ''कैम्पा'' व ''नमामि–गंगे'' गतिमान है। इन योजनाओं द्वारा, जल, जंगल, जमीन के संरक्षण–संवर्धन व प्रकृति से इंसानी रिश्तों को सुधारने की यदि ईमानदारी से पहले हो जाये तो सार्थक धरातलीय सामाजिक–अर्थिक व पर्यावरणीय लाभ प्राप्त हो सकते हैं। हिमालय क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों व पर्यावरण संरक्षण का अधिक दारोमदार इन्हीं दोनों योजनाओं पर है।

भारत सरकार के पर्यावरण मंत्रालय द्वारा पोषित ''नमामि गंगे'' सन् 2014 से गतिमान है जिसका निर्माण गंगा नदी के सांस्कृतिक आध्यात्मिक महत्व को देखते हुये गंगा नदी को प्रदुषण मुक्त बनाकर पुनर्जीवित करना है। ''कैम्पा'' योजना का मूल उद्देश्य विकास योजनाओं के कारण वन विनाश की भरपाई प्रतिपूरक वनीकरण के साथ मिट्टी व जल संरक्षण द्वारा करना है। जिससे वनभूमि के गैरवन प्रयोग के प्रभाव को कम करके पर्यावरण संरक्षण किया जा सके। आम बजट में पर्यावरण उद्देश्य को महत्व देते हुये इकोलौजी व इकोनोमी'' में सन्तुलन बनाया है। जलवायु परिर्वतन जैसे अहम मुद्दे पर ध्यान केन्द्रित करते हुये कम पानी में उगने वाले मोटे अनाजों के उत्पादन को प्राथमकिता दी है।

राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जलवायु परिर्वतन पर नजर रखने वाली संस्थाओं के अनुसार इस वर्ष भारत पर गर्मी की लहर व औसत से कम वर्षा जैसी समस्याओं का प्रभाव रहेगा। जलवायु परिर्वतन की विभीषिका को टक्कर देने तथा शुष्क जलवायु में उगने वाले मोटे अनाजों का उत्पादन, विपणन, निर्यात तथा पौष्टिक भोजन के रूप में प्रचार–प्रसार कर सुनियोजित तरीके से राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग किये जा रहे है। विशेषकर उत्तराखंण्ड राज्य में स्थानीय, अन्तर्राज्यीय मेलों व कार्यक्रमों, और यहाँ तक 20 सदस्य देशों के जी–20 जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में भी स्थानीय मोटे अनाजों से निर्मित स्वादिष्ट व्यजनों को भरपूर प्राथमिकता दी गई है। मोटे अनाजों की अच्छी कीमत मिलने से छोटे व गरीब किसानों का आर्थिक स्तर सुधारने के साथ–2 आम जनमानस के स्वास्थ्य में भी सुधार होगा। रासायनिक खाद के लगातार प्रयोग से बंजर हुई खेती को फिर से प्राकृतिक रूप से उपजाऊ बनाने के उद्देश्य से आर्गेनिक खेती को प्रोत्साहन दिया गया तथा स्थानीय स्तर पर आर्कषक घोषित मूल्य के साथ बाजार उपलब्ध कराकर किसानों सामाजिक–आर्थिक तंत्र को मजबूत किया हैं जिससे पर्यावरण संरक्षण को परोक्ष रूप से बल मिलेगा। आम बजट में राष्ट्रीय स्तर पर वातावरण में प्रदूषण कम करने के उद्देश्य से जल विद्युत, पवनऊर्जा, सौरऊर्जा, ग्रीनऊर्जा व भू–तापीय ऊर्जा प्रोत्साहन व बिजली से चलने वाले वाहनों के उत्पादन में वरीयता देकर पर्यावरण संरक्षण में व प्रदूषण में नियन्त्रण की वैश्विक वचनबद्धता को दर्शाया है।

यदि आम बजट में रेखांकित योजनाओं का ईमानदारी से कार्यान्वयन हुआ तो तेजी से विकसित हो रहे भारत के सामाजिक आर्थिक व पर्यावरण सरोकारों में तेजी से वृद्धि होगी। जिससे भारत आत्मनिर्भर व सुरक्षित राष्ट्र बनकर अर्न्तराष्ट्रीय राजनीति में भी अपनी धमक और प्रभावी ढंग से रख सकता हैं।

चित्र– गर्मियों में पिलखन वृक्ष की छाया में पर्यावरण संगोष्ठी

फूलों से बात

अरिन गौर
भौतिकी विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

इन फूलों से बात करो तो ये भी सुनते है ध्वनि को
भंवरे के गीतों को सुनते
और पंछी के कुंजन को

कोयल की प्यारी वाणी सुन
इनकी भी है नींदे खुलती
और धारा के कल कल को सुन
कमल मुदित मन हर्षाता

मेरी बगिया के फूलों का
अदभूत न्यारा रूप है प्यारा
वो मेरी हर बात को सुन लेते
कहने से पहले मेरे

इन फूलों से बात करो तो
धरती की गाथा गाते हैं
क्या पसंद है क्या नहीं
एक एक कर सब बताते

कहती है वसुधा कि नित रोज लगाओ पेड़
नीर नदी सींचों या फिर अम्बर से लाओ धारा
किन्तु किनारा सुना न रहने दो किसी भी फुलवारी का

मत काटो तुम जंगल सारे
मेरे आंचल में तुम इतने खार न बोओ प्यारे
जिस दिन मेरा शैलजा अपनी
धैर्य की सीमा खोएगा

उस दिन प्यारे तुम हरियाली से रहित हो जाओगे
फिर नीली नीली वसुधा पर
सदा तैरते रह जाओगे

****

वनों की सुस्वरता

वैभव काण्डवाल
भौतिकी विभाग, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

जंगल की सुस्वरता, हरियाली की छाया,
पेड़ों की आवाज़, खेतों की नृत्य की झंकार।
हर रंग–बिरंगी खुशबू, हर ध्वनि का राग,
जंगल की गहराई में बसी है सुंदरता की बौछार।

अदब से सुनो जंगल की गुप्त बातें,
प्रकृति के लगे हुए हैं पहरे वातें।
पेड़ों की अंगीठियों से सुर सुनो बजते,
हर जीव की आवाज़, बताती विपदा या खुशियों की बातें।

नित सुनो जंगल की गहराइयों में छिपे रहस्य,
प्रकृति की गति दूर करती है जीवन का आलस्य।
चलती बरसातों की धुन में, बजती है अनहद की तार,
जंगल की आत्मा बुलाती है जीव को हर बार।

अदब से सुनो, जंगल की गुहार में छिपे गीत।
प्रकृति के दीप से जगमगाती हैं प्रीत।
अपनी छाया में समायी हुई हैं जंगल की कहानी,
अपने विचारों को पंख देते विज्ञान–साहित्य के ज्ञानी।

जंगल की सुस्वरता, विचारों की गूढ़ आवाज़,
प्रकृति की मग्नता देतीजीवन को नया एहसास।
आओ, वन–प्रकृति के गीत में खो जाएँ,
प्राकृतिक शैली की ओर नए कदम बढाएं।

****

हिमालय और हिमालय–पार की प्रकृति का चितेरा सुकुमार भूविज्ञानी : प्रो. अंशु कुमार सिन्हा

रणधीर संजीवनी
सी–2179/4, इंदिरा नगर, लखनऊ

प्रख्यात हिमालयी भूविज्ञानी, सहजात लेखक, अपने आचरण से सिखाने वाले प्रशासक, हिमालय और हिमालय–पार के धुर यात्री प्रोफ़ेसर अंशु कुमार सिन्हा का 08, अगस्त, 2023 को देहावसान हो गया। हिमालय सहित लदाख–कराकोरम क्षेत्र के भूगर्भीय, भूवैज्ञानिक और विवर्तनिक इतिहास पर कई मौलिक और विशद शोध कार्य उन्होंने किए हैं। एक कुशल प्रशासक और कोमल मानवीय गुणों का बहुत नपा–तुला सम्मिश्रण सिन्हा जी को व्यक्तित्व और स्वभाव में धनी बनाता था।

जीवन यात्रा

अंशु कुमार सिन्हा का जन्म 12 जनवरी, 1942 को काज़ीगाँव, मुरली पहाड़, राजमहल, बिहार (वर्तमान झारखण्ड) में भुवनेश्वर प्रसाद सिन्हा और सरोजिनी देवी सिन्हा के घर हुआ। विद्यालयी शिक्षा के लिए घर से 5 किलोमीटर पैदल चलकर साहिबगंज के विद्यालय जाना पड़ता था। इन विषम परिस्थितियों में भी बालक अंशु ने जिले भर में अव्वल आने पर आगे की पढ़ाई के लिए छात्रवृत्ति हासिल की।

वर्ष 1959 से 1961 में पटना साइंस कॉलेज से भूविज्ञान विषय से स्नातक (प्रवीण/ऑनर्स) में स्वर्ण पदक प्राप्त किया। भारत सरकार द्वारा दिए जाने वाली अध्येतावृत्ति में चयनित होकर वर्ष 1969 में मास्को विश्वविद्यालय से खनन अभियांत्रिकी ओर अनुप्रयोग भूविज्ञान में मास्टर्स इन टेक्नोलॉजी की स्नातकोत्तर उपाधि अर्जित की।

इसी विश्वविद्यालय से साल 1972 में संरचनात्मक भूविज्ञान आधारित शोध पर उनको पी. एच.डी. उपाधि प्राप्त हुई। उन्होंने वर्ष 1982 में मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी से "टेक्टोनिक फ्रेमवर्क एंड जियोलॉजिकल एवोल्यूशन ऑफ़ हायर सेन्ट्रल हिमालय" विषय पर डॉक्टर ऑफ़ साइंस की उपाधि हासिल की। 16 मार्च, वर्ष 1975 में अंशु कुमार सिन्हा का विवाह मीनाक्षी सिंह से संपन्न हुआ। इस विवाह से उनको दो संतान – प्रियांशु सिन्हा (बेटा) और प्रीतिका सिन्हा (बेटी) हुईं।

आज देहरादून में स्थित विश्वविख्यात वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान की स्थापना का विचार जब प्रो. डी.एन. वाडिया को आया था तब इसकी अस्थायी शुरुआत 'हिमालयी भूविज्ञान संस्थान' के नाम से दिल्ली विश्वविद्यालय में हुई थी। उस दौर में युवा अंशु कुमार सिन्हा वर्ष 1973 से 1977 तक साइंस ऑफिसर के पद में वहाँ कार्यरत रहे। संस्थान के देहरादून स्थानांतरित होने पर वे साल 1977 में वैज्ञानिक सी के पद से लेकर साल 1992 तक वैज्ञानिक एफ़ के पद पर रहते हुए यहाँ अपनी सेवा देते रहे।

लदाख और कराकोरम क्षेत्र में विशद् भूवैज्ञानिक अध्ययनों के लिए अपने शोधार्थियों और सहकर्मियों को लेकर महीना–महीना भर तक सर्वेक्षण करते रहते थे। इस संस्थान में रहते हुए उन्होंने छह पी.एच.डी. अपने कुशल पर्यवेक्षण में सम्पन्न करवाई। इसी दौरान साल 1981 से 1982 तक फ्रेंडशिप यूनिवर्सिटी, मास्को में भूविज्ञान विषय के प्रोफ़ेसर पद पर प्रतिनियुक्ति में रहे।वर्ष 1984 से 1990 तक साइंस कमेटी (आईजीसीपी), यूनाइटेड नेशन्स एड्यूकेशनल साइंटिफिक एंड कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन, पेरिस के सदस्य रहे। वर्ष 1990 में वर्ल्ड मैप ऑफ एक्टिव फाल्ट इन अवर ग्लोब इंटर यूनियन ऑफ लिथोस्फेयर प्रोग्राम के आजीवन सदस्य नियुक्त हुए।

साल 1984–1985 के नेशनल मिनरल अवार्ड से आपको सम्मानित किया गया। प्रो. अंशु कुमार सिन्हा ने वर्ष 14 नवम्बर, 1997 में बीरबल साहनी पुरावनस्पति विज्ञान संस्थान (बी एस आई पी), लखनऊ (वर्तमान में बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान (बी एस आई पी), लखनऊ) में निदेशक का पदभार ग्रहण किया। यहाँ उन्होंने

हिमालय और लदाख क्षेत्र में शोध कार्यों की शुरुआत बड़े पैमाने पर करवाकर संस्थान में एक नया आयाम जोड़ा। मध्य हिमालय पर लिखे हुए इनके मोनोग्राफ को बहुत मान्यता मिली।

बी एस आई पी, लखनऊ के निदेशक पद पर सिन्हा जी ने वर्ष 2003 के फरवरी माह तक कुशलतापूर्वक कार्य किया। मंडोर, साहिबगंज में जीवाश्म पार्क बनाने में भी इनकी मुख्य भूमिका रही है। प्रो. सिन्हा को भावभीनी श्रद्धांजलि देते हुए बी एस आई पी, लखनऊ से सेवानिवृत्त विज्ञानी डॉ. रश्मि श्रीवास्तव लिखती हैं कि "वह एक सहृदय एवं कुशल प्रशासक थे। संस्थान के पुस्तकालय में आने वाली पुस्तक तथा शोध पत्र सदैव सर्वप्रथम पढ़कर उस क्षेत्र में काम करने वाले वैज्ञानिकों को फोटोकॉपी भेजा करते थे।"

प्रो. सिन्हा युवा सहकर्मियों के लिए बहुत सहायक और उत्साहवर्धक रहते थे। वे अपने आचरण से सिखा जाने वाले व्यक्तित्व के स्वामी थे। उनका अपना एक समृद्ध निजी पुस्तकालय हमेशा रहा। वह प्रशासनिक गुण जिससे सजा भी सजनात्मक ऊर्जा का स्रोत बन जाए उनके अन्दर था। जाड़ों के दिनों के अलसाए हुए माहौल में संस्थान के निरीक्षण के लिए घूमते वक्त किसी विज्ञानी के डस्टबिन में मूँगफली के छिलके देख लेने पर उस विज्ञानी को थोड़ी देर में अपने निजी पुस्तकालय में बुलवाकर 'आपने ये नया रिसर्च पेपर देखा' कहते हुए पढ़ने के लिए शोध पत्र दे देते थे।

ऐसा करके किसी की जड़ता को तोड़ने वाले अपने इस भूतपूर्व निदेशक के उत्प्रेरक और साथ ही सहज मानवीय स्वभाव की बातचीत बी.एस.आई.पी., लखनऊ की दीवारें आज भी करती हैं और ये यादें हमेशा गूँजती भी रहेंगी। तरह–तरह की चट्टानों से इकट्ठा किए हुए नमूनों और हिमालय के जगह–जगह के मानचित्रों से उनका दफ्तर भरा हुआ रहता था।

वह जियोलॉजिकल सोसायटी आफ लंदन एवं अन्य कई स्वदेशी और विदेशी अकादमिक संस्थाओं के फ़ैलो रहे। कैंब्रिज विश्वविद्यालय, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, वर्जीनिया पॉलिटेक्निक, कनेटिकट विश्वविद्यालय, अमेरिका, रसियन एकेडमी ऑफ़ साइंसेज ओस्लो, स्वीडिश और कोपनहेगन यूनिवर्सिटी ऑफ़ स्कैंडिनेविया समेत कई दूसरे

विश्वविद्यालयों, अकादमियों में उन्हें अतिथि प्रोफेसर के रूप में आमंत्रित किया जाता रहा।

वह अपने कार्यकाल में कई अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय वैज्ञानिक आयोजनों के समन्यवक–संयोजक वह अपने कार्यकाल में बनते रहे। प्रो. सिन्हा के छह पी.एच.डी. शोधर्थियों में से एक रहे डॉ. राकेश चन्द्रा, (कश्मीर विश्वविद्यालय) बताते हैं कि "फील्ड वर्क के दौरान वहाँ के क्षेत्रीय संरचना और विवर्तनिक में उनकी गहरी पैठ, विशद समझ और मौलिक सोच चमत्कृत कर देने वाली होती थी।

भूआकृति और भूवैज्ञानिक संरचना को मिलाकर वो कुछ ही क्षण में जो आरेख फील्ड डायरी में खींच देते थे वह आरेख बहुत ही सुन्दर और बोधगम्य होते थे। अब तो वह आरेख हमारे पास अमूल्य मीठी यादें बनकर रहेंगे। वह एक निष्ठावान राष्ट्रवादी थे। साल 1962 में हुए चीन के आक्रमण के खिलाफ लड़ने के लिए जमा किए जा रहे अंशदान में उन्होंने भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद को अपना स्वर्ण पदक दान स्वरूप समर्पित कर दिया था।"

रचना संसार

प्रो. ए. के. सिन्हा ने हिमालय के विभिन्न भागों में शोध अध्ययन करते हुए प्रचुर लेखन कार्य किया। वे मौलिक और विस्तृत शोध अध्ययन करते हुए हिमालय और हिमालय पार

के इनके इतिहास पर, इन इलाकों में तरह–तरह के चट्टानों की जागीरें जमने की दास्ताँ पर कई ऐसे शोध पत्र प्रकाशित करते रहे जो अपने में मिसाल बने।

वह एक समर्पित विज्ञानी थे जिन्होंने शुरुआती दौर पर शैवाल/काई से बनने वलो चूनेदार अवसाद (शैवाल–निक्षेपाश्म/स्ट्रोमैटोलाइट्स) पर विशेषज्ञता अर्जित की। हिमाचल की ज्वालामुखी/आग्नेय शैलों के आयु–निर्धारण पर शोध पत्र प्रकाशित किए। आपने जाने–माने भूविज्ञानी डॉक्टर जी. फुक्स के साथ 'जियोलॉजी एंड टेक्टोनिक्स ऑफ़ गढ़वाल एंड कुमाऊं लैसर हिमालय (1978)' किताब का लेखन किया।

सिन्हा जी का मध्य और टैथिस हिमालय पर लिखा हुआ प्रबन्ध 'जियोलॉजी ऑफ हायर सेंट्रल हिमालय (1989)' इस हिमालयी क्षेत्र में काम करने वालों और समझ बनाने वालों के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। ग्रेइस्बाच (1891) के प्रारम्भिक शोधों तथा हेइम और गैन्सर की वर्ष 1939 में प्रकाशित हुई किताब 'सेन्ट्रल हिमालया जियोलॉजिकल ऑब्जर्वेशन्स ऑफ़ द स्विस एक्सपीडिशन 1936' के बाद सिन्हा जी का प्रबन्ध ही उच्च और टैथिस हिमालय के भूविज्ञान को अद्यतन और विस्तृत रूप में प्रकाश में लाया।

दस अध्यायों में फैला यह प्रबंध लघु हिमालय के कुछ भाग और उच्चतर मध्य हिमालय के सांस्कृतिक–ऐतिहासिक, भौमिक, भूवैज्ञानिक परिचय, इनमें तब तक हो चुके भूवैज्ञानिक अन्वेषणों, इनके भूविज्ञान और इनकी चट्टानों के स्तरक्रम विन्यास, इनके विवर्तनिक ढ़ाँचे, इस क्षेत्र के भूवैज्ञानिक विकास, उस भूवैज्ञानिक विकास के दौरान रहे कायांतरित और मैग्मीय दौरों, उनका भूरासायनिक और भूकालानुक्रम विश्लेषण, यहाँ के अवसादों के ढेरों में मिले अवसादीय और संरचनात्मक लक्षणों, मध्य हिमालय में विभिन्न संरचनात्मक–स्तरक्रम विन्यास अनुक्षेत्र, विरूपण और विवर्तनिक इतिहास, का वर्णन किया है।

विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवाश्मों के आधार पर इस इलाके के स्तरक्रम विन्यास में भारी फेरबदल करके सिन्हा जी ने बहुत ही मौलिक योगदान इस प्रबन्ध के जरिए किया है। साथ ही इस किताब में यहाँ मिलने वाले बेराइट खनिज निक्षेपों के मानचित्रण के साथ जानकारियाँ भी दी गई हैं। नए शोधकर्ताओं और विद्यार्थियों के लिए इन दुर्गम इलाकों में क्षेत्रीय अभियान को अधिक सुगम्य बनाने के लिए संभावित आपदाओं, उपलब्ध संभार तंत्र के साथ चिकित्सा सहायता पर भी टिप्पणियाँ दी गई हैं।

इस प्रबंध के 124 आरेख, जिसमें से 2 रंगीन भूवैज्ञानिक मानचित्रों, 6 आरेख मानचित्रों, 2 रंगीन स्तरक्रम विन्यास चित्रों, चार भूवैज्ञानिक अनुदैर्घ्य परिच्छेदिका चित्रों, 6 श्वेत–श्याम परिदृश्य तस्वीरों को एक लिफ़ाफ़े नुमा जेब के अन्दर रखा गया है, इस किताब को पुस्तकालयों के लिए सर्वथा उपयुक्त सन्दर्भ ग्रन्थ बनाते हैं।

'कन्टेम्पेरी जियोसाइंटिफिक रिसर्च इन हिमालय'के दो जिल्द (1981, 1982)', 'जियोडायनेमिक डोमेन्स इन अल्पाइन–हिमालयन टेथिस (1997)','हिमालय ओरोजन एंड ग्लोबल टेक्टोनिक्स (1992)' और वर्ष 1975 से वर्ष 1995 तक जनरल ऑफ़ हिमालयन जियोलॉजी के अंकों का संपादन भी प्रोफेसर सिन्हा द्वारा किया गया है। साल 2002 में एम.ई.राबेन और एम. शर्मा के साथ 'प्रीकैम्ब्रियन स्ट्रोमैटोलाइट्स ऑफ़ इंडिया एंड रशिया' शीर्षक से सिन्हा जी का एक और किताब प्रकाशित हुई है।

अंशु कुमार सिन्हा के तकरीबन 100 शोध–पत्र प्रकाशित हुए। हिमालय–पार के इंडस–सांगपो सुचर ज़ोन के विवर्तनिक ढाँचे, हिमालयी–तिब्बतीय पर्वतन से पहले हुए अवसादन, हिमालय पर्वतन के अहम शैल प्रकार 'फ्लिश (फ्लीस्क)', लदाख क्षेत्र में हुए भारतीय प्लेट और एशिया प्लेट की भिड़ंत और उस टक्कर से जुड़े ज्वालामुखी प्रक्रमों पर आपका वरेण्य काम है।

पूर्वी कराकोरम के भूवैज्ञानिक विकास, हिमालय पर्वत के बनने और उससे सम्बद्ध विवर्तनिक प्रक्रमों, ऑफ्लाइटिक मेलांज पट्टी में उपलब्ध प्रमाणों से भारत यूरेशिया टक्कर से जुड़े विवर्तनिक पर उनके द्वारा विस्तृत, प्रगतिशील और विचारोत्तेजक शोध पत्र प्रकाशित किए गए हैं। द्रास और लामायुरु क्षेत्र से शैवाल ऑन्कोलाइट्स, अंतःग्रसन अभिवृद्धि (सबडक्शन एक्रिशन= विवर्तनिक प्लेटों के धँसने की जगह पर धँसती हुई प्लेटों का जुड़ना) और सबडक्शन निडिंग पर भी आपके लिखे हुए शोध पत्र बहुलता में उद्धृत किए गए हैं और किए जा रहे हैं।

प्रो. सिन्हा उन भूविज्ञानियों से हैं जिन्होंने टैथिस– और ट्रांस–हिमालय में अपने कदम रखकर रास्तों की शुरुआत की थी। आज इन जगहों पर काम करने वाले नई पीढ़ी के लोग उन्हीं रास्तों पर चलते हुए आपकी प्रेरणा से नए मंजिलों को बढ़ रहे हैं। अंशु कुमार सिन्हा जी के प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त करने का सार्थक विधान यही रहेगा कि उनकी लेखनी का अनुशीलन करते हुए उनके द्वारा सम्पन्न किए गए शोध अध्ययनों में निहित अनछुए आयामों में शोध कार्यों को आगे बढ़ते हुए हिमालयी भूविज्ञान को और समृद्ध किया जाए।

साल 2012 के दिसंबर में काठमांडू, नेपाल में आयोजित हिमालय–कराकोरम–तिब्बत वर्कशॉप में प्रो. अंशु कुमार सिन्हा जी से मिलने और बातचीत का सुअवसर मौका मिला था। उसी दौरान दिन की चाय के दौर में आपको कैमरे के जरिए अपनी यादों की संदूकची में सहेज लिया था।

इसी तस्वीर, जो उनके कर्मशील, आत्मविश्वास और मानवीय गुणों से भरे रौबदार व्यक्तित्व को बखूबी दर्शाती है, के साथ इस लेख की उपसंहार करते हुए उनकी प्रेरणादायक स्मृति को सादर नमन। प्रो. सिन्हा अपने प्रबन्ध 'जियोलॉजी आफ हायर सेंट्रल हिमालय (1989)' के पहले अध्याय की शुरुआत प्रो. सिन्हा दार्शनिक ग्रन्थ गीता के छठे अध्याय के नौवें श्लोक से करते हैं, मानो संक्षिप्त रूप में प्रबन्ध लेखन के प्रारम्भ में मंगलाचरण करने की परम्परा निभा रहे हों।

दूसरे शब्दों में एक विज्ञानी, एक लेखक या एक चिन्तनशील व्यक्ति बिना आसक्ति के, केवल तटस्थ रहकर कोई मौलिक निष्पत्ति दे सकता है, ऐसा सन्देश दे रहे हों। इस श्लोक में वर्णित मनोस्थिति को ही अपने कर्मों के माध्यम से प्राप्त करना ही उनके जीवन का ध्येय रहा होगा, यह निहितार्थ ही हम सबके लिए प्रेरणादायक है।

सुहृन्मित्रर्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु सम्बुद्धिर्विशिष्यते।। (6, 9,गीता)

सुहृद्, मित्र, वैरी, उदासीन, मध्यस्थ, द्वेष्य और बन्धुगणों में, धर्मात्माओं में और पापियों में भी समान भाव रखने वाला अत्यन्त श्रेष्ठ है।

संसारः स्वप्नतुल्यो हि

छवि पंत
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

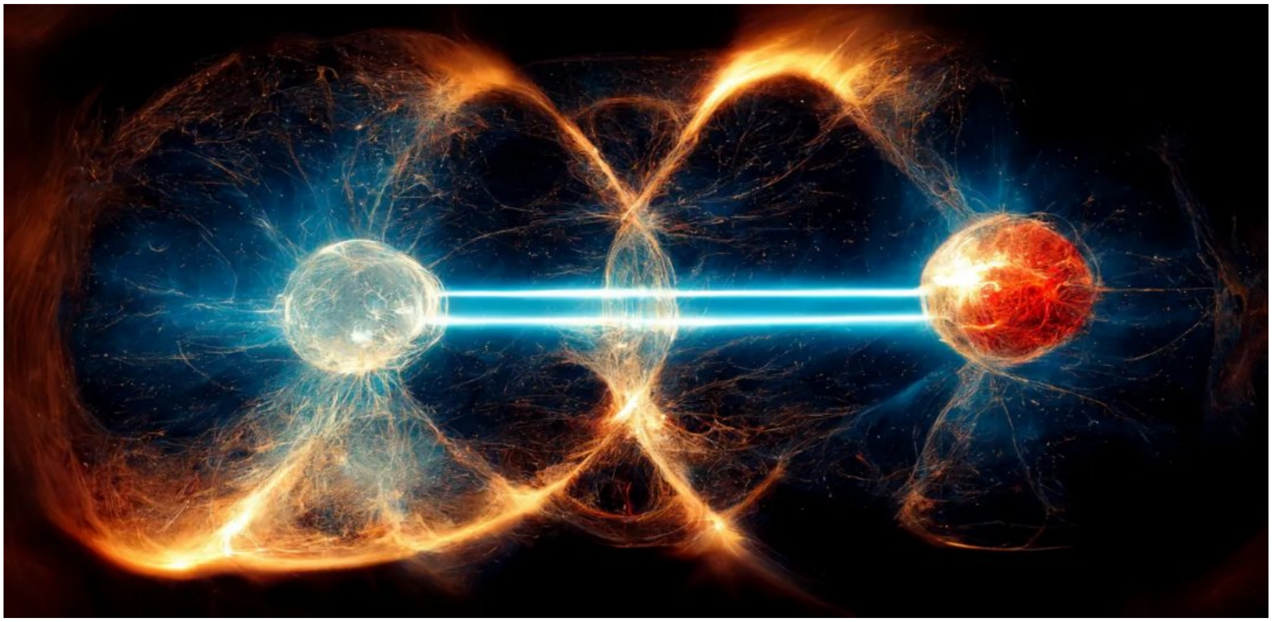

(चित्र साभारः अगस्तो / एडोब स्टॉक)

वर्ष 2022 का भौतिक विज्ञान का नोबेल पुरस्कार 'एलेन एस्पेक्ट' (फ्रांस), जॉन एफ क्लॉजर (अमेरिका), एंटोन ज़िलिंगर (ऑस्ट्रिया) को संयुक्त रूप से प्रदान किया गया। इन तीनों वैज्ञानिकों ने अलग–अलग प्रयोगों द्वारा क्वांटम एनटेन्गलमेंट या क्वांटम उलझाव की अति जटिल प्रक्रिया को समझाया। अब अनायास ही उत्सुकतावश यह प्रश्न मन में उठता है कि यह क्या प्रक्रिया है जिसके लिए नोबेल पुरस्कार दिया गया। क्वांटम इनटैंगलमेंट को समझने से पहले क्वांटम मैकेनिक्स को समझना होगा और इससे पहले क्लासिकल मैकेनिक्स को। यह स्वयं में अत्यंत गूढ़ विषय है परन्तु यहाँ हमारा प्रयास रहेगा कि इस विषय को हम सहजता से सरल भाषा में समझ पाएं। इस विषय को समझने के लिए समय में थोड़ा पीछे चलते हैं।

सत्रहवीं शताब्दी में आइजेक न्यूटन के क्रांतिकारी वैज्ञानिक आविष्कारों ने भौतिक जगत को समझने के हमारे दृष्टिकोण को बदला। गति के नियम, गुरुत्वाकर्षण के नियम, प्रकाशिकी के नियम, सापेक्षता का सिद्धांत इत्यादि अनेक खोजों ने भौतिक जगत को अंधविश्वास से परे देखने की तार्किक व वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान की। न्यूटन के समकालीन और पश्चात् कई वैज्ञानिक हुए जैसे आइंस्टीन, टेस्ला, केप्लर आदि जिनके द्वारा की गयी खोजों ने ऊर्जा और पदार्थ को समझने में अहम् भूमिका निभाई जिससे न केवल समझ में वृद्धि हुई अपितु अनेक वैज्ञानिक आविष्कार भी इन सिद्धांतो के आधार पर हुए जैसे रात में हमारे जगत को रोशन करती बिजली से लेकर पृथ्वी से बाहर चन्द्रमा की यात्रा तक का सफर इन आविष्कारों की देन हैं। उन्नीसवीं शताब्दी आते–आते भौतिक और गणितीय सिद्धांतो ने हमारी दुनिया में बहुत परिवर्तन ला दिया था जो रचनात्मक के साथ–साथ विध्वंसक भी था (यहाँ इशारा विश्वयुद्ध और उसमे प्रयुक्त विनाशकारी हथियारों से है)।

हमारे आस–पास की दुनिया एक निश्चित नियम के अनुसार कार्य करती है, और भौतिक विज्ञान उस नियमावली के समान है जो प्रकृति की कार्यप्रणाली को सरलता से समझाता है। भौतिक विज्ञान पदार्थ, उसके मूलभूत घटकों,

उसकी गति और व्यवहार, स्थान–काल के माध्यम से और ऊर्जा और बल के सम्बन्ध में अध्ययन करता है। संक्षेप में कहें तो इस विषय का मुख्य लक्ष्य यह समझना है कि ब्रह्माण्ड कैसे व्यवहार करता है। उदाहरण के लिए हमारे सौरमंडल में प्रत्येक ग्रह की गति को इतनी सटीकता के गणित व भौतिक विज्ञान से समझा जा सकता है कि कृत्रिम उपग्रह को पूर्ण सटीकता के साथ पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया जा सकता है। अभी हाल ही में चंद्रयान–3 और आदित्य एल–1 के सफल परीक्षण का सीधे प्रसारण में हमने देखा कि गणितीय सूत्रों द्वारा की गयी गणनाओं के आधार पर सटीकता से प्रक्षेपण किये गए तथा उपकरण अपने यथा–निर्धारित स्थान में स्थापित हुए। एक व्यावहारिक उदहारण से समझते हैं, यदि हमें एक निश्चित दूरी तय करनी हो और हम अपनी गति को निर्धारित कर लें तो आरम्भिक स्थान से लक्ष्य तक पहुंचने के समय का सटीक निर्धारण करना संभव है। प्रकृति के सभी नियम जो हमारे प्रत्यक्ष अनुभवों में हैं वो भौतिक विज्ञान की क्लासिकल मैकेनिक्स या न्यूटोनियन मैकेनिक्स के अंतर्गत आते हैं। ये नियम इतनी सटीकता से कार्य करते हैं कि जिस गुरुत्वाकर्षण के नियम से सेब पेड़ से नीचे गिर रहा है, उसी नियम पर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के सभी पिंड आपस में सम्बंधित हैं।

परन्तु इसके विपरीत हमारे भौतिक जगत में एक ऐसी दुनिया भी है जो इन नियमों से इतर कार्य करती है और ऐसी प्रतीत होती है मानो कोई तिलिस्म या कोई जादू हो। वह दुनिया है **'क्वांटम वर्ल्ड'**।

प्रकाश क्या है 'तरंग' या 'कण'? पदार्थ की सबसे छोटी इकाई क्या हैं? किस नियम के आधार पर सूर्य अरबों सालों से चमक रहा है और आगे भी अरबों सालों तक चमकेगा ? आदि ऐसे अनेक प्रश्न थे जिनका उत्तर सामान्य भौतिक विज्ञान से मिल पाना संभव नहीं हो पा रहा था। 1900 के दशक में मैक्स प्लांक नामक वैज्ञानिक ने यह खोजा कि प्रकाश का उत्सर्जन सतत न होकर ऊर्जा के छोटे–छोटे बंडल के रूप में होता है इन बंडलों का नाम 'क्वांटा' रखा गया। यह आविष्कार क्वांटम जगत की नींव के प्रथम सिद्धांत के सामान था। इसके पश्चात् विज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। वैज्ञानिक थॉमस यंग द्वारा किये गए डबल–स्लिट प्रयोग पिछली सदी का एक क्रांतिकारी वैज्ञानिक प्रयोग था जिसने प्रकाश के ही नहीं वरन सुक्ष्म जगत में कणों के (जैसे इलेक्ट्रान, प्रोटोन इत्यादि) के द्विक–स्वभाव अर्थात एक ही समय में कण व तरंग दोनों अवस्थाओं में होने को सिद्ध किया। आश्चर्य था कि केवल कण को देखने मात्र से उसका स्वाभाव निर्धारित हो रहा था अर्थात यदि कोई दृष्टा हो तो कण और कोई दृष्टा न हो तो तरंग / ऊर्जा (यहाँ दृष्टा का अर्थ वैज्ञानिक विधि द्वारा मापन से है)। यह एक आधारभूत प्रयोग था जिसने एक नयी दुनिया में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया। इसके पश्चात् तो जैसे आविष्कारों की झड़ी ही लग गयी। मैक्स प्लांक (1918), एल्बर्ट आइंस्टीन (1921), नील्स बोर (1922), डी–ब्राई (1929), हैइज़ेनबर्ग (1932), पॉल डिराक (1933), मैक्स बोर(1954), पॉली (1931), रिचर्ड फिनमैन (1965) ने अपनी असाधारण बौद्धिक प्रतिभा को प्रदर्शित करते हुए क्वांटम भौतिकी को नयी ऊंचाइयाँ प्रदान की। जिसके लिए इन सभी को प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। पिछली शताब्दी में न केवल सैद्धांतिक रूप में एक नयी दुनिया खोजी गयी अपितु इसने अनेकानेक अनुप्रयोगों ने हमारी आम जीवन को भी चमत्कृत कर दिया उदाहरण कंप्यूटर, मोबाइल, सौर–ऊर्जा तकनीकी, न्यूक्लियर–पावर प्लांट, लेज़र टेक्नोलॉजी आदि कुछ उदाहरण हैं जिसने हमारे जीवन में आमूलचूल परिवर्तन ला दिए। सूचना क्रांति के जिस युग में हम आज है वो क्वांटम भौतिकी की ही देन है।

"क्वांटम एंटैंगलमेंट या क्वांटम उलझाव पदार्थ की एक ऐसी अवस्था है जिसमें एक कण (या पदार्थ) की अवस्था की जानकारी होने से दूसरे की अवस्था का पता बिना किसी समय अंतराल के लग जाता है चाहे वो दो कण (पदार्थ) ब्रह्माण्ड में कितनी भी दूर हों। न केवल अवस्था का पता चलता है अपितु एक की अवस्था परिवर्तन से दूसरे की अवस्था में परिवर्तन स्वतः ही हो जाता है वो भी बिना किसी समयांतराल के। इसका अर्थ ये हुआ की सूचना को प्रकाश की गति से भी तेजी से संचारित किया जा सकता है चाहे एंटैंगलमेंट कण (या पदार्थ) संपूर्ण ब्रह्माण्ड में कितनी ही दूर क्यों न हो। दूसरे शब्दों में कहें तो बिना किसी समय और स्थान से परे सूचना का संचरण संभव है। यह अपने आप में एक विस्मृत कर देने वाली खोज है इस क्रांतिकारी खोज को सिद्धांत से प्रयोगिक रूप में सिद्ध करने में पृथ्वी की सर्वश्रेष्ठ बुद्धिक क्षमता ने अथक रूप में एक सदी का समय लगाया। इस अत्यधिक गूढ़ विषय को समझने के लिए गणित और

भौतिक विज्ञान का उच्च स्तरीय ज्ञान आवश्यक है।

इस सिद्धांत के सिद्ध हो जाने से **'सापेक्षता के सिद्धांत'** का भी उलंघन हो रहा था जो कहता है कि 'प्रकाश की गति से अधिक कोई गति संभव नहीं'। 1920–1930 के दशकों में यह सिद्धांत वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित किया गया था परंतु इस सिद्धांत को लेकर वैज्ञानिक एकमत नहीं थे या कहें अधिकतर वैज्ञानिक विरोध में थे जिनमें मुख्य नाम वैज्ञानिक आइंस्टीन का था। उन्होंने क्वांटम भौतिकी को त्रुटिपूर्ण या अपूर्ण माना तथा वह इस सिद्धांत को 'दूर घटने वाली एक भूतिया घटना' (**'स्पूकी एक्शन एट अ डिस्टेंस'**) कहा करते थे। उन्होंने **'कण–तरंग द्वैत'** सिद्धांत को ये कहकर ठुकराया कि 'यदि चन्द्रमा को देखने वाला दृष्टा न हो तो क्या चन्द्रमा का अस्तित्व नहीं होगा'। उनको स्वयं नोबेल पुरस्कार क्वांटम भौतिकी के फोटो–इलेक्ट्रिक प्रभाव को सिद्ध करने के लिए प्राप्त हुआ था पर फिर भी वे इस विधा के कई सिद्धांतों को स्वीकार नहीं कर पाए। परंतु लगभग एक शताब्दी उपरांत ये प्रायोगिक रूप से सिद्ध हो गया है कि कण (या पदार्थ) ब्रह्माण्ड में अधिकतम संभव दूर होते हुए भी एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े रह सकते हैं कि एक की अवस्था को पता दूसरे का सदा रहता है इससे यह भी सिद्ध होता है कि 'ब्रह्माण्ड स्थानीय रूप से वास्तविक नहीं है'।

'संसारः स्वप्नतुल्यो हि' (यह संसार स्वप्न के समान है, अर्थात जो दिखता है वह सत्य नहीं है) जो भारतीय वेदांत दर्शन सदा से कहता आया है। भारतीय उपनिषदों के साथ क्वांटम प्रौद्योगिकी के उपर्युक्त वर्णित सिद्धांतों की सहसंबंधता का उल्लेख वर्ष 1922 में भौतिकी के क्षेत्र में डेनमार्क के नोबल पुरस्कार विजेता नील्स बोर अपने कथन "मैं प्रश्नों के लिए उपनिषदों का पठन करता हूं" के द्वारा कर चुके हैं। इसी संदर्भ में मुण्डक उपनिषद में **"ब्रह्मैवेदममृतं पुरस्तात् ब्रह्म पश्चात् ब्रह्म उत्तरतो दक्षिणतश्चोत्तरेण। अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वमिदं वरिष्ठम् ।।** ।। 2.2.11 का प्रत्यक्ष आशय जीवित प्राणियों के अंतरसंबंध से है, जो कि भक्त/योगी को शरीर एवं जीवित प्राणियों के मध्य के संबंध का बोध कराता है। जीव की यथार्थ प्रवृत्ति को केवल शाश्वत स्रोत से समावेश उपरांत ही ज्ञात किया जा सकता है। आस्ट्रियन नोबल पदक विजेता इरविन श्रोडिंगर ने एक ऐसे ब्रह्मांड के बारे में बात करते हुए उद्धृत किया जिसमें कणों को तरंग फंक्शनों द्वारा दर्शाया जाता है, उन्होंने कहा था, "वेदांत की एकता और निरंतरता तरंग यांत्रिकी की एकता और निरंतरता में परिलक्षित होती है। यह पूरी तरह से समग्र वैदिक दर्शन के अनुरूप है।"

सनातन उपनिषदों और वेदांत स्वयं में परिपूर्ण ज्ञान को समेटे हुए हैं और समय–समय पर विज्ञान को सही एवं स्पष्ट दिशा दिखाने में सक्षम हैं। प्राचीन भारतीय ग्रंथो में समाहित ज्ञान का पुनः नवीन परिदृश्य में अध्ययन किया जाना स्वयं में गहन शोध का विषय है तथा संभवतः विज्ञान को नवीन दिशा दे सकता है।

समकालीन परिदृश्य में, आज हम जिस सूचना क्रांति के युग में हैं वो किसी से अछूता नहीं है । यदि क्वांटम उलझाव के इस सिद्धांत पर क्वांटम कंप्यूटर (जिस पर शोध कार्य जोरों पर चल रहा है) बन जाये तो हमारा सूचना तंत्र किस स्तर तक उन्नत हो जायेगा ये अनुमान भी लगाना अभी कठिन है। निकट भविष्य में इस विषय की महत्ता को देखते हुए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय क्वांटम मिशन की घोषणा की गयी है जिसके तहत वर्ष लगभग 6000 हजार करोड़ की मंजूरी केबिनेट द्वारा दी गयी है। इस मिशन का प्रमुख उद्देश्य मूलतः फोटोन व अन्य मूलभूत कणो के क्वांटम व्यवहार का अध्ययन कर विभिन्न प्रकार के संवेदकों के निर्माण द्वारा राष्ट्र के सतत् विकास में अपनी प्रमुख भूमिका निभाना है। इस नियोजित मिशन के अंतर्गत क्वांटम प्रौद्योगिकी में राष्ट्रीय स्तर पर एक जीवंत व अभिनव पारितंत्र का निर्माण शामिल है। इस अनूठे वैज्ञानिक मिशन के सूत्रपात के साथ हमारा देश अमेरिका, ऑस्ट्रिया, फ़िनलैंड, फ्रांस, कनाडा, व चीन के बाद समर्पित क्वांटम मिशन वाला सातवां राष्ट्र बनेगा। क्वांटम प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नयन से देश को संवर्धित कंप्यूटिंग शक्ति, उत्कृष्ट संचार तकनीकें, उन्नत कृत्रिम बुद्धिमत्ता, बेहतर संवेदन एवं मापन जैसे बहुआयामों में लाभ होगा। क्वांटम प्रौद्योगिकी में असंख्य संभावनाएं हैं, जो राष्ट्र निर्माण के पथ को प्रशस्त करेंगी। परन्तु इसे पूर्णतः अंगीकृत करने से पूर्व अनेक चुनौतियों व प्रौद्योगिक अंतरालों को सतत् नवोन्मेष व नवाचारों से विस्तार की गहन आवश्यकता है।

पर्यावरण संरक्षण पर भारतीय चिंतन

श्री सत्य प्रकाश शर्मा 'सत्य'
पेसिफिक गोल्फ स्टेट, सहस्त्रधारा रोड़, देहरादून–248001

जले विष्णुः थले विष्णुः विष्णु पर्वत मस्तके।
ज्वाला माला कुले विष्णुः सर्वे विष्णुमयं जगत॥

दोस्तों, जो विषय हजारों वर्षों से भारतीय सनातन वैदिक पद्यति का अभिन्न अंग रहा है। जिस विषय पर मेरे देश के महान ऋषि मुनियों से लेकर आज के भूगर्भ शास्त्री, वैज्ञानिक विद्वान बड़ी गंभीरता से काम कर रहे है, उसकी तरफ संयुक्त राष्ट्र ने ध्यान 1972 में विधिवत रूप से दिया। और तदनुसार मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, जो 5–16 जून, 1972 को स्टॉकहोम, स्वीडन में हुआ, वहीं से विश्व पर्यावरण दिवस की शुरुआत हुई।

प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र के साथ कई सरकारी अथवा अर्ध सरकारी संस्थाओं ने सहयोग करके भारत मे बड़े स्तर पर इन कार्यक्रमों के माध्यम से पूरे वर्ष पर्यावरण संरक्षण हेतू अपने योगदान को सुनिश्चित किया है। संयुक्त राष्ट्र एन्वाइरन्मेंट प्रोग्राम के तहत इस वर्ष विश्व पर्यावरण दिवस की थीम "प्लास्टिक प्रदूषण का समाधान" रखी गयी है ।

पर्यावरण और भारतीय चिन्तन पर मैं पूरे विश्वास के साथ यह दावा करने का साहस रखता हूँ की पर्यावरण के बिंदु पर भारतीय चिंतन के बिना वैश्विक स्तर पर पर्यावरण का संरक्षण और समाधान संभव ही नहीं है। पर्यावरण संरक्षण को लेकर भारत का दर्शन ही विश्व का मार्गदर्शन कर सकता है ।

प्राणी और पर्यावरण एक दूसरे पर निर्भर करते है। पर्यावरण का शुद्ध होना ही प्राणी मात्र के स्वास्थ्य को सुनिश्चित करता है। क्योंकि प्रकृति स्वयं मे निर्मल है स्वच्छ है सुंदर है। शाब्दिक दृष्टि से यदि समझे तो पर्यावरण दो शब्दों– 'परि और आवरण' से मिलकर बना है। जिसका अर्थ है– चारों ओर का घेरा। हमारे चारों ओर जो भी वस्तुएं, परिस्थितियां विद्यमान हैं, वे मानव–क्रियाकलापों को प्रभावित करती हैं और उसके लिए एक दायरा सुनिश्चित करती हैं। इसी दायरे को हम पर्यावरण कहते हैं। यह दायरा आवास, गांव, मुहल्ला, नगर, प्रदेश, देश, महाद्वीप ग्लोब अथवा संपूर्ण सौर मंडल का हो सकता है। पर्यावरण अनेक छोटे बड़े तंत्रों से लेकर अनेक विशाल तंत्रों का जटिल सम्मिश्रण है, इसीलिए वेदकालीन मनीषियों ने द्युलोक से लेकर व्यक्ति तक शांति की प्रार्थना की है–

ओम द्योः शांतिरंतरिक्षम् शांतिः पृथिवी शांतिरापः शांतिरोषधयः शांतिर्वनस्पतयः शांति विश्वे देवाः शांतिरेधि।

यह है पर्यावरण पर भारतीय सनातन वैदिक परंपरा का चिंतन। जो प्रकृति के हर अंग का सम्मान करने का संदेश देता है। वृक्ष फूल पौधे नदियाँ झरने सब हमारे जीवन के रक्षक है। फ़िर समझाना यह है कि जो हमारे रक्षक है हमें उनकी रक्षा क्यों नही करनी चाहियें। घर में तुलसी के पौधा का मात्र धार्मिक अर्थ नहीं है बल्कि तुलसी का पौधा घर को विषाणु मुक्त रखने में सहायक होता है। आज पूरा विश्व यदि किसी एक समस्या को लेकर चिंतित है, तो वह पर्यावरण की समस्या है। प्राचीन भारत में मानव का सर्वप्रथम ध्येय प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तारतम्यता बनाए रखना था। हमारे धर्मशास्त्रों व उपनिषदों के नियम इस तारतम्यता की इच्छा को प्रदर्शित करते हैं।

हम अपना मकान बनाते है उसमें निवास करते है तो पूरा ध्यान रखते है कि वो साफ रहे स्वच्छ रहे। सुंदर रहे। उसमें समुचित हवा पानी अग्नि जल आकाश यानि स्पेस हो। प्रतिदिन हम इसके लिये तत्पर रहते है। फ़िर इस व्यापक शहर राज्य और देश को भी अपना निवास स्थान समझे। इसे साफ सुथरा स्वच्छ रखने मे सहयोग करे। इसकी हवा पानी मिट्टी अग्नि आकाश सबको साफ रखने मे सहयोग करे। अपने अपने घर और आस पास साफ सफाई रखेंगे तो सारा देश सुंदर और पर्यावरण स्वच्छ हो जाएगा। गंभीरता से सोचने का विषय है।

- जल संरक्षण
- मिट्टी संरक्षण

- जंगल संरक्षण
- वन्य जीव संरक्षण
- ऊर्जा संरक्षण

इन सबका संरक्षण ही पर्यावरण संरक्षण को सुनिश्चित करता है। हम छोटे छोटे लेकिन उपयोगी कदम उठा सकते है। जैसे –

क) घर की खाली जमीन, बालकनी, छत पर पौधे लगायें।

ख) ऑर्गेनिक खाद, गोबर खाद या जैविक खाद का उपयोग करें।

ग) कपड़े के बने झोले–थैले लेकर निकलें, पॉलिथीन–प्लास्टिक न लें।

घ) दिन मे खिड़की से पर्दे हटायें, दिन में सूरज की रोशनी से काम चलायें।

च) अति आवश्यक हो तभी बिजली और उपकरणों का प्रयोग करे।

छ) ईधंन के रूप में पेट्रोल डीजल वाहन का प्रयोग समझदारी से करे।

ज) कार पूलिंग की जा सकती है, कम दूरी पैदल जाया जा सकता है।

झ) जलाशयों का संरक्षण करे।

ञ) जंगलों का संरक्षण करे।

नदियों में कपड़े धोने जैसा कर्म ना करे। हमें जन जागरण करने की आवश्यकता है। मानव अपनी चेतना का विकास आस–पास की भूमि से करता था। उसने विश्व की आत्मा व मानव की आत्मा के बीच के संबंध को महसूस किया। मानव और प्रकृति के बीच इस तारतम्यता ने पर्यावरण को आत्मार्पित करने की शांतिपूर्ण व अपेक्षाकृत अच्छे परिस्थितियों अच्चे तरीकों को जन्म दिया। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है यह उस संपूर्ण शक्तियों परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है, जो मानव को परावृत करती है तथा उसके क्रियाकलापों को अनुशासित करती है। मानव संपूर्ण जीव–जगत का केंद्र–बिंदु है। आनुवांशिकता उसकी अंतर्निहित क्षमताओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित करती है, जबकि पर्यावरण इन क्षमताओं को भू–स्तर पर लाता है। इस प्रकार मानव तथा अन्य जीव पृथ्वी तथा पर्यावरण के अविभाज्य अंग हैं और पृथ्वी को एक अविभाज्य पूर्ण इकाई का स्वरूप प्रदान करते हैं।

संस्थान समाचार

संस्थान, भारत सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन करते हुये राजभाषा के प्रगामी प्रयोग के लिये प्रतिबद्ध है तथा नियमित अंतराल पर राजभाषा क्रियान्वयन के प्रगति विवरण राजभाषा विभाग, विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी मंत्रालय को भेज रहा है। राजभाषा कार्यान्वयन समिति संस्थान में राजभाषा प्रयोग की नियमित अंतराल पर समीक्षा करती है तथा उत्तरोत्तर प्रयोग में अभिवृद्धि के लिये प्रयासरत् रहती है।

स्वतंत्रता दिवस 2022

संस्थान द्वारा इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस समारोह अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। संस्थान के निदेशक डॉ. कालाचाँद सांई ने ध्वजारोहण कर अपने वक्तव्य में स्वतंत्रता के महत्व पर प्रकाश डालते हुयें स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हर आंदोलनकारी को श्रृद्धा सुमन अर्पित किये। अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा कि अपने कार्यों के प्रति ईमानदारी तथा पूर्ण समर्पण हमें अवसर देता है कि हम अपने शोध के जरिये राष्ट्र की सेवा कर सकें। हमें अपने शोध को समाज हित में मोड़ना होगा। स्वतंत्रता दिवस पर कला प्रतियोगिता व विभिन्न खेल प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया। संस्थान के सभी कर्मचारियों ने विभिन्न वर्गों की प्रतियोगिताओं में रुचि अनुसार उत्साहपूर्वक प्रतिभाग किया।

गणतंत्र दिवस समारोह 2023

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी गणतंत्र दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। डॉ. कालाचांद सांई, निदेशक महोदय द्वारा ध्वजारोहण फहराया गया। उन्होंने अपने अपने वक्तव्य में राष्ट्रीय विकास हेतु अपनी अपनी जिम्मेदारी का ईमानदारी से निर्वहन करने पर जोर दिया। संस्थान के सभी कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक गणतंत्र दिवस मनाया।

हिन्दी पखवाड़ा 2022

राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में संस्थान में दि. 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2022 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। इस वर्ष संस्थान में हिंदी पखवाड़े का शुभारंभ माननीय गृह मंत्री श्री अमित शाह द्वारा सूरत, गुजरात में हिंदी दिवस कार्यक्रम के उद्घाटन के साथ हुआ। संस्थान में हिंदी पखवाड़े की सभी गतिविधियाँ 16 सितंबर 2022 से प्रारंभ की गई। पखवाड़ा कार्यक्रम में विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई।

पखवाड़ा कार्यक्रम में संस्थान से बाहर अन्य कार्यक्षेत्रों के सम्मानित व्यक्तित्वों की एक व्याख्यान श्रृँखला आयोजित की गयी। इस श्रृंखला में पहला व्याख्यान प्रोफेसर सुशील उपाध्याय, प्रधानाध्यापक, चमन लाल डिग्री कॉलेज, लंढौरा, हरिद्वार द्वारा दिया गया। उन्होंने अपने व्याख्यान में भाषा में आने वाले नए शब्दों और उसके प्रयोग के संदर्भ में चुनौतियों के बारे में बताया। श्रृँखला का दूसरा व्याख्यान गैर सरकारी संगठन सोशल डेवलपमेंट फॉर कम्युनिटीज के प्रमुख श्री अनूप नौटियाल द्वारा उत्तराखंड के लिए हिमालयन चार्टर विषय पर दिया गया, जिसमें उन्होंने उत्तराखंड के प्रगामी एवं सतत् विकास के लिए मूलभूत आवश्यकताओं पर ज़ोर दिया। श्रृँखला के शेष दो व्याख्यान देहरादून के सुप्रसिद्ध मैक्स हॉस्पिटल के जाने माने चिकित्सकों द्वारा दिया गया। हृदय रोग विशेषज्ञ डॉक्टर प्रीति शर्मा तथा मनोवैज्ञानिक डॉ सलोनी गुप्ता ने अपने अपने व्याख्यान में एक स्वस्थ हृदय तथा स्वयं के अच्छे स्वास्थय के लिए क्या क्या किया जाना चाहिए के बारे में विस्तार से बताया।

पखवाड़ा कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण दो वर्गों में आयोजित फोटोग्राफी प्रतियोगिता थी। प्रथम वर्ग में अपने–अपने भू वैज्ञानिक क्षेत्रीय भ्रमण के दौरान स्वयं द्वारा खींचे गए फोटोग्राफों के मध्य थी।इस वर्ग के विजेता डॉ. विनीत कुमार रहे। द्वितीय वर्ग में भूविज्ञान विषय से इतर फोटोग्राफ्स प्रदर्शित किये जाने थे। इस वर्ग के विजेता संस्थान के फोटोग्राफर श्री अमित भंडारी रहे। पखवाड़े में संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा भी व्याख्यान दिए गए। इनमें डॉ कपेशा लोखो, डॉ गौतम रावत, डॉ स्वप्नमिता वैदेश्वरन, डॉक्टर सोमदत्त व श्री तेजेन्द्र आहूजा के व्याख्यान प्रमुख रहे। संस्थान के कर्मचारियों के लिए आयोजित निबंध प्रतियोगिता में भी सभी ने उत्साह पूर्वक भाग लिया। संस्थान में आयोजित निबंध तथा वाद विवाद प्रतियोगिता में देहरादून शहर के विभिन्न स्कूलों के विद्यार्थियों ने उत्साह पूर्वक भाग लिया।

हिन्दी पखवाडा समापन समारोह में मुख्य अतिथि के रुप में प्रोफेसर अनीता रावत, निदेशक, उत्तराखंड साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च सेंटर नें कार्यक्रम को संबोधित किया। अपने उद्बोधन में उन्होनें मानव समाज के विकास मे मातृभाषा की भूमिका के विषय पर चर्चा की। हिन्दी पखवाडा समारोह का समापन मुख्य अतिथि द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरुस्कार वितरण कर किया गया।

इस वर्ष संस्थान की गृह पत्रिका अश्मिका का अठाईसवां अंक प्रकाशित हुआ। जिसमें संस्थान से तथा विभिन्न संस्थानों से लेखकों ने ज्ञानवर्धक वैज्ञानिक लेखों को सरल सहज भाषा में लिख कर अपना योगदान दिया। अश्मिका का यह अंक पाठकों द्वारा काफी सराहा गया।

स्वतंत्रता दिवस – 2022

गणतंत्र दिवस – 2023

हिन्दी पखवाड़ा – 2022

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY

(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	
Volume 3*	(1973)	70.00	
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology

(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 1 (1990) to Volume 6 (1995)*

HIMALAYAN GEOLOGY

(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 17 (1996)*

HIMALAYAN GEOLOGY

Revised Annual Subscription (w.e.f. 1997):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	750.00	50.00
Individual (incl. postage)	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 26 (2005)*

Volume 27 (2006) to Volume 32 (2011)*

Volume 33 (2012)

Volume 34 (2013) to Volume 36 (2016)*

Volume 37 (2015) to Volume 38 (2017)

Volume 39 (2018) to Volume 43 (2022)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	2000.00	150.00
Individual (incl. postage)	600.00	50.00

Volume 44 (2023)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	3000.00	225.00
Individual (incl. postage)	1000.00	100.00

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu -Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ. 2, 1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015)	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda, 2015)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Lithostratigraphy, Biostratigraphy and Palaeogeography of the Eastern Karakoram, India (by K.P. Juyal, 2018)	Rs. 600.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan Geology' after 1996.

*** Out of Stock**

Life Time Subscription of Himalayan Geology (Individuals only)

Fee for Print copy : India: 7500.00 Abroad: US$ 750.00

Fee for Soft copy : India: 4000.00 Abroad: US$ 250.00

Trade Discount (In India only)

1-10 copies: 10%, 11-15 copies: 15% and >15 copies: 20%

Offer (for a limited period): A free set of old print volumes (1971 to 2012, subject to availability) of 'Himalayan Geology' will be provided to the new registered Life Time Subscribers (Postage to be borne by the subscriber).

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in